

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_182877

UNIVERSAL
LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81.092/B81B Accession No. G.H. 1420

Author भूषण-ग्रंथान्तरी

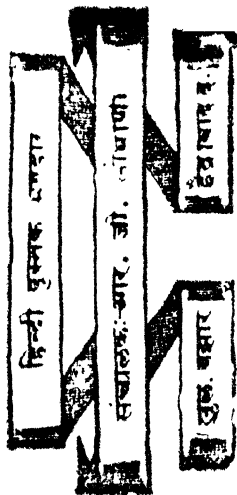
Title भूषण-ग्रंथान्तरी / 1930

This book should be returned on or before the date
last marked below. /

भूषण-ग्रंथावली

संपादक
ब्रजरत्नदास, बी० ए० (प्रयाग)
एल-एल० बी० (काशी)

प्रकाशक
रामनारायण लाल
पब्लिशर और बुकसेलर
इलाहाबाद



विषय-सूची

	पद-संख्या
(अ०) भूमिका	१—१२८
१—कवि-परिचय	४—१७
२—भूषण-विषयक-दंतकथाएँ	१७—२२
३—आश्रय-दातागण	२२—५६
४—रचनाएँ	५६—६६
५—आलोचना	६६—१२६
६—उपसंहार	१२६—१२८
(आ) शिवराज-भूषण	१—७५
(इ) शिवावावनी	७६—८८
(ई) कुवशाल दशक	८९—११
(उ) स्फुट पद	१२—१०९
(ऊ) परिशिष्ट	१—१२६
(क) टिप्पणी	१—४०
(ख) पदों का अक्षरानुक्रम	४१—६२
(ग) अलंकारों का व्याख्यायुक्त अक्षरानुक्रम	६३—८७
(घ) छंदों की विवेचना	८९—११
(ङ) कालचक्र (सन् १६२७—१७)	१३—१९
(च) ऐतिहासिक पुरुषों तथा स्थानों का परिचय	१०१—१२६



संपादन-सामग्री

इस ग्रंथावली के संकलन तथा संपादन में जिन पुस्तकों से सहायता ली गई है उनकी सूची नीचे दी जाती है और उनके संपादकों तथा लेखकों के प्रति इस ग्रंथ का संपादक अपना हार्दिक धन्यवाद प्रकट करता है।

१—भूषण ग्रंथावली—पं० श्यामबिहारी मिश्र।

२—भूषण ग्रंथावली—पं० रामनरेश त्रिपाठी।

३—प्रभा।

४—माधुरी व० ४ खं० २ सं० ४, व० ३ खं० १ सं० २, व० २ खं० २ सं० ६।

५—समालोचक भा० १, २, ३, ४।

६—मनोरमा व० ३ खं० १-२, व० ४ खं० १।

७—किनकेड पारसनीस कृत 'मराठों का इतिहास' भाग १-३।

८—शिवाजी, प्रा० यदुनाथ सरकार-कृत नया संस्करण।

९—अौरंगज़ेब " भा० १-३।

१०—इलिअट डाउसन कृत 'हिस्टरी ऑफ इंडिया एज़ टोल्ड बाई इट्स ऑन हिस्टोरियन्स' जि० ६-८।

११—मृतानेणसी की ख्यात।

१२—काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका भा० ६ सं० १९८२।

१३—टॉड्स राजस्थान भा० २।

१४—मआसिरुल् उमरा-हिन्दी अनुवाद।

१५—मआसिरे-आलमगीरी।

- १६—भारत के प्राचीन राजवंश भा० ३ ।
१७—इम्पीरियल गजेटियर जि० १-१४ ।
१८—ऐतिहासिक एटलस, चार्ल्स जोप्पेन ।
१९—मतिराम ग्रंथावली सं० पं० कृष्णविहारी मिश्र बी० ए० एल
एल० बी०, सं० माधुरी वा समालोचक ।
२०—हिन्दी-साहित्य का इतिहास प्रो० पं० रामचन्द्र शुक्ल ।
२१—भूषण-ग्रंथावली सं० पं० वेदव्रत शास्त्री ।
२२—सम्पूर्ण-भूषण सं० पं० रामचंद्र गोविंद काटे ।
-



छत्रपति शिवाजी

भूमिका

हिन्दी-साहित्य का इतिहास देखने से यह ज्ञात हो जाता है कि उस पर राजनैतिक, सामाजिक, धार्मिक तथा सांप्रदायिक परिस्थितियों का कितना प्रभाव पड़ा है। यद्यपि हिंदी भाषा कहीं अधिक प्राचीन है, पर हिन्दी-साहित्य का आरंभ विक्रमाब्द ग्यारहवीं शताब्दि से माना जाता है। यह समय भारत के इतिहास में वह था जब कि एक ओर इस देश पर मुसलमानों के आक्रमण पर आक्रमण हो रहे थे और दूसरी ओर भारतीय नरेशगण उन्हें रोकने तथा अपने अपने देश को अन्यदेशीय शत्रुओं से पददलित न होने देने के प्रयत्नों में सतत लगे हुये थे। यही कारण है कि इस काल के कविगण ऐसे ही भारतीय अदर्श वीरों को सामने रखकर अपनी कवित्व-शक्ति दिखला गये हैं। चित्तौड़ के रावल खुस्माण ने चौबीस युद्ध कर म्लेच्छ आक्रमणकारियों को परास्त कर भगा दिया था, जिस पर खुस्माण रासो रचा गया था। भारत के अंतिम सम्राट् प्रातःस्मरणीय महाराज पृथ्वीराज की वीरता, युद्ध-नैपुण्य, साहस, शील आदि के वर्णन में पृथ्वीराज रासो सा बृहत् ग्रंथ लिखा गया है। विजयपाल रासो, बीसलदेव रासो आदि भी इसी प्रकार के अनेक ग्रंथ इस काल में प्रणीत हुये थे। तीन शताब्दियों के भीतर भीतर मुसलमानों का आधिपत्य भारत भर में अच्छी प्रकार जम गया तथा वे अन्यधर्मीय विजेतागण भी इस देश में दूर दूर तक आबसे जिससे यहाँ की राजनैतिक तथा सामाजिक

परिस्थिति बहुत कुछ बदल गई। अब राजाओं तथा सम्राटों से नवाब, सुलतान तथा बादशाह बड़े समझे जाने लगे। देश के प्रबंध तथा रक्षा का भार प्रायः विदेशियों के हाथ में चला गया और यहाँ के छोटे छोटे बचे खुचे राजे इन बादशाहों के मांडलिक और सामंत बनकर रहने ही में अपना मान समझने लगे थे। साथ ही एक बिलकुल नये धर्म के आजाने से सांप्रदायिक मत मतांतर के सिवा एक नया धार्मिक द्वन्द्व भी मच गया था। विजेतागण यहाँ के देगीय धर्मों को शस्त्र के जोर पर उखाड़कर अपना धर्म फैलाना चाहते थे जो भारतीय रुचि के अनुकूल न था। इस कारण 'निर्धन के धन राम' तथा 'निबल के बल श्याम' के अनुसार यहाँ वाले अपनी सांख्यना के लिए ईश्वर की शक्ति तथा दया के भिखारी होने लगे। देव-मंदिरों के गिराये जाने तथा देवमूर्तियों के खंडन से उनके हृदय निराकार उपासना की ओर भी झुक पड़े। हिंदू तथा मुसलमानों के सहवास से राम रहीम की एकता दिखलाना भी आवश्यक हो चला। इसलिये प्रायः सत्रहवीं शताब्दि विक्रमाब्द तक हिंदी कविता देवी मीरा बाई बनकर भजनानन्द ही में मग्न रही। इसके अनंतर सहज सुलभ मानवी प्रकृति के अनुसार कवितादेवी कामिनी रूप के शृंगार में भी लग गई और यह इसी कार्य में लगी हुई थी कि देश में कुछ विशेष राजनैतिक विषय होने के कारण इन्हें पुनः चंडिका का रूप भी धारण करना पड़ा था।

यह वह काल था जब कई विशिष्ट कारणों से मुसलमानों के हाथ से भारतीय आधिपत्य निकलकर पुनः इसी देश के राजाओं के हाथ में आ रहा था और 'अब तक जानत है बड़े होत पातसाह अब पातसाहन से राजा बड़े होत हैं'। दक्षिण में मराठों का उत्कर्ष-सूर्य शिवाजी के रूप में पश्चिमी घाटों पर

उदय हो चुका था। बूंदेलखंड में महाराज छत्रसाल स्वातंत्र्यसुधा-
कर को उदीयमान कर प्रत्येक बूंदेले वीर के मृत हृदय में उत्साह
भर रहे थे। राजस्थान में महाराणा राजसिंह राठौड़ वीर
दुर्गादास आदि की सहायता कर राजपूतों की सुषुप्ता राज्यलक्ष्मी
को अरावली पर्वत के प्रत्येक शृंग से रणभेरियाँ बजाकर जगा
रहे थे। उसी काल के इन्हीं प्रचंड तथा यशस्वी वीरों के रक्त
का फल है कि आज भी भारत के मानचित्र में इतने राजवंशों के
राज्य अंकित हैं। अस्तु, इसी काल का प्रभाव था कि शृंगारिक
काव्यों तथा रीति ग्रंथों के बीच में वीरगाथा काल के से दो
चार ग्रंथ दिखला जाते हैं। शिवराजभूषण, छत्रप्रकाश,
राजविलास आदि रचनाएँ अपने समय की परिस्थिति की
द्योतिका हैं। यदि ये वीरगाथा न हुये होते तो वीर रस के ये
कविगाथा भी शृंगारिक कविता करते और स्यात् अपनी उड़ड़ता
का परिचय उसी में दे डालते।

भूषण का समय हिंदी साहित्य के इतिहास के रीति काल
के अंतर्गत है और इनका प्राप्य प्रधान ग्रंथ भी अलंकार ग्रंथ
है, पर ऊपर जैसा कहा जा चुका है उसके उदाहरण शृंगार रस
पूर्ण न होकर आदर्श के अनुरूप वीर रस से ओत प्रोत हैं।
भूषण स्वयं कहते हैं कि—

भूषण यों कलि के कविराजन राजन के गुण पाय नसानी ।
पुन्य चरित्र सिवा सरजै घर न्हाय पवित्र भई पुनि बानी ॥

वास्तव में इन कविराजों पर अपने समय के आश्रय देने
वाले राजों का प्रभाव पड़ता ही था और ये उन्हें प्रसन्न करना
ही चाहते थे, इसीलिये उन्हींके रुचि के अनुकूल कविता करते
थे। भूषण जी ने एक प्रकार वैसा ही किया है और उसी से
उन्हें बहुत संपत्ति भी प्राप्त हुई थी, पर जिसे वह प्रसन्न करना

चाहते थे वह भारत के सच्चे मुखाञ्ज्वलकारी सुपुत्र थे । जिन्हें प्रशंसा अवश्य प्रिय थी पर चाटुकारी नहीं । सच्ची स्तुति से तो ईश्वर भी प्रसन्न होता है । ऐसे ही सुकवि का अब परिचय दिया जाता है जो प्रस्तुत साधनों से उपलब्ध हो सका है ।

१-कवि-परिचय

शिवराजभूषण के ऋंद २६ तथा २७ में कवि के वंश तथा जन्मस्थान का परिचय इस प्रकार दिया है कि ' भूषण जी रत्नाकर के पुत्र थे तथा काश्यपगोत्रीय त्रिपाठी कान्यकुब्ज ब्राह्मण थे । इनका जन्मस्थान यमुना नदी के तटस्थ त्रिविक्रमपुर ग्राम था जहाँ इनके पिता सदा से रहते थे । इसी स्थान में राजा बीरबल से सुकवि हुए और विश्वेश्वर के समान जहाँ बिहारीश्वर का मन्दिर है । ' यह त्रिविक्रमपुर घाटमपुर तहसील के एक मौज़ा अकबरपुर-बीरबल के पास है, जो यमुना नदी के बाएँ किनारे पर कानपुर से ३१ मील दक्षिण है । यह कानपुर ज़िले ही के अंतर्गत है । कानपुर से हमीरपुर जाने वाली सड़क पर घाटमपुर से लगभग ६ मील पर त्रिविक्रमपुर अर्थात् वर्तमान तिकवाँपुर गाँव बसा है । यह अकबरपुर-बीरबल भूषण कवि के अनुसार सम्राट अकबर के अंतरंग मित्र राजा बीरबल का जन्म-स्थान था और उन्होंने अपने आश्रयदाता तथा अपने नाम पर इस मौज़े का नया नामकरण किया है । इसके पहिले इसका क्या नाम था इसका कुछ पता नहीं चला । इस मौज़े में राधाकृष्ण का एक प्राचीन मन्दिर भी वर्तमान है जिसे ही भूषण ने बिहारीश्वर लिखा है ।*

* आर्कियोलॉजिकल सर्वे ऑफ इण्डिया द्वारा प्रकाशित ' पारिचमोत्तर

इस प्रकार ऐसे स्थान में रत्नाकर जी के पुत्ररत्न होकर भूषण जी ने अपना बाल्यकाल समाप्त किया तथा पठन पाठन से निवृत्त होकर यह राज्याश्रय की खोज में बाहर निकले। यह पहिले पहिल पास ही के एक राजा के पास गए, जो शिवराज-भूषण के पद २८ के अनुसार बड़े ही साहसी तथा शीलवान थे। इनका नाम हृदयराम तथा रुद्रराम दोनों हो सकता है; पर इन दोनों नाम में पिता पुत्र का सम्बन्ध अवश्य है अर्थात् हृदयराम-सुत रुद्र या हृदयराम, सुत रुद्र। यह सोलंकी क्षत्रिय थे तथा चित्रकूटपति इनकी पदवी थी। भूषण के इन्हीं आश्रयदाता ने इन्हें इनकी कवित्व-शक्ति पर प्रसन्न होकर 'भूषण' की पदवी दी, जो इतनी प्रसिद्ध हुई कि उसने इनके नाम का निशान तक न छोड़ा। उक्त ग्रन्थ के पद २५ से ऐसा स्पष्ट ज्ञात होता है कि इस प्रकार भूषण की पदवी प्राप्त करने के अनन्तर तथा पद २४ के अनुसार शिवाजी के रायगढ़ राजधानी बनाने के उपरान्त भूषण कवि भी वहाँ शिवा जी के दरबार में अन्य गुणियों के साथ पहुँचे। सन् १६६२ ई० में शाह जी की सम्मति पर शिवाजी ने रैरी शृंग पर रायगढ़ दुर्ग बनने की आज्ञा दी थी और उसके पूर्ण होने पर उसमें कोष आदि भेजे थे। सन् १६६४ ई० में शाह जी की मृत्यु होने पर इन्होंने अहमदनगर द्वारा प्राप्त पैतृक राजा की उपाधि धारण कर रायगढ़ में एकसाल खाली थी। इससे यह कहा जा सकता है कि सन् १६६४ ई० के बाद ही भूषण शिवाजी के दरबार में गए। परिशिष्ट ड कालचक्र देखने से भी यह ज्ञात हो जाएगा कि उस समय तक शिवाजी की ख्याति भारतवर्ष भर में इतनी फैल गई थी तथा उनका स्व-अर्जित राज्य भी इतना

प्रांत और अवध के प्राचीन इमारत और लेख', सम्पादक डा० फुरेर भा०

विस्तृत और समृद्धिशाली हो गया था कि दूर दूर से गुणी लोग उनका यश सुन कर आश्रय लेने आने लगे थे ।

शिवाजी के दरबार में प्रवेश हो जाने पर और वहाँ से धन वृत्ति आदि मिलने पर अपने ऐसे उदार आश्रयदाता की प्रशंसा में भूषण ने कुछ रचना करने का विचार किया । उन्हीं दिनों—

शिवचरित्र लखि यों भयो कवि भूषन के चित्त ।

भांति भांति भूषननि सों भूषित करौं कवित्त ॥

शिवा जी के चरित्र, स्वभाव आदि का अच्छी प्रकार निरीक्षण कर कविराज ने शिवराजभूषण नामक अलङ्कार ग्रंथ की रचना की और उदाहरणों में अपने उस वीररसावतार आश्रयदाता के चरित्र के अनुरूप ही वीररस पूर्ण गुणानुवाद किया जिसने—

बीजापुर गोलकुण्डा जीत्यो लरिकाई ही में

ज्वानी आप जीत्यो दिलीपति पातसाह को ।

यह ग्रंथ ज्येष्ठ कृष्ण १३ सं० १७३० वि० रविवार को समाप्त हुआ और तब भूषण ने इसे अपने आश्रयदाता को भेंट कर इसके उपलक्ष में बहुत कुछ पुरस्कार प्राप्त किया होगा । इस प्रकार कई वर्ष तक शिवाजी के राजदरबार में रहने तथा एक ग्रंथ पूर्ण कर प्रचुर पुरस्कार पाने पर यह अपने घर अवश्य गए होंगे । यद्यपि सं० १७३१ वि० का शिवाजी का राज्याभिषेकोत्सव अत्यन्त महत्वपूर्ण घटना थी; पर इतने ही समय के बीच भूषण का घर से लौट कर आ जाना सम्भव नहीं था । ग्रंथ-समाप्ति तथा अभिषेकोत्सव के बीच केवल एक वर्ष का समय मिलता है जिसमें बहुत सा समय आते जाते ही व्यतीत हो जाता और

इसी से भूषण इस उत्सव में सम्मिलित नहीं हो सके। भूषण की प्राप्त कविता में सं० १७३० वि० तक की घटनाओं का जितनी प्रचुरता से वर्णन मिलता है उससे कहीं कम, नहीं के समान, बाद की घटनाओं का उल्लेख है। इस अभिषेकोत्सव के विषय में तो कुछ भी नहीं कहा गया है। केवल शिवा बावनी के पद सं० ३२ में कहते हैं कि—

राजन के राज सब साहन के सिरताज,
आज शिवराज पातसाही चित धरी है।
बलख बुखारे कसमीर लों परी पुकार,
धाम धाम धूम धाम रूम साम परी है ॥

सं० १७३७ वि० में शिवाजी की मृत्यु होने पर शम्भा जी गद्दी पर बैठे। अपने राजत्व के आरम्भ में चार पाँच वर्ष तक इन्होंने युद्ध-प्रियता दिखलाई, जो क्रमशः मन्द पड़ते पड़ते सं० १७४३ वि० में विषयवासना के अंधकार में लुप्त हो गई। शम्भा जी के विषय में जो कवित्त कहा गया है, उसका मुख्य अंश यों है—

भूषण जू खेलत सितारे में सिकार शम्भा,
शिवा को सुघन जाते दुवन सँचै नहीं।
बाजी सब बाज से चपेटैं चंग चहूँ ओर,
तीतर तुरुक दिल्ली भीतर बचै नहीं ॥

इससे यह स्पष्टतः नहीं कहा जा सकता कि भूषण ने शम्भा जी के दरबार में पहुँच कर यह पद उनकी प्रशंसा में बनाया हो। शम्भा जी के दरबार में कलश कवि की प्रधानता थी, जिसे स्यात् भूषणजी से उदगडप्रकृति के कवि सहन न कर सके हों और इसलिए इस दरबार में न गए हों। सं० १७४६ वि० में शम्भा जी मारे भी

गए और इसी कारण इनके बुर्हानपुर, भड़ोच आदि लूटने तथा पुर्तगीजों पर प्राप्त विजयों का कुछ भी वर्णन नहीं किया गया है। शम्भा जी के अल्पवयस्क पुत्र शिवाजी द्वितीय सं० १७४६ वि० में गद्दी पर बैठे और उसी वर्ष के अंत में मुगलों के हाथ कैद हुए। औरंगजेब ने इनका नाम बदल कर साहू रखा। इनके विषय में कहे गए दोनों पद इसके बाद ही के हो सकते हैं क्योंकि दोनों में साहू जी नाम दिया है। इनके विषय में कहे गए पदों के कुछ अंश इस प्रकार हैं—

साहू जी की साहिबी दिखात कछु होनहार,
जाके रजपूत भरे जोम बमकत हैं।
दक्खिन के आमिल भो सामिल ही चहुँ ओर,
चम्बल के ओर पार नेजा चमकत हैं ॥
रूम खूँदि डारै खुरासान खूँदि मारै खाक,
खादर लौं भारै ऐसी साहू की बहार है।

ऐसी प्रशंसा कारागारस्थित साहू की कोई भी कवि नहीं कर सकता। उस हालत में किसी की साहिबी को होनहार कहना प्रशंसा नहीं प्रत्युत अभिशाप कहलायगा। इससे यही निश्चय है कि सं० १७६४ वि० में कारागार से कूटने और सितारा की गद्दी पर बैठने के बाद ये दोनों पद बने होंगे। साथ ही यह भी निश्चय पूर्वक कहा जा सकता है कि होनहार शब्द उसकी रचना का साहू के राजत्वकाल के बिलकुल आरम्भ में होना बतला रहा है। इन विचारों से यह स्पष्ट है कि भूषण द्वितीय बार सं० १७६४-५ वि० में दक्षिण गए थे।

एक पद और है जिसमें 'साहू को सराहों कै सराहों छत्रसाल को' लिखा गया है। यह पद भी पूर्वोक्त विचारों से सं० १७६४ वि०

के बाद ही रचित हो सकता है। इसका कुछ लोग यों पाठ भेद मानते हैं—‘शिवा को सराहों कै सराहों कुत्रसाल को’, पर यह ठीक नहीं जँचता। शिवाजी की मृत्यु के समय तत्कालीन इतिहास में कुत्रसाल का स्थान क्या था ? उस समय तक यह एक साधारण विद्रोही राजा के रूप में मिलते हैं, जिन पर सं० १७३७ वि० में तहब्बर खाँ आदि सर्दारों को औरंगजेब ने भेजना उचित समझा था। इसके पहिले वे उसी देश के छोटे मोटे ज़मींदार आदि को परास्त कर करद बनाने में लगे हुए थे। इसलिए दूसरा पाठ तो शुद्ध नहीं है, पहिला पाठ ही ठीक है। अब देखना है कि सं० १७६४ वि० में इन्हीं महाराज कुत्रसाल का भारत-साम्राज्य में क्या स्थान था। उस समय इनकी अवस्था कृपण वर्ष की थी और इन्होंने मुगल साम्राज्य के बड़े बड़े अनेक सर्दारों को परास्त कर अपना राज्य दृढ़ कर लिया था। इसी वर्ष बहादुर शाह ने भी इनका इनके अर्जित राज्य की सनद दे दी थी। तात्पर्य यह कि उस समय महाराज कुत्रसाल इस योग्य हो गए थे कि मराठा साम्राज्य के अधिपति साहू जी से उनकी समुचित तुलना की जा सकती थी। इस तर्कावली से यह सिद्ध हो जाता है कि भूषण जा सं० १७६४-६५ वि० में साहू के दरबार में गए थे और वहाँ से अच्छी प्रकार पुरस्कृत होकर यह स्वदेश लौटते हुए महाराज कुत्रसाल के दरबार में भी गए होंगे। यहीं इनका अभूतपूर्व आदर हुआ था।

किवदती है कि भूषण जी की विदाई करते समय महाराज कुत्रसाल ने उनकी पालकी में स्वयं कंधा लगा दिया था, जिससे कविराज जी बड़े प्रसन्न हुए और उसी समय एक दशकर च डाला। इसके समर्थन में कुछ लोग विचित्र विचित्र तर्क करते हैं। एक तर्क यों है कि ऐसा आदर करना विशेषतः युवकों ही के योग्य है, जो समय पर कोई विचार उठते ही उसे चट

कर डालते हैं, इस लिए भूषण छत्रसाल के दरबार में शिवराज-भूषण की समाप्ति के बाद ही देश लौटने पर गए थे। वे यह नहीं सोचते कि छत्रसाल दशक की ऐतिहासिक घटनाएँ घटित होने के पहले ही उसका उल्लेख कैसे हो गया। माहू जी प्रशंसायोग्य कव्य हुए, यह भी आवश्यक विचार है। अस्तु, इस किंवदंती में जा कुछ सार हो, तात्पर्य इतना ही है कि भूषण जी का महाराज छत्रसाल ने अवश्य ही बहुत कुछ आदर किया होगा। वे स्वयं कवि थे और कवियों के आश्रयदाता थे। भूषण जी महाराज शिवाजी के राजकवि थे और उनकी कविता की चारों ओर धूम थी। इधर छत्रसाल भी भूषण के मनानुकूल चरितनायक थे। पाँच सवार तथा कुछ पैदल लेकर मुगल सम्राज्य के हृदय में एक स्वतंत्र राज्य का संस्थापन करने वाला वीर असाधारण पुरुष था। यदि भूषण ने ऐसे सर्वमान्य भारतमुखोज्ज्वलकारी वीरश्रेष्ठ की प्रशंसा में दश बारह पद बना दिए तो उसके लिए इस दंतकथा मात्र को कारण मानना निर्मूल है।

खाए मलिच्छन के छोकरा पै तबौ डोकरा को डकार न आई।

एक छंद का अन्तिम पद है जिसमें भूषण उपनाम नहीं आया है। इस पद को लेकर एक सज्जन कहते हैं कि इसे भूषण ने, जो उस समय 'छोकरे' थे, छत्रसाल के लिए, जो उस समय प्रायः चौहत्तर वर्ष के डोकरे थे, यह छंद बनाया था; पर यह बिल्कुल भ्रांत कल्पना है।

अब यह देखना है कि सं० १७३१ वि० और सं० १७६४ वि० के बीच चौतीस वर्ष तक भूषण घर ही पर रहे या अन्य राजाओं के यहाँ जाते आते रहते थे। रुद्रशाह ने तो इन्हें उस समय भूषण की पदवी दी थी जब इन्होंने कविता बनाना आरंभ किया था और इसलिये उनकी प्रशंसा में एक दोहा और एक कवित्त रचा गया था।

शिवाजी तथा उनके पुत्र और पौत्र का ऊपर उल्लेख हो चुका है। छत्रसाल जी की दरबारदारी का भी वर्णन हो जाने पर छत्रसात राजे बच जाते हैं, जिनकी प्रशंसा में भूषण के एक-एक या दो-दो छंद मिलते हैं। एक आश्रय सज्जन ने इनके चार पाँच अन्य आश्रयदाताओं को भी खोज निकाला है। महाकवि मुरारि के अनर्घ्यराघव नाटक में एक स्थान पर कहा गया है कि —

स्थितिः कवीनामिव कुंजराणां स्वमंदिरे वा नृपमंदिरे वा ।
गृहे गृहे किं मशका इवैते भवंति भूपालविभूषितांगाः ॥

इस श्लोक में कवि तथा कुंजर की तुलना की गई है कि वे दोनों ही राजाओं की सभाओं (गजशाला) में या अपने ही गृहों (जंगल) में रहते हैं और मशकों के समान घर घर नहीं घूमते फिरते। महाकवि भूषण महागजेंद्र के समान थे, जिन्हें हर एक साधारण राजा बाबू न प्रसन्न ही कर सकता था और न इन्हें ही भारत के मुगल सम्राट औरंगजेब से प्रतापी शत्रु का सफलता-पूर्वक सामना करने वाले प्रतिद्वंद्वी छत्रपति महाराज शिवाजी तथा उनके वंशजों का आश्रय प्राप्त करने पर अन्य छोटे छोटे राजाओं का सभा-सदी करना शोभा देता था। पंडितराज जगन्नाथ ने सत्य ही कहा है कि—

दिल्लीश्वरो वा जगदीश्वरो वा मनोरथान् पूरयितुं समर्थः ।
अन्ये नृपाः यद्दत्तीहि काले शाकाय वा स्यात् लवणाय वा स्यात् ॥

उस पर किंवदंती के अनुसार शिवाजी से भूषण जी को इतना अधिक धन प्राप्त हुआ था कि उन्होंने एक साथ एक लाख रुपये का लवण अपने गृह पर भेजा था। भूषणजी ने अपनी कविता में शिवाजी को बराबर जगदीश्वर का अवतार माना है। ऐसी अवस्था में भूषण जी का एक आश्रय दर्जन छोटे छोटे रजवाड़ों तथा

बबुआनों में जाना और वहाँ भी उन लोगों की एक एक दो दो छंद में कुछ प्रशंसा कर उन से लाख दो लाख रुपये न लेकर कुछ व्यंग्य-बाण छोड़ कर लौट आना उनके उपयुक्त नहीं समझ पड़ता । यदि कहा जाय कि उनमें धनतृष्णा अधिक थी तो 'कमायूँ नर नाह' के यहाँ कुछ रुपये के पुरस्कार का त्याग देना कोरी दंत-कथा मात्र रह जाती है ।

भूषण के जिन आश्रयदाताओं का नाम लिया जाता है उनमें मुख्य मुख्य का ऊपर उल्लेख हो चुका है । बचे हुआ मैं प्रायः आधे अज्ञात हैं और जो ज्ञात हैं उनके लिए भी जो एक दो छंद कहें गये हैं उनमें किसी में भी ऐसी ऐतिहासिक घटना का उल्लेख नहीं है जिससे उन छंदों के निर्माण का समय निश्चित किया जा सके । अस्तु, यही निश्चयपूर्वक कहा जा सकता है कि सं० १७३१ वि० तथा सं० १७६४ वि० के बीच का समय, जिस काल में मराठा राज्य पर औरंगजेब के दक्षिण में रहने से विशेष आपत्ति आपड़ी थी और उनके राज्य के दक्षिणी सीमांत के जिंजी आदि दुर्ग तक मुगलों के हाथ में चले गए थे, भूषण जी उत्तरी भारत में पर्यटन करते रहे हों और अपने भाई बंधु आदि के आग्रह से उनके आश्रयदाताओं के दरबार में भी गए हों । वे सं० १७६४ वि० के बाद ही कहते भी हैं कि 'और राव राजा एक मन में न ल्याऊँ अब साहू को सराहों कि सराहों छत्रसाल को ।' अर्थात् उस समय तक जिन दरबारों में वे जा चुके थे उनसे वे इतने असंतुष्ट थे कि अब वे ऐसे स्थानों को मन में भी स्थान नहीं देना चाहते थे । इस कथन के बाद उनका कहीं अन्यत्र जाना और वह भी साधारण ज़मींदारों के यहाँ जाना किसी बहुत ही असाधारण कारण ही से हो सकता था, जो अभी तक नहीं ज्ञात हुआ है ।

इस प्रकार महाकवि भूषण की जीवनी की पर्यालोचना

करने पर मेरा अनुमान है कि इनका जन्मकाल सं० १७०० वि० के लगभग हुआ होगा। बीस बाईस वर्ष की अवस्था में यह आश्रय की खांज में घर से बाहर निकले और 'कुल सुलंक चितकूटपति हृदय राम सुत रुद्र' के यहाँ कुछ दिन ठहर कर 'भूषण' पदवी प्राप्त की। इसके अनंतर शिवाजी की उदारता तथा वीरता की ख्याति सुन कर सं० १७२४ वि० के लगभग उनके दरबार में गए। यहीं शिवराज भूषण नामक ग्रन्थ की रचना की, जो ज्येष्ठ कृष्ण १३ भानुवार स १७३० वि० को समाप्त हुआ। इसके कुछ दिन अनंतर यह अपने घर लौटे और अपना समय सुख से उत्तरी भारत में पर्यटन में व्यतीत करने लगे। इनके गृह लौटने के छ वर्ष बाद शिवाजी की मृत्यु हुई, मुगल सम्राट औरंगजेब दक्षिण पहुँचे, शंभा जी मारे गए तथा साहू जी कैद हुए। इन कारणों से यह साहू जी के छूटने पर सं० १७३४ वि० के बाद दक्षिण गए। वहाँ से यह वृद्धता के कारण शीघ्र ही लौटे और कुछसाल जी से भेंट करते घर चले गये। इसके बाद ही सत्तर पन्द्रहत्तर वर्ष की अवस्था में या कुछ अधिक वृद्ध होकर यह वीरलोक गए होंगे।

भूषण ने अपने वंश, पिता, जन्म स्थान आदि के विषय में स्वयं जो कुछ लिखा था उसका ऊपर उल्लेख हो चुका है। उनके भाइयों के विषय में यह कहा जाता है कि ये चार भाई थे पर अधिक मत तीन ही भाई मानता है। चौथे जटाशंकर उपनाम नीलकंठ के भ्रातृत्व के विषय में सब का एक मत नहीं है। चिंतामणि भूषण तथा मतिराम ये तीन भाई इसी वयानुक्रम से माने जाते हैं। इन कवियों ने स्वयं कहीं अपने भाइयों का उल्लेख नहीं किया है। जिन साधनों से इन तीन कवियों का भ्रातृत्व माना जाता है, उनमें सब से प्राचीन मौलाना गुलाम अली आजाद का 'तजकिरः सर्वे आजाद' है, जिसमें चिंतामणि के

विषय में लिखा गया है कि मतिराम और भूषण चिंतामणि के दो भाई थे तथा वे कोड़ा जहानाबाद के निवासी थे। गुलाम अली का जन्म सन् १७०४ ई० में हुआ था और सन् १७८६ ई० में इनकी मृत्यु हुई थी। इनके पितामह मीर अब्दुल जलील बिलग्रामी सैयद रहमतुल्ला के मित्र थे जिन्होंने चिंतामणि जी को पुरस्कृत किया था। गुलाम अली फारसी के सुकवि, इतिहासज्ञ तथा प्रसिद्ध गद्य-लेखक थे। इन्होंने कई ग्रंथ लिखे हैं और इन तीनों ही कवियों की वृद्धावस्था में वे संसार में आ चुके थे और उनकी मृत्यु के समय स्यात् युवा भी हो चुके थे। इनके इस भ्रातृ-संबंध विषयक कथन को अकारण ही अशुद्ध मान लेने का कोई कारण नहीं है। अब यहाँ भूषण के अतिरिक्त अन्य तीन कवियों का संक्षिप्त परिचय दे दिया जाता है।

चिंतामणि जी के छंदविचार, काव्यविवेक, काव्यप्रकाश, रामायण तथा कविकल्पतरु नामक पाँच ग्रंथ शिवसिंह के पुस्तकालय में थे। अतिम विनोदकारों के पुस्तकालय में भी है। इनका छंदविचार ही भाषापिंगल नाम से खोज में प्राप्त हुआ है। रसमंजरी एक और ग्रंथ खोज में मिला है। इनका बनाया रामाश्वमेध ग्रंथ का कुछ अंश मिला है, जिससे इनका कश्यपगोत्री कान्यकुब्ज त्रिपाठी होना ज्ञात हुआ है। इनके आश्रयदाताओं में शाहजहाँ, औरंगज़ेब, जैनदी अहमद, रुद्रसाह सोलंकी तथा मकरंदशाह भोंसला का नाम लिया जाता है।

मतिराम जी ने ललितललाम, छंदसार पिंगल, साहित्यसार, रसरत्न, लक्षण शृङ्गार, मतिराम सतसई, अलंकार पंचाशिका, फूलमंजरी तथा वृत्तकौमुदी रचा है, ऐसा कहा जाता है। जहाँगीर, भाऊसिंह हाड़ा, शंभूनाथ सोलंकी तथा स्वरूपसिंह बुंदेला इनके आश्रयदाता थे। मतिराम नाम ही के एक कवि का

लीथा में प्रकाशित 'राजवंशावली' भी मिली है । वृत्तकौमुदी का रचना-काल सं० १७१८ वि० है, जिसके रचयिता मतिराम अपना परिचय यों देते हैं—

तिरपाठी बनपुर बसै बत्स गोत्र सुनि गेह ।
 विबुध चक्रमनि पुत्र तहँ गिरिधर गिरिधर देह ॥
 भूमिदेष बलभद्र हुव तिनहिं तनुज मुनि गान ।
 मंडित मंडित मंडली मंडन मही महान ॥
 तिनके तनय उदारमति विश्वनाथ हुवनाम ।
 द्युतिधर श्रुतिधर को अनुज सकल गुनन को धाम ॥
 तासु पुत्र मतिराम कवि निज मति के अनुसार ।
 सिंह स्वरूप सुजान को बरन्यो सुजस अपार ॥

सं० १८७२ वि० में समाप्त हुई 'रसचंद्रिका' नामक पुस्तक के रचयिता कवि बिहारीलाल जी ने अपना वंश परिचय उसी ग्रंथ में इस प्रकार दिया है—

बसत त्रिविक्रमपुर नगर कालिंदी के तीर ।
 बिरच्यो भूप हमीर जनु मध्य देश को हीर ॥
 भूषन चिंतामान तहाँ कवि-भूषन मतिराम ।
 नृप हमीर सनमान ते कीन्हें निज निज धाम ॥
 है पंती मतिराम के सुकवि बिहारीलाल ।
 जगन्नाथ नाती विदित सीतल सुत सुभ चाल ॥
 कस्यप बंस कनौजिया बिदित त्रिपाठी गोत ।
 कविराजन के वृन्द में कोबिद सुमति उदात ॥
 विविध भाँति सनमान करि ल्याये चलि महिपाल ।
 आए विक्रम की सभा सुकवि बिहारीलाल ॥

यह चरखारी-नरेश राजा विजयबहादुर विक्रमाजीत और उनके पुत्र महाराज रत्नसिंह के दरबार के राजकवि थे । (चरखारी का

इतिहास अं० पृ० ३६, ३६) ये दोनों ही राजे सुकवि तथा हिंदी-प्रेमी थे। बिहारीलाल का यह वंशपरिचय भूषण, मतिराम तथा चिंतामणि के भ्रातृत्व का स्पष्टतः न उल्लेख करते हुए भी उसका एक प्रकार से समर्थन करता है। भूषण ने अपना जो गोत्र, कुल, जन्मस्थान आदि लिखा है, वह सब बिहारीलाल द्वारा कथित मतिराम के विषय में भी ठीक उतरता है। बिहारीलाल राजा विक्रमाजीत के दरबार में गए थे, जो सं० १८४५ वि० में महाराज खुमानसिंह के युद्ध में मारे जाने पर गद्दी पर बैठे थे। इससे मतिराम का समय अठारहवीं शताब्दि के अंतर्गत पड़ता है।

मतिराम की रचनाओं में फूलमंजरी जहाँगीर की आज्ञा से बनी, जिसका राज्यकाल सं० १६६२-१६८४ वि० है। यह रचना इसी बीच की हो सकती है। ललितललाम ग्रंथ राजा भाऊसिंह हाड़ा के आश्रय में बना था, इससे इसका निर्माणकाल सं० १७३८ वि० के पूर्व ही है। अलंकार पंचाशिका कुमायूँ नरनाह ज्ञानचंद के लिए सं० १७४७ वि० में बनी थी। वृत्तिकौमुदी का निर्माणकाल सं० १७५८ वि० के पूर्व ही है। अन्य ग्रंथों में रचनाकाल नहीं दिया है। इन सब बातों में से किसी को भी अशुद्ध मानने का कोई कारण नहीं है इससे यही निश्चय है, कि एक से अधिक मतिराम अवश्य उस काल में वर्तमान थे। चिंतामणि जी ने रामाश्वमेध को छोड़ कर अन्यत्र न स्वयं ही अपने विषय में कुछ लिखा है और न उनके किसी वंशज ही ने उनका उल्लेख किया है। अस्तु, अभी तक इन तीनों सुकवियों के भ्रातृत्व के विषय में ऐसा कोई कथन नहीं मिला है, जिससे उक्त संबंध अशुद्ध प्रमाणित हो सके।

नीलकंठ उपनाम जटाशंकर भी इन त्रिपाठी-त्रय के भाई कहे जाते हैं पर न सर्व-आज्ञाद में और न रसचंद्रिका ही में इनका

उल्लेख है। इन्होंने अमरेश विलास नामक एक ग्रंथ लिखा है, जिसका रचनाकाल एक दोहे में यों दिया है।

बरष सै सोरह ठानबे सातैं सावन मास।

नीलकंठ कवि उच्चरिय श्री अमरेश विलास ॥

इससे यह ग्रंथ सं० १६९८ वि० में निर्मित हुआ ज्ञात होता है, जो अमरसिंह के लिए लिखा गया है। रीवाँ नरेश अमरसिंह सं० १६८३ वि० में जहाँगीर के दरबार में गए थे और सं० १६९२ वि० में अब्दुल्ला खाँ बहादुर के साथ युद्ध पर गए थे। इनके पूर्वजों में रामसिंह तथा बीरसिंह भी हुए हैं जैसा कि इस ग्रंथ में उल्लेख है। यह सब होते हुए भी इन्हें स्पष्टतः त्रिपाठी-त्रय का भाई कहना ठीक नहीं ज्ञात होता।

पूर्वोक्त बिहारीलाल के वंशपरिचय से यह भी ज्ञात होता है कि भूषण के वंशजगण उसी ग्राम में उनकी मृत्यु के बाद भी रहते थे। भूषण के विषय में इससे अधिक अभी कुछ ज्ञात नहीं हुआ है। इनकी रचनाओं तथा अश्रयदाताओं का अन्यत्र विवरण दिया गया है।

२-भूषण-विषयक दंतकथाएँ

१-निमक की कथा

चिन्तामणि, भूषण, मतिराम तथा जटाशङ्कर नामक चार पुत्रों को छोड़ कर जब पं० रत्नाकर जी त्रिपाठी का स्वर्गवास हो गया तब गृहस्थी के निर्वाहार्थ धनोपार्जन के लिए यत्न करना आवश्यक हुआ। चिन्तामणि तथा मतिराम गृहस्थी के प्रबन्ध के

लिए भूषण को घर ही पर छोड़ कर जीविका की खोज में निकले। चिन्तामणि जी की दिल्ली सम्राट् के दरबार में पहुँच हो गई और वे धन कमा कर घर पर भेजने लगे। मतिराम जी भी आश्रय की खोज में लगे हुए थे। जटाशङ्कर साधु प्रकृति के पुरुष थे और वे सत्संग ही करने में व्यस्त रहते थे। भूषण उदगड स्वभाव के थे और केवल घर के प्रबन्ध आदि की देख-भाल करते थे। तात्पर्य यह कि उस समय तक चिन्तामणि जी ही उन चारों भाइयों में कमासुत थे और प्रकृत्या उनकी स्त्री को अपने पति के इस सार्थक गुण पर बहुत गर्व था। उसकी आँखों के सामने केवल भूषण ही थे जिस पर वह व्यंग्यंक्ति कस सकती थी और एक दिन उसने स्त्रीसुलभ स्वभाव से साधारण सी बात पर अपने मन की कसक मिटा दी ली। एक दिन भोजन में निमक कम होने से भूषण ने उससे माँगा। इस पर उनकी भावज साहेबा ने ताना मार कर कहा कि बहुत सा निमक कमा कर ला रखा है, जो उठा कर दे दूँ। बात भी किसी समय की ऐसी लग जाती है कि तीखे स्वभाव वाले को मरण कष्ट सा होने लगता है। भूषण को यह व्यंग्य असह्य हो उठा और उन्होंने उसी समय जीविकोपार्जन के लिए 'निकल घर से बस राह जङ्गल की ली।' इसके अनन्तर घूमते फिरते जब कभी यह शिवाजी के दरबार में पहुँचे और 'अठारह या बाघन' लाख रुपया, गाँव और हाथी एक बार ही प्राप्त किया तब इस प्रकार एक साथ ही अपने भाग्य-कषाट के खुल पड़ने से ऐसे प्रसन्न हुए कि एक लाख रुपय का निमक खरीद कर अपनी भावज के पास भेज दिया। ज्ञात नहीं कि वह सब निमक उनकी भावज साहेबा ने किस प्रकार खर्च किए। भूषण के ग्रन्थों के कुछ संपादकों को यह कथन स्यात् इतना अत्युक्तिपूर्ण मालूम हुआ कि उन्होंने पुरस्कार-प्राप्ति में हाथी, गाँव के साथ

लाख के स्थान पर सहस्र कर दिया और एक लक्ष के लक्षण के बदले केवल कई बेरे ही भेजवाए ।

कालेज की शिक्षा के समय की एक बात याद आ गई । एक मौलवी साहब, जो अपने को बादशाहों का वंशज बतलाया करते थे, अपने यहाँ के व्यय आदि का कत्ता में खूब बढ़ा कर वर्णन किया करते थे । एक दिन बातों ही में आपने कह डाला कि हमारे यहाँ तीन कनस्टर मिट्टी का तेल नित्य खर्च हो जाता है । सभी आश्चर्य से यह बात सुन रहे थे कि किसी चिलबिले लड़के ने आड़ से आवाज़ दी कि क्या पूरियाँ भी इसी में तली जाती हैं । मौलवी साहब क्रोध से चुप रह गए । साधारणतः इसी प्रकार दंतकथाएँ बनती जाती हैं ।

२—कबूतरी घोड़ी

भूषण के बड़े भाई चिन्तामणि जी बादशाही दरबार में जमे हुए थे इसलिए यह भी इधर उधर घूमते हुए वहाँ पहुँचे । कहा जाता है कि इन्होंने भूषण को बादशाह के सामने पेश किया और कविता सुनाने की आज्ञा दिलवाई । जब औरंगजेब ने कविता सुनाने की आज्ञा दे दी तब आपने ' हुक्म दिया ' कि ' दरबार के अन्य कवियों की शृंगारी कविता सुनते सुनते आपके हाथ ठौर कुठौर पड़ते रहे हैं इसलिए आप हाथ धो लें क्योंकि हम ऐसे कवि की वीररसमयी कविता सुन कर आपके हाथ मोठों पर पहुँचेंगे ' । यह सुन कर औरंगजेब ने कहा कि यदि ऐसा न हुआ तो तुम्हें प्राणदण्ड दिया जायगा । इन्होंने इस शर्त को स्वीकार कर लिया तब औरंगजेब हाथ को स्यात् यमुना-जल से पवित्र कर कविता सुनने को सन्नद्ध हो बैठा ।

भूषण ने अपनी कविता सुनानी आरम्भ की और अंत में ऐसा भी हुआ कि औरंगजेब के हाथ बलात् मोठों पर पहुँच कर उनकी खबर लेने लगे । बादशाह इस पर अत्यन्त प्रसन्न हुआ ।

एक दिन कवि-सम्मेलन हो रहा था और उसमें बादशाह भी उपस्थित थे । उस दिन न जाने बादशाह को क्या सूझी कि आप कहने लगे कि तुम लोग हमारी सर्वदा प्रशंसा ही किया करते हो, क्या हमारे में कोई ऐव नहीं है कि उसका भी वर्णन करो । चापलूसों ने यही कहा होगा कि श्रीमान में कोई दुर्गुण होते तो अवश्य ही उसका उल्लेख अब तक हो जाता, पर ऐसे कोई हैं ही नहीं । भूषण जी भी वहाँ उपस्थित थे । इन्होंने जमा का वचन लेकर औरंगजेब का दुर्गुण-गान आरम्भ किया और स्फुट संग्रह के पद सं० ३७ और ३८ पढ़ डाला । औरंगजेब इस सत्यस्तव पर बड़ा क्रुद्ध हुआ, पर वचन देने के कारण उसने इन्हें प्राणदण्ड नहीं दिया । इन्होंने दरबार में जाना छोड़ दिया । एक दिन औरंगजेब जुम्मा मस्जिद में निमाज़ पढ़ने जा रहा था कि सामने से भूषण जी महाराज अपनी कबूतरी घोड़ी पर सवार आ पहुँचे । बादशाह इनके सलाम बन्दगी न करने पर अत्यन्त क्रुद्ध हुआ और इन्हें पकड़ने के लिए आज्ञा दी, पर इन्होंने जो पैड़ मारी तो पीछा करने वाले मुख देखते ही रह गए और यह हवा हो गए ।

इस कहानी को कुछ लोग बड़ी श्रद्धा से निमक मिर्च लगा कर कहते हैं । भूषण ने ' इसी बीच महाराज शिवाजी को भी वहाँ देखा था ' ऐसा भी लोगों ने लिखा है; पर यदि यह कथनी सत्य है तो भूषण ने भारी भूल की । यदि वह इस अलिफलैला के हवाई घोड़े सी या पुष्पकविमान सी घोड़ी शिवाजी को

भेंट कर देते तो वे बहुतेरे संकटों से बच जाते और इनका भी रायगढ़ में अधिक अभूतपूर्व सत्कार हुआ होता ।

३-अठारह बार या बावन बार

ऐसा कहा जाता है कि जब भूषण दक्षिण में रायगढ़ के पास पहुँचे तब वहाँ के तत्कालीन नरेश से उनसे राजधानी के बाहर किसी कूँए पर भेंट हुई । बातचीत में इन्होंने अपने आने का प्रयोजन भी कह डाला क्योंकि वह राजा उस समय एक उच्च अफसर के ऋणवेश में था । इनका परिचय पाकर उसने इनसे कुछ कवित्त सुनाने के लिए प्रार्थना की । भूषण ने उसके द्वारा दरबार में शीघ्र प्रवेश पाने के विचार से उसे प्रसन्न करना उचित समझ कर एक कवित्त पढ़ डाला । इसे सुन कर वह अतिप्रसन्न हुआ और उसे पुनः सुनना चाहा । भूषण ने उसे फिर बड़ी तड़क भड़क से पढ़ा, परन्तु सुनने वाले का मन नहीं भरा और उसने पुनः सुनने की इच्छा प्रकट की । इस प्रकार अठारह बार उसी कवित्त को सुनाते सुनाते कवि जी थक गए और चुप हो रहे । अफसर महाशय अपनी प्रसन्नता प्रकट करते और दरबार में आने का निमंत्रण देते चले गए । दूसरे दिन जब भूषण दरबार में पहुँचे तो क्या देखते हैं कि वही महाशय गद्दी पर विराजमान हैं और स्वयं सेनापति न हो कर महाराष्ट्रपति हैं । महाराज ने इनसे कहा कि हमने कल यह स्थिर किया था कि आप जितनी बार उस कवित्त को पढ़ेंगे उतने ही लक्ष रुपए, ग्राम तथा हाथी आपको भेंट में दिए जाएँगे, इसलिए आप इस भेंट को स्वीकार करें । तब से भूषण जी उसी दरबार में रहने लगे ।

कुछ लोग इस नरेश का नाम शिवाजी और कुछ लोग साहू जी बतलाते हैं। साथ ही ऐसी भी किंवदन्ती है कि अठारह संख्या के बदले बावन संख्या ठीक है। और एक ही पद न हो कर भिन्न बावन पद कहे गए थे। यही संग्रह पीछे से शिवा बावनी कहलाया। अठारह बार पढ़ा जाने वाला वृंद शिवराजभूषण का ५६वाँ पद है।

इस दंतकथा से यह भी आभास मिलता है कि भूषण दो बार दक्षिण गए थे। पहिली बार शिवाजी से भेंट हुई थी और 'इन्द्र जिमि जंभ पर' वाला कवित्त अठारह बार सुना कर उनके दरबार के राजकवि हुए थे। और दूसरी बार साहू जी के समय में गए तथा उनके उनके पितामह की कीर्ति के बावन पद सुनाए थे।

३-आश्रयदाता गए

शिवराज भूषण के पद २५-३० से यह ज्ञात होता है कि भूषण जी को भूषण उपाधि देने वाले चित्रकूटपति 'हृदयराम सुत रुद्र' तथा शिवाजी दो ही वास्तव में इनके आश्रयदाता थे। इनमें भी द्वितीय ही प्रधान हैं। यह भूषण जी ने स्वयं स्वीकार किया है। इन दो के सिवा भूषण जी ने प्रायः एक दर्जन तत्कालीन राजाओं के विषय में प्रशंसात्मक रचनाएँ की हैं जिनमें किसी के लिए एक ही कवित्त तथा किसी के लिए दो तीन तक कह डाला है। केवल एक पन्नानरेश कुत्रसाल के लिए इन्होंने दशक बनाने का परिश्रम उठाया है। नीचे एक तालिका दी जाती है जिससे ज्ञात हो जायगा किसके लिए कितने और कौन

छंद कहे गए हैं। इसमें सोलंकी भी आ जाते हैं क्योंकि इनके संबंध में भी भूषण ने विशेष कुछ नहीं कहा है।

संख्या	नाम	पदसंख्या	ग्रंथावली की छंद सं०
१	चित्रकूटपति 'हृदयराम सुत रुद्र' सुलंकी	२	२८, ३२ स्फु०
२	छत्रसाल बुन्देला	१३	दशक २६ स्फु०
३	शंभा जी	१	२८ स्फु०
४	माहू जी	२	२६, ३० स्फु०
५	राव बुद्ध सिंह	२	३३, ३६ स्फु०
६	अवधूत सिंह	१	३४ स्फु०
७	कमागूँ नरेश	१	३६ स्फु०
८	मिर्जाराजा जयसिंह	२	४०, ४२ स्फु०
९	महाराज रामसिंह	१	४० स्फु०
१०	अनिरुद्धसिंह पौरव	१	४३ स्फु०
११	बाजीराव	१	५८ स्फु०
१२	दाराशाह	३	४१, ३७, ३८ स्फु०
१३	औरंगज़ेब	२	३७, ३८ स्फु०
१४	छत्रसाल हाड़ा	२	१-२ छत्र द०

भूषण जी के ५०६ पद इस ग्रंथावली में संगृहीत हैं। शिवराज भूषण तथा शिवा बावनी में केवल शिवाजी ही की प्रशंसा है। छत्रसाल दशक में केवल पन्नानरेश छत्रसाल की प्रशंसा है। हाँ

उसी नाम के संबंध से बूँदीनरेश छत्रसाल हाड़ा का भी प्रथम दो दोहों में उल्लेख है। अब केवल साठ स्फुट पद बचे। इनमें भी बत्तीस पद शिवाजी ही की प्रशंसा में हैं, बारह शृंगार रस के हैं और बचे हुए १६ पदों में भूषण के अन्य सब आश्रयदाता-गण, यदि वे इस नाम से पुकारे जा सकते हैं, निपटा दिये गये हैं।

ऊपर तालिका में जो चौदह नाम आये हैं उनमें एक नाम 'औरंगजेब' इस लिये नहीं रखा गया है कि भूषण ने उसकी सुप्रशंसा की है प्रत्युत उसकी कुप्रशंसा (निन्दा) के लिये रखना आवश्यक हुआ। अब पहिले शिवाजी, उनके पुत्र और पौत्र तथा छत्रसाल बुंदेला की जीवनी देकर उसके बाद छत्रसाल हाड़ा आदि अन्य आश्रयदाताओं पर विचार किया जायगा। इन सज्जनों के संक्षिप्त परिचय परिशिष्ट में दिए गये हैं।

छत्रपति महाराज शिवाजी

(१६८४—१७३७)

मेवाड़ के सूर्यवंशावतंस सीसोदिया नरेशों के एक वंशज दत्तिण में आबसे थे, जिनकी कई पीढ़ी बाद एक बाबा जी हुये जिनके मालो जी तथा बिठो जी दो पुत्र थे। मालो जी ने अहमदनगर के नीजाम शाह के एक जगीरदार लाखा जी जादव राव के यहाँ नौकरी कर ली। कुछ दिनों में यह उसी राज्य के स्वतंत्र जागीरदार हो गए और अपने पुत्र शाह जी का लाखा जी जादव की पुत्री जीजाबाई से सं० १६६१ वि० में विवाह किया। नीजामशाह ने मालो जी को पाँच हज़ारी मंसब प्रदान कर पूना

और सूपा की जागीर चाकण तथा शिवनेरी दुर्गों के साथ दिया। सं० १६७६ वि० में मालो जी की मृत्यु होने पर शाह जी भी अहमदनगर राज्य की सेवा करते रहे। इनके बहुत कुछ प्रयत्न करने पर भी सन् १६३७ ई० में उस राज्य का अंत हो गया और यह बीजापुर के सुलतान की सेवा में चले आये।

सं० १६८४ वि० में शिवनेरी दुर्ग में शिवाजी का जन्म हुआ था और प्रायः दस वर्ष तक यह अपनी माता के साथ कभी इस दुर्ग में कभी उस दुर्ग में प्राणरक्षा के लिये फिरते रहे। सं० १६६४ में बीजापुर से संधि हो जाने तथा शाहजहाँ के इनके पिता को क्षमा करने पर यह बीजापुर गए और वहाँ तीन वर्ष शांति से व्यतीत करते हुये उस मुसलमान दरबार के सब रहस्यों को जान गए। इसके अनंतर शाह जी कर्णाटक की चढ़ाई पर गये और अपने पुत्र को माता के साथ अपनी जागीर पूना में भेज दिया। दादा जी कौणदेव को शिवाजी को शिक्षा तथा जागीर के प्रबंध का भार सौंपा गया। इन्हें रामायण, महाभारत तथा पुराणों की कथा सुनने तथा अस्त्रविद्या सीखने का बहुत प्रेम था। यह बड़े उत्साह से आत्म पास के पर्वतों में घूमते तथा पहाड़ी मनुष्यों से मित्रता स्थापित करते थे। दादा जी ने अपने नाम के अनुसार ही राजोचित तथा वीरोचित इन्हें शिक्षा दी और यह कुछ ही दिनों में अस्त्रविद्या में निपुण होगए।

सं० १७०३ वि० में शिवाजी ने अपनी पहिली चोट तोरण दुर्ग पर की और उस पर अधिकार कर लिया। यहाँ इन्हें कुछ गड़ा हुआ धन मिल गया, जिससे उन्होंने मोगब्द पर्वत शृंग पर राजगढ़ दुर्ग बनवाया। बीजापुर दरबार ने शिवाजी के इस कार्य की सूचना शाह जी को भेज कर उन्हें शिवाजी को ऐसे कार्य से रोकने के लिए लिखा। शाह जी ने दादा जी को लिखा, पर वह

जराग्रस्त होकर सं० १७०४ में मृत्यु-मुख में चले गए। इसके अनंतर शिवाजी ने जागीर का कुल प्रबन्ध अपने हाथ में लेकर कोंदाना तथा पुरंधर दुर्गों पर भी अधिकार कर लिया। इस प्रकार इस वर्ष के अंत तक पूना प्रान्त पर इनका पूर्ण अधिकार हो गया। इसके अनंतर शिवाजी ने उत्तरी कोंकण पर चढ़ाई की और वहाँ के बीजापुरी प्रांताध्यक्ष मौलाना अहमद के कल्याण में आबाजी सेनदेव द्वारा पकड़े जाने पर उनका उस प्रान्त पर दक्षिण में सावंत बाड़ी तक अधिकार हो गया। इस प्रान्त में नौ बड़े दुर्ग थे। जिनमें लोहगढ़, राजमाची तथा रैरी प्रसिद्ध हैं। आबा जी सेनदेव ने मौलाना अहमद की पुत्रवधू को, जो अत्यंत सुंदरी थी, शिवाजी के लिए भेजा था, पर मराठा राज्य के संस्थापक युवक वीर ने उस युवती को देख कर मुसकरा कर केवल इतना ही कहा कि यदि माता जी इसकी आधी भी सुंदरी होती तो मैं ऐसा कुरूप न होता। यह कह कर उसे शिवाजी ने मौलाना के पास भेज दिया।

बीजापुर दरबार ने यह शंका कर कि शाह जी ही के इशारे पर शिवाजी ने इस प्रकार विद्रोह मचा रखा है और शाह जी स्वयं कर्णाटक में राज्य स्थापित करना चाहते हैं षडयंत्र कर मुघल के बाजी घोरपदे की सहायता से उन्हें पकड़ लिया। चार वर्ष तक शाह जी कारागार में रहे। राजनीतिकुशल शिवाजी ने इसके उत्तर में मुगल सम्राट् से संधि प्रस्ताव आरम्भ किया, जिससे बीजापुर दरबार डर गया, क्योंकि यदि विजित प्रान्त को शिवाजी मुगलों को दे देते तो वे बीजापुर राजधानी के बहुत पास पहुँच जाते। इधर कर्णाटक में भी गड़बड़ मचा हुआ था, इसलिए अंत में शाह जी सं० १७१० में छूट गये और कर्णाटक भेजे गये।

उत्तरी कोंकण के दक्षिण में जावली प्रान्त था, जिसका राजा

कृष्णा जी बाजी चंद्रराव मोरे था। इसने सं० १७०६ वि० में बीजापुर के बाजी श्यामराजे को शिवाजी को धोखे से पकड़ने के निष्फल प्रयत्न में सहायता दी थी। उसका राज्य भी शिवाजी के राज्यविस्तार में बाधक हो रहा था, इसलिये इन्होंने उसे मिलाने का बहुत प्रयत्न किया पर असफल रहे। तब सं० १७१२ वि० में इनके दो अफसर रघूवल्लाल तथा शंभा जी काव जी ने पड़यंत्र रच कर चंद्रराव मोरे को मार डाला और शिवाजी की छिपी हुई सेना ने अवसर पर पहुँचकर जावली पर अधिकार कर लिया। शृंगारपुर तथा सावंतवाड़ी के सर्दारों ने भी शिवाजी की अधीनता स्वीकार कर ली।

बीजापुर दरबार इस बीच मुगलों के चक्र में पड़ा हुआ था, इस लिए वह शिवाजी को दमन करने का प्रयत्न नहीं कर सका था। सं० १७०७ वि० में औरंगजेब दक्षिण का सूबेदार होकर आया। सं० १७१२ वि० में इसने गोलकुण्डा पर चढ़ाई कर उसे अपने अधीन कर लिया। इसके दूसरे वर्ष बीजापुर का सुलतान मुहम्मद आदिल शाह मर गया और उसका पुत्र अली उन्नीस वर्ष की अवस्था में गद्दी पर बैठा। औरंगजेब ने ऐसा अवसर चूकना नहीं सीखा था, इसलिये सं० १७१३ वि० में उसने बीजापुर पर चढ़ाई कर दी। यह राज्य मरणप्राय हो चला था कि शाहजहाँ की रूग्णावस्था के समाचार ने उसके पुत्रों में साम्राज्य के लिए युद्ध त्रिड़वा दिया, जिसके फल रूप तीन नष्ट हो गये और एक यही औरंगजेब बादशाह हुए। बीजापुर बच गया और औरंगजेब ने झटपट संधि कर भाइयों से लड़ने के लिये दिल्ली की ओर प्रस्थान किया। शिवाजी ने औरंगजेब के बीजापुर जाने पर जुनेर लूटा था तथा अहमदनगर तक गए थे, पर हार कर लौट आए थे। बीजापुर से संधि हो जाने पर शिवाजी ने भी औरंगजेब के पास क्षमा याचना का पत्र भेज दिया।

सं० १७१६ वि० में बीजापुर में खवास खाँ प्रधान मंत्री हुआ और उसने अफ़ज़ल खाँ को फ़ारसी तवारीखों के अनुसार दस सहस्र सवार तथा भूषण के अनुसार बारह सहस्र सवार देकर शिवाजी को दमन करने के लिए भेजा । यह प्रसिद्ध सेनापति तथा भारी डीलडौल का मनुष्य था । मार्ग में इसने तुलजापुर की अंबा भवानी का मंदिर भ्रष्ट कर डाला । शिवाजी इस चढ़ाई का वृत्तांत सुनकर राजगढ़ से प्रतापगढ़ चले आए, जिस समाचार को सुनकर अफ़ज़ल भी माणिकेश्वर, पंढरपुर आदि स्थान अप-वित्र करता हुआ वहीं पहुँचा । यहाँ से इसने शिवाजी को फँसाने के लिए कृष्णा जी भास्कर को भेजा । शिवाजी भी अपने नए राज्य को ऐसे प्रसिद्ध सेनापति के साथ युद्धक्षेत्र में लड़कर विषम समस्या में डालना नोतिविरुद्ध समझ रहे थे और किसी प्रकार उस पर सहज ही में विजय प्राप्त करना चाहते थे । अफ़ज़ल ही की नीति ने उनकी सहायता की और दोनों ही ने एकांत में मिलने का षड-यंत्र रचा । दोनों ही एक दूसरे को उसी एकांतस्थल में समाप्त करने के विचार में लगे थे । अंत में प्रतापगढ़ के नीचे एक मील हट कर पार गाँव में अफ़ज़ल खाँ आ टिका और दूसरे दिन इन दोनों स्थान के बीच में पहाड़ पर एक खेमे में दोनों सेनानियों की भेंट हुई । मिलते ही समय अफ़ज़ल खाँ ने छोटे डील वाले शिवाजी को बाँए हाथ से खूब कस कर दाब लिया और दहिने हाथ से कूरा खींचकर उन पर चोट की । शिवाजी कवच पहिरे हुए थे, जिससे उनकी प्राणरक्षा हुई पर अफ़ज़ल खाँ शिवाजी के बघनखे तथा बिकुए की चोट से न बच सका । इस प्रकार अफ़ज़ल खाँ को मार कर शिवाजी ने दुर्ग में पहुँचते ही तोप छुड़वा दी, जिसे सुनते ही त्रिपां हुई मराठी सेना मुसलमानों पर टूट पड़ी और लगभग तीन सहस्र सैनिक मारे गए । उस सेना का पूरा सामान शिवाजी के हाथ आया ।

शिवाजी इस विजय से ही संतुष्ट न होकर कुछ सेना राज्य के रक्षार्थ छोड़ कर अधिकांश सेना के साथ दक्षिण को चले और कोल्हापुर जिले के पन्हाला, विशालगढ़, रंगाना, पवनगढ़ आदि कई दुर्ग विजय कर लिए। यह सब मेराज के फौजदार रुस्तमज़माँ की जागीर में था, जो परास्त होकर भाग गया। शिवाजी सेना सहित लूट मार करते बीजापुर तक पहुँचे और वहाँ से लौट पड़े। बीजापुर दरबार ने एक भारी सेना सीदी जौहर की अधीनता में भेजी, जिसके साथ अफ़ज़ल का पुत्र फज़लमुहम्मद भी था। इस सेना ने शिवाजी को पन्हाला दुर्ग में घेर लिया। कई महीनों के घेरे के अनंतर दुर्ग टूटने को हुआ तब, शिवाजी ने संधि का प्रस्ताव किया और जब शत्रु को असतर्क पाया उस समय उस दुर्ग से निकल कर दूसरे दुर्ग रंगाना होते हुए प्रतापगढ़ चले गए। इसी कार्य में जब शत्रु ने जानने पर शिवाजी का पीछा किया तब बाजीप्रभु देशपांडे ने पंद्रहपानि दूरों में दो प्रहर तक शत्रु के सब आक्रमणों को निरर्थक करते हुए उन्हें रोका और अंत में अपने प्राण विसर्जन कर स्वामी को दुर्ग में सुरक्षित पहुँच जाने का अवसर दिया था।

सं० १७१८ वि० में बीजापुर की सेना वाड़ी के सावंतों तथा मुघोल के घोरपदे की सहायता से शिवाजी पर आक्रमण करने की तैयारी कर रही थी कि इन्होंने एकाएक मुघोल पर धावा कर उसे लूट कर तथा आग लगाकर नष्ट कर दिया। इसके बाद सावंतवाड़ी पर भी अधिकार कर लिया। तब अंत में बीजापुर के दरबार ने शाह जी को मध्यस्थ बनाकर शिवाजी से संधि कर ली। इसी समय शाह जी अपने प्रतापी पुत्र से मिलने आये थे, जिसने उनका पुत्रवत् बहुत कुछ आदर सत्कार किया।

इसके दो वर्ष बाद सं० १७२१ वि० में घोड़े से गिर पड़ने के कारण शाह जी की मृत्यु हो गई। इसी के आस पास शिवाजी ने अपनी राजधानी राजगढ़ से रायगढ़ में बदल दी। इस दुर्ग को स्वयं शिवाजी ने बनवाया था, जिसका प्रधान कोट सं० १७२१ तक तैयार हो गया था।

एक प्रकार बीजापुर की ओर से निश्चित होकर शिवाजी ने मुगल साम्राज्य में लूट मार आरंभ की। सं० १७१६ वि० में नाथा जी पालकर ने औरंगाबाद तक धावा मारा और बहुत सी लूट रायगढ़ में जाकर जमा कर दिया। जो मुगल सेना उस समय औरंगाबाद में थी, वह मराठों का सामना नहीं कर सकी। औरंगजेब ने अपने मामा शायस्ता खाँ अमीरुल उमरा को दक्षिण का सूबेदार नियुक्त कर महाराज यशवंत सिंह के साथ शिवाजी को दमन करने के लिए भेजा। सं० १७२० वि० में यह औरंगाबाद से भारी सेना लेकर, भूषण तथा मानकर की हस्तलिखित प्रति के अनुसार एक लाख सवार के साथ, पूना की ओर चला। मार्ग में मराठे सवार चारों ओर सामान आदि लूटते जाते थे। अंत में वर्षा व्यतीत करने को पूना में पड़ाव डाला गया और शिवाजी सिंहगढ़ में चले गए। मुगलों ने चाकण दुर्ग घेरा जिसे वे तीन मास के घेरे के अनंतर संधि करके ले सके। पूना में ऐसा कड़ा प्रबंध था कि कोई अनजान आदमी बिना आज्ञा लिए हुए आ जा नहीं सकता था। इसी समय शायस्ता खाँ ने शिवाजी को एक श्लोकार्थ लिख भेजा था कि 'तुम बंदर की तरह पर्वत में क्या छिपे बैठे हो'। शिवाजी ने उत्तर भेजा कि हाँ, पर याद रहे कि बंदरों ही ने रावण तथा उसकी सेना को नष्ट किया था।' इसीके अनंतर शिवाजी ने ऐसा उपाय निकाला कि एक रात्रि वह खुने हुए मावली

सैनिकों* के साथ पूना में भीतर वहाँ पहुँच गए जहाँ शायस्ता खाँ सोया हुआ था और उस शोरगुल में शायस्ता खाँ का एक लड़का तथा बहुत से अन्य आदमी मारे गये। शायस्ता खाँ तीन उँगलियाँ कटाकर खिड़की से कूद कर भागा। † उसी गड़बड़ी में शिवाजी भी अपने सैनिकों के साथ निकल गये और कुशलपूर्वक सिंहगढ़ पहुँच गए। शायस्ता खाँ बुला लिया गया और उसके स्थान पर शाहजादा मुअज्जम सूबेदार होकर आया।

जिस समय प्रांताध्यक्षों का अदल बदल हो रहा था, उसी बीच सं० १७२१ वि० में शिवाजी ने पहली बार सूरत लूटा। इसी वर्ष महाराज जसवंत सिंह ने कोंदाना अर्थात् सिंहगढ़ घेरा, पर उसे नहीं ले सके। भाऊसिंह हाड़ा भी इनके साथ थे और इसी घटना का भूषण ने 'जाहिर है जंग में जसवंत लियो गढ़ सिंह में गीदड़ बनाने' में उल्लेख किया है। औरंगज़ेब शायस्ता खाँ की दुर्दशा तथा सूरत की लूट का वृत्तांत सुन कर अपने योग्यतम सेनापति महाराज जयसिंह को अन्य प्रसिद्ध सरदारों दिलेर खाँ, दाऊद खाँ कुरेशी, रायसिंह सिसोदिया, सुजानसिंह बुंदेला, मुल्ला यहिया आदि के साथ भेजा। सं० १७२२ वि० के आरंभ में इन्होंने दक्षिण के सूबेदार शाहजादा मुअज्जम से भेंट

* भूषण लिखते हैं—तो सो को शिवाजी जेहि दो सौ आदमी सों जीयो जंग सरदार सौ हजार असवार को। सरकार कृत 'शिवाजी' में भी दो सौ सिपाही लेकर हो शिवाजी का उस महल में जाना लिखा है, जिसमें शायस्ता खाँ रहता था। (पृ० ६४)

† भूषण कहते हैं—शायस्ता खाँ दक्खिन को प्रथम पठायो तेहि बेदा के समेत हाथ जायके गँवायो है।

कर महाराज जसवंत सिंह से सेनापतित्व का भार ले लिया, जो बादशाही अज्ञानुसार दिल्ली चले गये। जयसिंह बड़े ही राजनीति-कुशल पुरुष थे। इन्होंने शिवाजी के सभी शत्रुओं का उनके विरुद्ध उभाड़ा। यह बड़ी सतर्कता से मार्ग खुला रखने के लिये थाने बनाते हुए पूना पहुँचे और वहाँ कुछ सेना छोड़ कर आगे बढ़े। पुरंधर घेरा गया और ढाई महीने के घेरे पर जब अंत में शिवाजी ने यह देखा कि यह दुर्ग अब टूटा चाहता है तथा वे जयसिंह का सामना करने में समर्थ नहीं हैं तब संधि कर ली। इस संधि की एक शर्त यह भी थी कि शिवाजी अपने पैंतीस, भूषण के पंचतीस, दुर्गों में से तेईस दुर्ग मुगल सम्राट को सौंप दें और बारह अपने लिये रखें। दूसरी शर्त के अनुसार शिवाजी ने बीजापुर के विरुद्ध मुगलों की सहायता करना स्वीकार किया। इन शर्तों से ज्ञात होता है कि जयसिंह ने शिवाजी पर तीन ही महीने में ऐसी विजय प्राप्त कर ली थी कि उन्होंने अपने राज्य का आधे से कहीं अधिक भाग देकर भी संधि करना उचित समझा था।

इनके अनंतर महाराज जयसिंह शिवाजी को साथ लेकर बीजापुर गए। कई विजय प्राप्त करने पर भी सद्दारों के वैमनस्य से यह सफलप्रयत्न न हो सके और बीजापुर पहुँच कर लौट आए। इसी बीच इन्होंने शिवाजी को दिल्ली जाकर बादशाह से भेंट करने के लिए भेजा। यह भी बादशाह से स्वयं मिल कर अपने लिये अच्छी शर्तें करने के विचार से दिल्ली जाने के उत्सुक थे, पर उसमें यह असफल रहे। औरंगजेब इनके नाम से चिढ़ता था और जान बूझ कर इनका अनादर करने के लिए पहिले साधारण सद्दारों को अगवानी के लिए भेजा तथा दरबार में आने पर पाँच हजार मंसबदारों के बीच में इन्हें स्थान दिया। उसीने इसके पहिले इन के पुत्र तथा इनके सेवक नाथा जी पालकर को पाँच

हजारी मंसब दिया था। शिवाजी ने मुसलमानी रीत्यानुसार ज़मीन तक झुक कर फर्शी सलाम तक न किया और अपने अनादर को स्पष्टतः दरबार ही में कुमार रामसिंह पर प्रकट कर दिया। औरंगज़ेब ने क्रुद्ध होकर इनके डेरे पर पहरा बैठा दिया, जिससे वे भाग न सकें। इन्होंने दक्षिण लौट जाने की आज्ञा माँगी; पर उस पर यही हुक्म हुआ कि अपने सैनिकों को वे विदा कर दें पर स्वयं अपने पुत्र सहित कुछ दिन और ठहरें। शिवाजी ने आज्ञा पाते ही अपने रक्तक सैनिकों को विदा कर दिया और अपने निकल भागने का उपाय करने लगे। कुँअर रामसिंह अपने पिता के वचन की रत्ता करने के लिये इस कार्य में सहायक हुए। शिवाजी के बीमार होने का समाचार सब को सुनाया जाने लगा तथा मिठाई के बड़े बड़े खाँचे अमीरों, राजाओं तथा मस्जिदों में गरीबों को बाँटने को भेजे जाने लगे। यह कार्य कई दिन चलता रहा जिससे पहरेदार लोग अब बिना देखे ही टोकरीयों को बाहर जाने देने लगे। एक दिन ये दोनों पिता पुत्र दो टोकरीयों में बाहर निकल गए। इनके स्थान पर इनका एक सेवक हीरा जी फर्जद दुशाला ओढ़कर सोया हुआ था, जिसे पहरेदार देखकर समझ जाते थे कि दक्षिण-राज सोये हुए हैं; पर वे मथुरा की ओर मारामार चले जा रहे थे। यहाँ ताना जी मालूसरे मिले और मथुरा में साधू का वृद्धवेश धारण कर शिवाजी प्रयाग होते काशी पहुँचे। प्रयाग ही में शंभा जी को एक ब्राह्मण के यहाँ छोड़ दिया था। काशी से यह सकुशल दक्षिण पहुँच गए। औरंगज़ेब ने बहुत कुछ इन्हें पकड़ने का प्रबंध किया पर असफल रहा।

दक्षिण लौटने पर शिवाजी तीन वर्ष से अधिक समय तक शांतिपूर्वक अपने राज्य का दृढ़ प्रबंध करने में लगे रहे और

इसके बाद सं० १७२७ वि० में इन्होंने फिर शस्त्र उठाया। सर्व-प्रथम सिंहगढ़ लेना ही इनका ध्येय था क्योंकि मुग़लों से संधि करने से पूना के आस पास इनका जा राज्य बचा था उस पर इस दुर्ग तथा पुरंधर दुर्ग के मुग़लों के हाथ में होने से बादशाही प्रभाव अधिक था। माघ कृष्ण नवमी को ताना जी मालूसरे अपने भाई सूर्या जी राघ तथा एक सहस्र मावली सैनिक लेकर सिंहगढ़ लेने चले, जिसका दुर्गाध्यक्ष उदयभानु राठौड़ शारीरिक शक्ति तथा साहस के लिये प्रसिद्ध था। दुर्ग में भी एक सहस्र मुसलमान तथा राजपूत सेना मौजूद थी। ताना जी मालूसरे तथा तीन सौ सैनिक रस्सियों द्वारा चुपचाप दुर्ग पर चढ़ पाए थे कि एक संतरी को कुछ आहट लगा गई। वह उसी समय तीर से मारा गया, पर दुर्ग के सैनिकों को आवाज़ होने से पता लग गया और वे झुण्ड के झुण्ड मशालें बाल कर उसी ओर आने लगे। ताना जी ने भी अवसर देख कर धावा बोल दिया। मावले भी 'हर हर महादेव' से दिशाओं को कंपायमान करते हुए शत्रु पर दूट पड़े। युद्ध ही के बीच दोनों पक्ष के प्रसिद्ध सरदारों में सामना हो गया और दोनों में द्वन्द्व युद्ध होने लगा जिसमें ताना जी मारे गये। सदाँर के गिरते ही मावले हतासाह होकर हटने लगे कि सूर्या जी बची हुई सेना के साथ युद्धस्थल पर आ पहुँचे। यह अपनी सेना को ललकार कर उदैमान पर दूट पड़े और पहिली ही बार में उसे ले बीते। बहुत ही कड़े युद्ध पर दुर्ग विजय हुआ। दुर्ग की आधी सेना मारी गई और पाँच सौ राजपूत ऐसी अवस्था में पकड़े गये, जो घावों के कारण हिल तक नहीं सकते थे। शिवाजी ने सब को पुरस्कृत किया था। इसके अनन्तर एक एक कर के शिवाजी ने मुग़लों को दिये हुए प्रायः सभी दुर्गों पर अधिकार कर लिया। इसी वर्ष सूरत दूसरी बार लूटा गया और सीदियों पर भी एक विजय प्राप्त की गई। शिवाजी लूट

लेकर मुल्हेर के आगे बढ़े थे कि दाऊद खाँ कुरेशी ने घानी डिंडौरी के पास इनका रास्ता रोका, जहाँ प्रतापराव गूजर की अधीनता में मराठी सेना के एक भाग ने इससे युद्ध कर इसे परास्त किया और शिवाजी को रायगढ़ लूट ले जाने का अवसर दिया ।

इसके अनंतर सं० १७२८ वि० के आरंभ में शिवाजी ने बरार बगलाना की ओर दो सेनाएँ भेज कर कई स्थानों को लूटा । बरार का सूबेदार खानेजुमा देवगढ़ तक आकर वहीं रुक रहा । दोनों मराठी सेनाएँ प्रतापराव गूजर तथा मोरो व्यंबक पिंजले के अधीन में सल्हेर में मिलीं और उसे घेर लिया । दाऊद खाँ दुर्ग की सहायता को आ रहा था, पर इसके पहिले ही दुर्ग पर मराठों का अधिकार हो गया । इस बीच मुगल सेनानियों की अदला बदला जारी थी । पहिले महाबत खाँ को अमरसिंह आदि कई सदर्ियों के साथ भेजा, पर जब वह कुछ न कर सका तब उसके स्थान पर बहादुर खाँ तथा दिलेर खाँ भेजे गये । सं० १७१९ वि० में ये दोनों इखलास खाँ मियाना, अमरसिंह चंद्रावत आदि कई सदर्ियों का सेना सहित सल्हेरी लेने को भेज कर अहमदनगर होते पूना तथा सूपा गये और उन दोनों स्थानों पर अधिकार कर लिया । इसी समय शिवाजी सल्हेरी की रक्षा के लिये ससैन्य आ पहुँचे । मुगल सेना से घोर युद्ध हुआ जिसमें इखलास खाँ और मुहकम सिंह पकड़े गये तथा अमरसिंह कई सदर्ियों और कई सहस्र सैनिकों के साथ मारा गया । इसके अनंतर मुल्हेर विजय कर शिवाजी कोंकण लौट गए । महाबत खाँ तथा शाहजादा मुअज़्जम राजधानी लौट गये और बहादुर खाँ सेनापति तथा सूबेदार नियत हुआ ।

इसी वर्ष मराठी सेना ने जवारि के कोली राजा विक्रम-

साह को परास्त कर उस राज्य पर अधिकार कर लिया। इसके बाद रामनगर के कोर्ली राज्य पर भी अधिकार हो गया। इसके अनंतर शिवाजी ने एक सेना तेलिंगाना भेजी, जिसने रामगिरि स्थान को तथा बीच के कई जगहों को लूट लिया। बहादुर खाँ तथा दिलेर खाँ ने इस सेना के दोनों भागों का पीछा किया, जो शत्रु को देख कर दो टुकड़ों में बँट गई थी और एक भाग उत्तर चाँदा होते बरार गया और दूसरा गोलकुण्डा राज्य में होकर दक्षिण चला गया। मुगलों के विशेष सतर्कता दिखलाने से शिवाजी ने कनारा तथा दक्षिणी महाराष्ट्र की ओर सेना फेरी और सं० १७३० के आरंभ में पन्हाला तथा सितारा दुर्ग ले लिए। इसके अनंतर पच्चीस सहस्र मराठी सेना ने बीजापुर के पश्चिमी भाग में खूब लूट मचाया। बहलाल खाँ ने बकापुर में तथा सरज़ा खाँ ने चाँदगढ़ में मराठी सेना की दो टुकड़ियों को परास्त किया; परंतु प्रताप राव गुज्जर ने उमरानी के पास उसे ऐसा परास्त किया कि उसने शिवाजी के विरुद्ध न लड़ने की प्रतिज्ञा तक कर ली। इस प्रतिज्ञा के भरोसे प्रताप राव के लौट आने पर शिवाजी ने उसे कई खरी बातें कहीं, जिससे उस वीर को अत्यन्त मानसिक कष्ट हुआ ही था कि बहलाल अपना वचन तोड़ कर फिर नई सेना लेकर आ पहुँचा। प्रतापराव ने रणनीति का ढ़ण्पर पर डाल कर एकदम बहलाल पर धावा कर दिया और यह भी न देखा कि उसके साथ केवल आधे दर्जन ही सवार आ रहे हैं। वह वीर मारा गया और मराठी सेना सहकारी सेनापति आनंदराव के उत्साहित करने से लड़ती भिड़ती लौट आई।

हंबीरराव हंसा जी मोहित ने बहलाल की जागीर लूट ली और उसे परास्त कर भगा दिया। इसी वर्ष शिवाजी ने दिलेर खाँ को भी परास्त किया, जिसमें उसके एक सहस्र पठान मारे

गए । खैबर के अफ़ग़ानों तथा सतनामियों के विद्रोह हो जाने से औरंगज़ेब हसन अन्दाज़ चला गया और दक्षिण की चढ़ाईयों पर वह विशेष ध्यान न दे सका । शिवाजी ने भी यह अवसर उत्तम समझ कर अपने राज्याभिषेक का प्रबन्ध किया । इस उत्सव के विषय में संक्षेपतः यहाँ इतना ही लिखना बहुत है कि काशी के सुप्रसिद्ध विद्वान गंगा भट्ट के आचार्यत्व में ज्येष्ठ शुक्र १३ सं० १७३१ वि० सं० १५२६ शाके (६ जून सन् १६७४) को शिवाजी का राज्याभिषेक कुशलपूर्वक बड़े समारोह के साथ समाप्त हो गया ।

शिवाजी ने राज्याभिषेक रूपी यज्ञ की पूर्णाहुति के लिये मुग़ल सूबेदार बहादुर खाँ के कोप ही को लूटना निश्चय किया और इसलिये दो सहस्र सेना इस प्रकार भेजी कि जब बहादुर खाँ उसका पीछा करते हुए दूर निकल गया तब शिवाजी सात सहस्र सवारों के साथ उसके पड़ाव पर आ गिरे और एक करोड़ रुपये से अधिक का माल लूट ले गए । इसके अनंतर औरंगाबाद के आस पास के कुछ नगरों को लूटते खानदेश और बग़लाना गए । सं० १७३३ वि० में बहादुर खाँ ने बीजापुर पर चढ़ाई कर दिया, जिससे घबड़ा कर वहाँ के तत्कालीन प्रधान अमात्य बहलोल खाँ ने शिवाजी से संधि कर ली ।

अब शिवाजी ने कर्णाटक पर चढ़ाई करने का प्रबन्ध किया । मुग़ल प्रान्ताध्यक्ष बहादुर खाँ ने बीजापुर पर चढ़ाई करने के विचार से शिवाजी से संधि कर ली थी । बीजापुर राज्य में बड़ी अशांति थी । अफ़ग़ान सद्दर बहलाल खाँ ११ नव० सन् १६७४ ई० (सं० १७३२) को बालक सिकंदर शाह को अपने अधिकार में कर अभिभावक बन गया और खवास खाँ को दस मास बाद मरवा डाला । दक्षिणी मुसलमानों के सद्दरगण बिगड़ गए

और दोनों पक्ष वाले लड़ने लगे । इस प्रकार यह राज्य शिवाजी के इस कार्य में रुकावट डालने योग्य नहीं रह गया था । गोलकुण्डा के प्रधान मंत्री मदन पंडित की मध्यस्थता में उस राज्य से संधि होगई । इसके अनंतर सत्तर महम्य सैनिक लेकर शिवाजी ने यात्रा आरम्भ की और सं० १७३४ वि० में हैदराबाद पहुँचे जहाँ अब्दुल हमन कुतुबशाह ने इनका अच्छा सत्कार किया । यहाँ से यह कर्णाटक गए । जिंजी तथा उसके आस पास के स्थान सुगमता पूर्वक अधिकृत हो गये, पर त्रिनामाला के अध्यक्ष शेरखाँ लोदो ने अच्छी लड़ाई की । उसका एक दुर्ग बेलार चौदह महीने के घेरे पर टूटा । शेर खाँ परास्त होकर कुछ सवारों के साथ बाघनी गिरि भाग गया था, जो तिरुवाड़ी से २२ मील दक्षिण बेलार नदी पर है । शिवाजी पीछा करते वहाँ पहुँचे । मथुरेश्वर से कुछ लाख हून लेकर अपने वैमात्रिक भाई व्यंका जी से मिलने त्रिपतूर गए । कैल-रुन के दक्षिण का भाग व्यंका जी के लिये छोड़कर उसके उत्तर के सब भाग पर मराठों का अधिकार हो गया । इसके बाद कुछ तीर्थस्थानों की यात्रा करते हुए सं० १७३४ में शिवाजी पन्हाला पहुँच गये । इस चढ़ाई में विजय किये गए प्रान्त की वार्षिक आय बीस लाख थी और उसमें एक सौ दुर्ग थे ।

औरंगजेब ने बहादुरखाँ के स्थान पर दिलेर खाँ को सेनापति नियुक्त किया, जिसने बीजापुर घेर लिया । बीजापुर के प्रधान अमाय सीदी मसऊद ने शिवाजी से सहायता माँगी । इसी बीच शिवाजी के सुपुत्र शंभू जी, जो एक युवती से बलात्कार करने के कारण पन्हाला दुर्ग में कैद थे, भागकर दिलेर खाँ के पास चले गये । सं० १७३६ वि० में शिवाजी ने जज़िया के विरुद्ध औरंगजेब को एक पत्र लिखा था, जो शिवाजी से वीर ही के योग्य था । शिवाजी ने बीजापुर की सहायता के लिए कुछ सेना तथा बहुत सा सामान

वहाँ भेजा और दो सेनाएँ मुगल राज्य में लूट मार करने को भेजीं । अंत में दिलेर खाँ बीजापुर न ले सकने पर लौटा और पशुओं की तरह बीजापुर तथा शिवाजी के राज्य के ग्रामों को नष्ट करता तथा ग्रामवासियों को मारता हुआ आथनी पहुँचा, जहाँ उसने बहुत से हिंदू कैदियों को बँच डाला । इसी बीच शंभू जी दिलेर खाँ के कैद से भागकर फिर अपने पिता के पास पहुँच गए ।

सं० १७३६ वि० में शिवाजी की सेना की कई टुकड़ियाँ मुगल सेना से पराजित हो चुकी थीं और दिलेर खाँ पन्हाला दुर्ग लेने के प्रयत्न में लगा था, इस लिए इन्होंने पन्हाला दुर्ग का अजेय करने के लिए बहुत सी ताँपें तथा सामान भेज कर उसे पूरी तरह सज्जित कर दिया । इसके उपरांत लगभग तीस सहस्र सेना लेकर राजापुर लूटते बुर्हानपुर गए । वहाँ से पश्चिमी खानदेश होते हुए बालाघाट में जालना तक लूटे । यहाँ से लौटते समय मुगल सेना ने, जो शाहजादा मुअज़्जम के साथ आई थी, इनका पीछा किया और यह लड़ते भिड़ते पन्हाला दुर्ग लौट गए ।

यहीं चेत शुक्ल १५ सं० १७३७ वि० (५ अप्रैल सन् १८० ई०) रविवार को देापहर के समय शिवाजी वीरलोक को सिधारे ।

शंभा जी

(१७१४—१७४६)

इनके संबंध में भूषण ने केवल एक छंद कहा है, जिसका भाव इतना ही है कि दिल्ली के मुमलमान सर्दारगण अनेक पत्नियों के समान हैं और शंभा जी सितारे में बँटे हुए उनका शिकार खेलते थे । सं० १७१४ वि० में शंभाजी का जन्म हुआ था और यह सं० १७३७

वि० में २३ वर्ष की अवस्था में गद्दी पर बैठे । इनकी राजगद्दी घरेलू पड्यंत्र के कारण माघ शुक्ल १० शक १६०२ को हुई थी । इस उत्सव के अनंतर शंभा जी ने बड़ी वीरता से दक्षिण के सूवेदार खानजहाँ बहादुर खाँ कोका के रहते हुए खानदेश की राजधानी बुर्हानपुर को लूट लिया । इस समाचार से औरंगजेब ने बहुत क्रुद्ध होकर स्वयं दक्षिण का यात्रा करने का निश्चय किया । इसी समय एक ऐसा और कारण भी उत्पन्न हो गया, जिससे उसे दक्षिण जाना ही पड़ा । भारवाड़नरेश यशवंतसिंह की मृत्यु हो जाने पर औरंगजेब ने उस राज्य को खालसा करने का प्रयत्न किया, पर असफल रहा । मिसौदिया तथा राठौरों ने कुछ दिन के लिए फूट देवी पर अश्रद्धा दिखालाई और मिलकर मुगलों तथा अपने स्वजातीय शत्रुओं का ऐसा सामना किया कि उनका राज्य बच गया, नहीं तो आज स्यात् राजस्थान राजस्थान न रह जाता । इसी युद्ध में औरंगजेब के एक पुत्र अकबर को राजपूतों ने पिता के विरुद्ध उभाड़ा, पर कुछ फल न निकला । अंत में अकबर वहाँ से भागकर सं० १७३८ वि० में शंभा जी के शरण में दक्षिण चला गया । औरंगजेब ने यह समाचार पाकर राजपूतों से संधि कर ली और सेनासहित दक्षिण की ओर प्रस्थान कर दिया, जहाँ से वह फिर न लौटा ।

इधर पोर्चुगीज़ मुगल बादशाह से संधि कर रहे थे, जो मराठा राज्य के लिए अत्यंत हानिकारक होता । इस लिए शंभा जी ने गोआ पर अधिकार करने के लिए तैयारी की । सं० १७४०—१७४१ वि० में मराठों और पुर्तगीज़ों में कई लड़ाई हुई और मराठों ने उनके कई स्थान ले लिए । गोआ पर भी शंभा जी का अधिकार हो चुका ही था कि शाह आलम के अधीन मुगल सेना ने पहुँच कर उसमें बाधा डाल दी और मराठी सेना असफल लौट गई ।

उसने भी मुगल सेना को इस प्रकार घेरा कि वह भी बहुत हानि उठाकर तथा दूसरी मुगल सेना और वेड़ा की सहायता लेकर अहमदनगर पहुँच सकी । इसके अनंतर शंभा जी पर कवि कलश जी का प्रभुत्व बढ़ने लगा, जिसे घराऊ पड़यंत्र ने ऐसा करने का बार बार अवसर दिया था । इसके अनंतर मराठों तथा मुगलों में कई युद्ध हुए और कभी एक पक्ष तथा कभी दूसरा पक्ष विजय प्राप्त करता था । अंत में औरंगजेब ने मराठों को हराकर बीजापुर तथा गोलकुंडा को पहिले विजय करना निश्चय किया और अपनी पूर्ण शक्ति बीजापुर राज्य पर भेजी ।

सं० १७४२ वि० में बीजापुर-मुगल युद्ध आरंभ हुआ । इसी वर्ष शंभा जी ने भड़ोच विजय किया । इन्होंने तथा गोलकुंडा के सुलतान ने भी बीजापुर को बराबर सहायता दी, पर अंततः सं० १७४३ वि० में इस राज्य का अंत हो गया । इसका अंतिम सुलतान सिकंदर शाह बत्तीस वर्ष की अवस्था में सं० १७०० ई० में मर गया ।

औरंगजेब ने इसके बाद पहिले शंभा जी से संधि कर ली, जो कवि कलश द्वारा प्रस्तुत किए गए मंदिरा तथा मदिरे-त्तिगियों के पाश में पूर्ण रूप से फँस चला था । बादशाह की दृष्टि अब गोलकुंडा की ओर फिरी और उसके सुलतान अबूहसन से संधि रहने के कारण उससे आज्ञा लेकर गुलबर्गा के सैयद गेसू के मजार का दर्शन करने के लिए गया, पर वहाँ से सेना लेकर सीधे गोलकुंडा पर चढ़ दौड़ा । सं० १७४५ वि० में आठ महीने के घेरे पर थोखे से इस दुर्ग पर मुगलों का अधिकार हो गया और इस राज्य का भी अंत हो गया ।

इस प्रकार इन दो मुसलमान राज्यों का अंत कर औरंगजेब अब मराठों को दमन करने का प्रबंध करने लगा। मराठी सेना ने इस बीच इन दो राज्यों के बहुत से अंश पर अधिकार कर लिया था, जिससे बादशाह उन पर और भी क्रुद्ध था। सं० १७४४ वि० में इसने एक सेना कर्णाटक की और तथा दूसरी रायगढ़ घेरने का भेजा। जेख निजाम हैदराबादी अपने पुत्र इख्तास खाँ के साथ पन्हाला घेरने के लिए भेजा गया, पर मार्ग में उसे शंभा जी के संगमेश्वर में रहने की सूचना मिली। यह बड़ी फुर्ती से इस ओर बढ़ा, जहां शंभा जी बार बार चरों से सचेत किए जाने पर भी मदिरापानादि में इतने रत थे कि किसी का कुछ ध्यान न किया। अंत में २८ दिसंबर सन् १७८८ ई० को वह पकड़े गए और ढाई गद्दीने बाद कलश आदि के साथ मारे गए।

यह भी अपने पिता के समान हिंदी कविता करते थे और नखशिख तथा नायिकाभेद की दो पुस्तकें इनकी लिखी सुनी जाती हैं। कवियों का आश्रय भी देते थे।

शिवाजी द्वितीय उपनाम साहू

(१७३८—१८०४)

सं० १७४६ वि० में अपने पिता शंभा जी के मारे जाने पर यह राजा हुए और इनके पितृव्य राजाराम अभिभावक हुए। इसके बाद ही मराठी सेना ने संता जी घोरपदे की अश्वीनता में तूलापुर के पास मुगल बादशाह के पड़ाव पर क़ापा डाला। संता जी धूर्तता से अपने को मुगलों ही का एक मराठा सर्दार बतलाते हुये उस पड़ाव के भीतर चले गये और बादशाही खेमे को

नष्ट भ्रष्ट कर उसके भीतर के सब आदमियों को मार डाला। औरंगजेब कहीं अन्यत्र सोया हुआ था, इसलिये बच गया। उसी वर्ष के अंत में रायगढ़ पर मुगलों ने सूर्या जी पिसल को मिलाकर अधिकार कर लिया और शिवाजी अपनी माता येशूबाई के साथ पकड़े गये। औरंगजेब ने इन दोनों को अपनी पुत्री ज़ीनतुन्निसा को सौंप दिया और शिवाजी के नाम को बदलकर साहू रख दिया।

सं० १७६४ वि० के अंत में बहादुर शाह ने साहू को कैद में छोड़ दिया और उसे दक्षिण भेजा। यह राजाराम की रानी ताराबाई से कई लड़ाइयाँ लड़ कर सितारा के राजा बन बैठे, पर यह पड़्यंत्र कई वर्षों तक चलता रहा। इसी समय वाला जी विश्वनाथ ने कृपणः प्रसिद्धि प्राप्त करना आरम्भ किया और इन पड़्यंत्रों से निर्बल हुए मराठा राज्य का पुनरुद्धार किया। सं० १७७७ वि० में इनकी मृत्यु होने पर साहू ने इनके पुत्र बाजीराव को पेशवा बनाया। उस समय इनके भाई चिमना जी बारह वर्ष के थे। इनकी सफलताओं ने पेशवा की पद्धति परंपरा के लिए इन्हींके वंश में निश्चित कर दिया। बाजीराव ने सं० १७८१ वि० में निजाम को अच्छी प्रकार पराजित कर दिया। इन्होंने पूना को अपना प्रधान स्थल बनाया, जो पेशवाओं की साहू की मृत्यु पर राजधानी कहलाई। सं० १७९० वि० में मुहम्मद ख़ाँ वंगश ने बंडेलखंड पर चढ़ाई कर कृत्रसाल के राज्य पर अधिकार कर लिया। कृत्रसाल के सहायता माँगने पर बाजीराव समेन्य वहाँ पहुँचे और वंगश को पूर्णतया परास्त कर भगा दिया। इसके बाद बाजीराव ने मालवा तथा गुजरात पर अधिकार कर लिया। सं० १७९४ वि० में बाजीराव दिल्ली पहुँच कर उसके आस पास के ग्रामों को लूटते हुए लौट आये। इसी वर्ष के

अतः में बाजीराव ने निजाम के सेनापतित्व में युद्धार्थ तैयार मुगल सेना को भूपाल के पास परास्त कर भगा दिया। सं० १७६७ वि० में बाजीराव ने हैदराबाद के निजाम नासिरजंग को परास्त किया। इसी वर्ष इनकी मृत्यु हो गई तब इनके पुत्र बाला जी बाजीराव तृतीय पेशवा हुए। सं० १८०४ वि० में साहू जी की मृत्यु होगई। यह निस्संतान थे इसलिये राजाराम के पौत्र रामराजा गद्दी पर बैठे।

स्फुट पद-संग्रह में दो पद इनकी प्रशंसा में दिये गये हैं, जिनमें एक तो इनके राज्य के आरंभिक काल का ज्ञात होता है। भूषण कहते हैं कि 'साहू जी की साहिबी दिखात कछु होनहार'। दूसरे में साहू के आतंक का वर्णन मात्र है। छत्रसाल दशक में छत्रसाल की प्रशंसा करते हुये कहा है कि 'और राव राजा एक मन में न लाऊँ अब साहू का सराहों कै सराहों छत्रसाल को', इससे यह मालूम होता है कि भूषण ने साहू के राजा होने पर ये कविताएँ की थीं।

पन्नानरेश महाराज छत्रसाल

(१७०६—१७६०)

आड़क्का राज्य के संस्थापक महाराज प्रतापरुद्र के बारह पुत्र थे जिनमें प्रथम दो भारतीचंद्र तथा मधुकर साह क्रमशः अपने पेटृक राज्य के अधिकारी हुए। तृतीय पुत्र उदयाजित को महेवा की जागीर मिली। इनकी चौथी पीढ़ी में चंपतिराय हुए जिन्होंने मुगलों से निरंतर युद्ध कर खालसा हुए आड़क्का राज्य को फिर से पहाड़सिंह को दिलवाया था। इसी कारण लाल कवि ने लिखा है।

प्रलय पयोधि उमंड में ज्यों गोकुल जदुराय ।

ज्यों बूझत बंदेल कुल राख्यो चंपतिराय ॥

चंपतिराय के पाँच पुत्र थे—सारवाहन, अंगद राय, रत्नसाह, कुत्रसाल और गोपाल राय । कुत्रसाल का जन्म ज्येष्ठ शुक्ल ३ सं० १७०६ वि० को हुआ था । पिता की मृत्यु के समय इनकी अवस्था पंद्रह वर्ष की थी और यह अपने मामा साहवांसिंह धंधेरे के यहाँ सहारा में रहते थे । वहाँ से यह पहिले अपने चाचा के यहाँ गए और वहाँ से भी कुछ दिन बाद अपने भाई अंगद राय के यहाँ देवगढ़ गए । उनका सम्मति से यह बादशाही सेना में सम्मिलित हुये, पर आदर न होने से स्वतंत्रता-प्रिय कुत्रसाल ने मुगलों से युद्ध करना ही निश्चय किया और सं० १७२७ वि० में यह कुत्रपति महाराज शिवाजी से मिले । उनके उत्साह-वर्धक वचनों को सुन कर दृढ़प्रतिज्ञ हो यह अपनी जन्मभूमि का लौट आये और मुगलों से युद्ध करने का प्रवन्ध करने लगे । कई बंदेले सरदार धीरे धीरे इनसे मिल गये और सं० १७२८ वि० तक इन्होंने कई युद्धों में विजय प्राप्त कर अपना आतंक बंदेलखण्ड में पूर्णतया जमा दिया । कई स्थानों पर इन्होंने अपना आधिपत्य भी जमा लिया । महम्मद अमीन खाँ की रक्षा में दक्षिण से जाते हुए कांप का इन्होंने लूट लिया । इन्होंने सं० १७३७ वि० में औरंगजेब के भेजे हुये सदाँर तहख्वर खाँ को पराजित किया और अनवर खाँ, सदख्दीन तथा हामिद खाँ आदि के सेनापतित्व में आई हुई सेनाओं को भी परास्त कर दिया । तब सं० १७४६ वि० में अब्दुस्समद खाँ की अधीनता में एक भारी मुगल-वाहिनी इन पर आई, पर इन्होंने उसे बेतवा नदी के किनारे नष्ट कर बहा दिया । इसके अनंतर सं० १७५८-६१ वि० के बीच में मुराद खाँ, दलेल खाँ, सैद अफ़ग़ान तथा शाह कुली खाँ को परास्त किया । इस

प्रकार अनेक विजय प्राप्त कर कुत्रसाल ने अपना प्रभुत्व सारे बुंदेलखण्ड पर स्थापित कर दिया और सं० १७६१ वि० में बहादुर शाह ने भी इन्हें इनके स्वअर्जित राज्य का राजा स्वीकार कर लिया ।

मुगल-साम्राज्य का अवनतिकाल आरम्भ होगया था और मुगल सरदारगण अपने अपने अधीनस्थ सूबों में अपना राज्य स्थापित करने में लगे थे । इसी प्रकार के एक फौजदार मुहम्मद खाँ बंगश ने फर्रुखाबाद में अपनी नवाबी जमाती थी और पास के बुंदेलखंड पर अपना प्रभुत्व जमाने के लिये सं० १७८६ वि० में अस्सी सहस्र सेना के साथ वहाँ पहुँचा । कुत्रसाल ने बाजीराव पेशवा की सहाया से इसे परास्त कर भगा दिया । इसके बदले इन्होंने पेशवा को अपने राज्य का तृतीयांश दे दिया । सं० १७९० वि० में इनकी मृत्यु हुई । इनके बड़े पुत्र हृदयशाह पन्ना के तथा द्वितीय पुत्र जगतराज जेतपुरा के राजा हुये ।

कुत्रसाल स्वयं कवि थे और सुकवियों के आश्रयदाता भी थे । ऐसे ही वीर पुरुष की भूषण ने 'साहू को सराहों कि सराहों कुत्रसाल को' कह कर प्रशंसा की है ।

‘ हृदयराम सुतरुद्र ’

शिवराज-भूषण के पद २८ से ज्ञात होता है कि 'साहस-शील-समुद्र चित्रकूट-पति हृदयराम सुत रुद्र सोलंकी ने भूषण पदवी दी' । 'तिनमें आये एक कवि भूषण कहियत ताहि' से यह भी स्पष्ट है कि यह पदवी इन्हें शिवाजी के दरबार में पहुँचने के पहिले प्राप्त हुई थी । जैसा अन्यत्र लिखा जा चुका है, यह सं०

१६२४ वि० के आस पास शिवाजी के दरबार में गए थे, इससे यह पदवी इन्हें इसके पहिले अवश्य मिली होगी ।

इसके सिवा स्फुट पदों के ३२ वें छंद में 'सुलंकी के पयान ते' कुछ प्रलय के चिन्ह से उत्पन्न होने का उल्लेख है । यही सुलंकी शब्द ऊपर के पद २८ में भी आ चुका है और इस कारण भूषण उपाधि देने वाले 'कलाँ' भूप की जीवनी पर कुछ विशेष प्रकाश नहीं डालता । इन दो के सिवा कवि जी ने अपने इस प्रथम आश्रयदाता के विषय में कुछ भी नहीं लिखा है और प्रत्येक पद में किसी घटना का आभास देने की जो इनकी विशेषता बतलाई जाती है वह ३२ वें छंद में कहीं दृष्टिगोचर भी नहीं होती । अब केवल अनुमान लड़ाना मात्र है । यह कोई साधारण राजा या बबुआने में से रहे होंगे, क्योंकि इस छंद में सेना का भी उल्लेख नहीं है, केवल एक सजे हुए घोड़े पर सवारी का प्रयाण होना कहा गया है । दूसरे भूषण जी के विषय में जो कि किंवदंतियाँ प्रचलित हैं उनसे यह ज्ञात होता है कि इनका मिज़ाज ऊँचा था और साधारण सत्कार से यह प्रसन्न नहीं होते थे । यह आश्रय-दाता महाशय इन्हें स्यात् केवल कोरो उपाधि देकर ही संतुष्ट रखना चाहते रहे होंगे, इससे इनके यहाँ विशेष समय न बिताकर तथा शिवाजी की प्रसिद्धि सुनकर यह उस ओर चल दिए होंगे । 'भूषण' उपाधि इनके मन की थी इससे उसे ग्रहण करने पर उसके दाता का उल्लेख कर देना इन्होंने उचित समझा । सुभाषित रत्नभांडागारम् में पृ० १२७ पर 'रुद्र' राजा की प्रशंसा में पाँच श्लोक दिए गए हैं, पर उनसे भी तथ्य निर्णय के लिए कोई आधार नहीं मिलता ।

रीवाँ का बघेला राजवंश सोलंकी है और इनके बबुआने में बर्दी के एक बाबू रुद्रशाह हो गए हैं जिनके पिता का नाम हरिहर

शाह था। रीवाँ गज़ेटिअर पृ० ८० से एक उद्धरण दिया जाकर यह दिखलाया गया है कि हरिहर शाह के छोटे भाई रुद्रसाह को वर्दी तहसील में बिजौरा इलाका मिला था, जिनके तीसरी पीढ़ी में मयूरशाह हुए। इन्होंने वर्दी को अपनी राजधानी बनाया। इनके सिवा एक दूसरे सोलंकी हृदयराम के पुत्र रुद्रराम का नाम भी लिया जाता है, जो गहोरा के अधिपति कहे जाते हैं। इन दोनों ही का समय निश्चित नहीं है और न किसी प्रकार यही निश्चित रूप से कहा जा सकता है कि इन्हींमें से किसी ने भूषण उपाधि कवि को दी थी। अस्तु, जब तक किसी विद्वान् अन्वेषक द्वारा ऐसे निश्चित 'हृदयराम सुत रुद्र' खोज न निकाले जायँ तब तक इस विषय पर तर्क करना कुतर्क मात्र होगा।

छत्रसाल तथा बुद्धसिंह हाड़ा

रावर्तल के पौत्र छत्रसाल का राज्यकाल (सं० १६८८ से सं० १७१४ वि०) तक है। इनके विषय में छत्रसाल दशक में दो दोहो आरंभ में दिए गए हैं, जिनमें इनकी प्रशंसा के साथ मुगल सम्राट् की अधीनता स्वीकार करने से इन पर कुछ आक्षेप सा किया है। इसके सिवा इनके विषय में भूषण ने और कुछ नहीं कहा है। इनके पुत्र भाऊसिंह सं० १७१४ वि० में गद्दी पर बैठे और सं० १७३४ वि० में इनकी मृत्यु हुई। इनके शिवाजी द्वारा पराजित होने तथा इनके जीवन की कई घटनाओं का भूषण ने उल्लेख किया है, पर इनकी प्रशंसा कहीं नहीं की है। भाऊसिंह के पुत्र नहीं थे, इसलिये इनके भाई भगवन्तसिंह के पौत्र तथा कृष्णसिंह के पुत्र अनिरुद्धसिंह गद्दी पर बैठे। औरंगज़ेब के दक्षिण जाने पर उत्तर में उसके प्रतिनिधि शाहआलम के अधीन कार्य करते

समय इनकी मृत्यु हो गई। इनके पुत्र राव बुद्धसिंह वूँदी के अधिपति हुए, जिनको प्रशंसा में भूषण ने दो पद कहे हैं जो स्फुट संग्रह में ३३ तथा ३६ संख्या पर दिए गए हैं।

एक में 'राव बुद्ध के तेग' की प्रशंसा है और दूसरे में 'बुद्ध' की सेना के प्रयाण का वर्णन है। किसी में भी बुद्धसिंह के राव-राजा पदवी का उल्लेख नहीं है। औरंगजेब की मृत्यु के पहिले ही यह वूँदी के राजा हो चुके थे और उसकी मृत्यु के समय इनका पूर्ण यौवनकाल था। सं० १७६४ वि० के जाजऊ युद्ध में इन्होंने औरंगजेब के सबसे बड़े पुत्र शाहआलम बहादुरशाह का पत्त लिया था। इस विजय के उपलक्ष में इन्हें रावराजा की पदवी मिली थी। सं० १७६८ वि० में बहादुरशाह की मृत्यु पर जहाँदार शाह बादशाह हुआ। नौ महीने बादशाहत करने के बाद यह मारा गया। इसका भतीजा फ़र्रुखसियर गद्दी पर बैठा और सं० १७७५ वि० में कैद किया गया। राव बुद्धसिंह इसी के राजत्व में इसकी दुर्दशा देखकर वूँदी चले गये। सैयदों से इनकी पटती नहीं थी, जिन्होंने फ़र्रुखसियर को गद्दी पर बिठाया था और जिनके हाथ में सब अधिकार चला गया था। वूँदी जाने पर इनके कई शत्रुओं ने मिल कर इनका राज्य भी छीन लिया और इसी अवस्था में इनका अंत भी हुआ। भूषण ने इनकी प्रशंसा इनके उन्नत अवस्था ही के समय की होगी। जहाँदार शाह की मृत्यु पर दिल्ली में इनका विशेष कुछ भी अधिकार नहीं रह गया था, इससे सं० १७६६ वि० के पहिले ही यह प्रशंसा की गई होगी। रावराजा * पदवी इनके लिए नहीं थी और यदि

* सम्राट् जहाँगीर ने रावरल हाड़ा को रावराजा तथा सर बुलंद राय की पदवियाँ दी थीं, जिसका उल्लेख इक़बाल-नामए जहाँगीरी में है।

भूषण जो उस उपाधि-प्राप्ति के बाद प्रशंसा करते तो अवश्य उसका उल्लेख करते, पर उन्होंने वैसा नहीं किया है। 'और राघराजा एक मन में न ल्याऊँ अब साहू को सराहों कै सराहों कुत्रसाल को' में इन्हीं राघराजा से तात्पर्य लेना अनुचित मालूम होता है। राघ तथा राजा अर्थ लेना ही समीचीन है। वाक्य-योजना से भी यही अर्थ ठीक ज्ञात होता है। पूर्वोक्त दो कवित्तों में एक में 'भूषण' उपनाम भी नहीं आया है और पं० मायाशंकर याज्ञिक बी० ए० की सम्मति में यह लाल कलानिधि कृत है। अब केवल एक कवित्त रह गया सो भी स्फुट संग्रह ही में है। इसमें 'भूषण' उपनाम दिया है, पर यह अवश्य भूषणकृत है यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता।

जयपुर नरेशगण

भूषण ने जयपुर राजवंश के पाँच पीढ़ियों का उल्लेख स्फुट कुंद ४० में किया है। इसका भाव यह है कि 'अकबर ने भगवंत सिंह के पुत्र (राजा मानसिंह) से तथा उनके पुत्र जगतसिंह से मान पाया था। उसी प्रकार जहाँगीर ने महसिंह जी से और शाहजहाँ ने प्रसिद्ध जयसिंह से प्रतिष्ठा पाई। अब औरंगजेब ने रामसिंह जी से पाया है और आगे भी बराबर कूर्मवंशीय राजाओं को मानने से प्रतिष्ठा पाता रहेगा। अर्थात् जब और राजे राय आदि बादशाह से प्रतिष्ठा प्राप्त करते हैं, तब बादशाह मानसिंह के घराने से प्रतिष्ठा पाते हैं।' इस पद के पढ़ने से यह स्पष्ट मालूम

(देखिए मन्नासिरुल् उमरा फा० भा० २ पृ० २०८६) अकबर ने यह पदवी रावसुर्जन को पहिले पहिल प्रदान की थी।

हो जाता है कि भूषण रामसिंह जी की प्रशंसा कर रहे हैं। पायो भूतकाल, अब वर्तमान काल तथा पैहें भविष्य काल बतला रहा है।

स्फुट संग्रह ब्रंद ४२ में 'भूपाल जयसिंह' का वर्णन है। यह मिर्जाराजा जयसिंह प्रथम हैं या मिर्जाराजा सवाई जयसिंह द्वितीय हैं, इसमें कुछ सज्जनों का मतभेद है। सम्राट् अकबर ने मिर्जाराजा की पदवी राजा मानसिंह को वंशपरम्परा के लिये दी थी और उनके बाद के सभी राजे इस उपाधि को धारण करते रहे हैं। सवाई पदवी स्वयं जयसिंह द्वितीय को मिली थी। इस लिए इस ब्रंद में प्रथम उपाधि का न रहना जयसिंह प्रथम के मानने में आपत्ति नहीं करता; प्रत्युत् द्वितीय उपाधि का न रहना दूसरे जयसिंह मानने में शंका अवश्य उत्पन्न करता है। इस ब्रंद में दोनों उपाधियाँ नहीं हैं। इसका कारण भूषण का राष्ट्रवादी होना कहा गया है, पर यह भी भूल है। मिर्जा, सवाई, शरजा, गाजी आदि मुसलमानों द्वारा दी गई, या जान बूझ कर अपहरण की गई उपाधियाँ भूषण द्वारा बराबर प्रयुक्त हुई हैं। शाह शब्द फारसी हो पर साह शब्द फारसी नहीं है। उस पर भूषण ने फारसी 'शाह' शब्द का भी अनेकों बार प्रयोग किया है। शिवा जी के पिता शाह जी का नाम मुसलमान फकीर का द्योतक ही है, क्योंकि इनका जन्म शाह जी ही की दुआ से हुआ माना गया था। भाऊसिंह को 'भाऊ खान' तक बना डाला गया है। अस्तु, तात्पर्य यही है कि कम से कम इस ब्रंद से यह मान लिया जा सकता है कि यह किसी जयसिंह के विषय में कहा गया है, पर जयसिंह द्वितीय की ही इसमें प्रशंसा है यह किसी प्रकार इससे प्रमाणित नहीं होता और न ऐसा किसी ने किया ही है।

शिवराज भूषण के ब्रंद २१२—२१३ में 'मिर्जा जयसाह' के

परास्त होने पर शिवाजी द्वारा दुर्गों के दिए जाने का उल्लेख किया गया है। इन दो छंदों तथा पूर्वोक्त दो छंदों में से प्रथम में स्पष्टतः जयसिंह प्रथम ही का वर्णन है। इनमें एक में मिर्जा उपाधि भी दी गई है और 'सवाई' उपाधि भी भूषण ने शिवाजी के लिए एक बार छंद २२१ में प्रयुक्त किया है। अर्थात् उन्होंने इस शब्द को विदेशीय द्वारा दिए जाने के कारण बायकाट भी नहीं किया है। इस प्रकार यही निश्चित है कि भूषण ने जयसिंह प्रथम ही के विषय में कविता की है। इन प्रसिद्ध नरेशों का संहितितम परिचय परिशिष्ट च में दिया गया है।

यदि तर्क के लिए एक छंद में जयसिंह द्वितीय भी मान लिए जायें तो भी भूषण के समय निश्चय करने में कोई हानि नहीं होती। रामसिंह की मृत्यु पर विष्णुसिंह गद्दी पर बैठे, पर इनकी भी शीघ्र ही मृत्यु हो गई। सं० १७५५ वि० में जयसिंह द्वितीय गद्दी पर बैठे। इन्होंने मालवा का सूबा बाजीराव को दिया था। इन्होंने टांड के अनुसार पचपन वर्ष राज्य किया था, पर प्रो० सर्कार ने इनकी मृत्यु सन् १७४३ ई० में लिखी है।

बाजीराव

स्फुट संग्रह पद सं० ५८ में पन्नानरेश छत्रसाल को सहायता देने वाले बाजीराव की प्रशंसा की गई है। सं० १७६० वि० में यह घटना हुई थी। इस छंद में भूषण उपनाम नहीं आया है, इसलिए केवल इस छंद के कारण, जो संदिग्ध है, भूषण के समय को सं० १७६० तक खींच लाना ठीक नहीं है। छत्रसाल बुंदेला की प्रशंसा में जितने छंद कहे गए हैं, उनमें से किसी में भी बंगश की

चढ़ाई तथा मराठों की सहायता से उसके पराभव का उल्लेख नहीं हुआ है।

शंभा जी की प्रशंसा में कहे गए एक कवित्त की (स्फु० सं० पद २८) अंतिम पंक्ति यों है—

बाजी सब बाज से चपेटें चंग चहुँ ओर,
तीतर तुरुक दिल्ली भीतर बचें नहीं।

इसका पाठान्तर बतलाया जाता है कि 'बाजी सब' के स्थान पर 'बाजीराव' होना चाहिए। पर इसके साथ तीसरी पंक्ति का भी कुछ पाठान्तर होना चाहिए, नहीं तो वास्तव में कुल पद ही निरर्थक हो जाता है। वह पंक्ति यों है—

भूपन जू खेलत सितारे में सिकार संभा,
सिवा को सुवन जाते दुवन सँचै नहीं।

शिवाजी के पुत्र शंभा जी के समय बाजीराव का जन्म भी नहीं हुआ था। शंभा जी के मारे जाने के आठ वर्ष बाद उनका जन्म हुआ था। इसलिए 'राव' के स्थान पर 'सब' ठीक तथा सार्थक है और इसमें बाजीराव की प्रशंसा नहीं की गई है।

साहू की प्रशंसा में कहे गए कुं० २० (स्फु० सं०) में सिंधुप्रांत के सक्कर तथा बक्कर तक, मालवा के सिरौज तथा दिल्ली तक मराठी सेना के पहुँचने का वर्णन किया गया है। साहू वास्तव में अपनी राजधानी में रहा करते थे और केवल एक बार छोड़ कर नाम मात्र के लिए भी कभी किसी लड़ाई पर नहीं गए। इनके सेनापतिगण ही बराबर भेजे जाते थे। यह सं० १७६४ में गद्दी पर बैठे थे और बाजीराव सं० १७७७ वि० में द्वितीय पेशवा हुए थे। इसके पहिले इनके पिता बाला जी विश्वनाथ पेशवा थे। उनके समय में खंडेराव दाभदे ने, जो साहू जी के एक सेनापति थे, गुजरात पर अधिकार कर लिया था और वह मुगल सेनाओं को परास्त कर

भगा देते थे। इनकी सेनाएँ सिंध में भी लूट मचाती रहती थीं। सं० १७७५ में बाला जी विश्वनाथ ससैन्य दुसेन अली खाँ के साथ मालवा होते दिल्ली गए और अपने अनुकूल संधिपत्र पर बादशाही हस्ताक्षर करा लाए थे। इस प्रकार इस छंद से भी बाजीराव ही की दिल्ली पर की चढ़ाई का वर्णन नहीं प्रकट होता, क्योंकि उसके पहिले की चढ़ाई का वर्णन भी हो सकता है। उस छंद में केवल एक व्यक्ति का नाम आया है, जो इन दोनों पिता-पुत्र के लिए समान रूपेण स्वामी था।

तात्पर्य यह है कि पूर्वोक्त विचारों से यही स्पष्ट होता है कि भूषण ने बाजीराव द्वितीय के लिये कविता नहीं की थी। जब तक भूषण की और रचनाएँ इनका स्पष्ट उल्लेख करते हुए न प्राप्त हों तब तक के लिए यही धारणा ठीक है।

दाराशाह तथा औरंगजेब

स्फुट-संग्रह में तीन पद ३७, ३८ तथा ४१ संख्याओं पर दिए गए हैं, जिनमें प्रथम दो में औरंगजेब पर सत्य कटाक्ष किए गए हैं और तीसरे में दाराशाह की सेना का वर्णन है। प्रथम दो में दारा का उल्लेख किया गया है। तीसरे में दाराशाह के पहिले जहाँ शब्द आया है जिसके भित्ता देने से जहाँ दाराशाह या जहाँदाराशाह नाम निकलता है। यह जहाँदाराशाह नौ महीने के लिए दिल्ली की गद्दी पर बैठा था। इसको गद्दी पर बिठाने वाला जुल्फिकार खाँ था। इसने स्वयं एक युद्ध भी अपने जीवन में नहीं किया था। यह अत्यन्त लंपट था और राजकार्य कुछ भी नहीं देखता था। भूषण से कवि ने इसके लिए कविता कभी न की होगी। औरंगजेब की निंदा करते समय भूषण ने दारा के प्रति विशेष

सहानुभूति दिखलाई है और दारा शिकोह भी इस योग्य था। उसकी धार्मिक उदारता, शीलसौजन्य आदि गुण उसे इस प्रशंसा का पात्र बनाते हैं। इसके समय मुगल साम्राज्य अपनी पूर्ण उन्नत अवस्था में था और इसे कई भारी भारी सेनाओं की अध्यक्षता भी मिली थी। उक्त छंद में दाराशाह ही की प्रशंसा है।

अज्ञात आश्रयदातागण

स्फुट संग्रह के तीन पदों ३४, ३६ और ४३ में तीन सज्जनों की प्रशंसा है। पहिले में 'अवधूतसिंह जा दिन दल साजि चढ़त ता दिन कमठ की पीठि पै पिठो सी बांटियतु है'। यह अवधूत सिंह कौन हैं उसका इसमें कोई उल्लेख नहीं है और न इससे इनके जीवन की किसी विशिष्ट घटना की सूचना मिलती है। एक रीवांनरेश अवधूतसिंह नाम के हो गए हैं, जिनका प्राप्त परिचय परिशिष्ट च में दिया गया है।

दूसरे में हाथियों की भूरि भूरि प्रशंसा की गई है और अंत में उन्हींका एक स्तुति वाक्य इस प्रकार दिया है कि 'गुंजरत कुंजर कुमाऊँ नरनाह के'। कुमाऊँ के राजवंश में एक ही राजा हुए ही नहीं थे कि इसमें उन्हींका उल्लेख मान लिया जाय। यह छंद उस राजवंश के सभी राजाओं के लिए समान रूप से कहा हुआ माना जा सकता है, इसलिए इस छंद के कर्ता का समय इससे निश्चित नहीं किया जा सकता है।

तीसरे में मेंडू के पौरचनरेश अमरेश जी के पुत्र अनिरुद्ध के यश का कीर्तन है। इन पिता पुत्र के विषय के कुछ निश्चित रूप से ज्ञात नहीं हो सका और इसलिए इनके संबंध में कुछ नहीं लिखा जा सकता।

इन तीनों छंदों के विषय में यह भी शंका होती है कि जिन भूषण ने यह गर्वोक्ति कही थी कि 'और राव राजा एक मन में न ल्याऊँ अब साहू को सराहौँ कि सराहौँ छत्रसाल को' क्या वे इस प्रकार के अज्ञात लोगों की प्रशंसा करते घूमते थे। जो हा, ये छंद संदिग्ध अवश्य हैं।

४—रचनायें

महाकवि भूषण की रचनाओं के नाम शिवसिंह सरोज आदि ग्रन्थों में इस प्रकार दिये हैं, (१) शिवराजभूषण (२) भूषण हजार (३) भूषण उल्लास (४) दुषण उल्लास। केवल प्रथम पुस्तक प्रकाशित हो चुकी है तथा अन्य तीन अभी तक अप्राप्त हैं। अभी तक प्रकाशित भूषण ग्रन्थावलियों में शिवराजभूषण को छोड़ कर अन्य दो संग्रह शिवाबावनी तथा छत्रसाल दशक के नाम से प्रकाशित हुए हैं और इनके सिवा स्फुट पद भां लगभग पचास के संगृहीत हो चुके हैं। अब यह कहना कि ये दोनों संग्रह स्वतंत्र रचनायें हैं या किसी बड़े संग्रह के अंश मात्र हैं, कुछ कठिन है और जब तक पूर्वोल्लिखित अन्य ग्रन्थ प्राप्त न हों कोई सम्मति देना सारहीन ही है। भूषण से प्रतिभाशाली तथा दीर्घजीवी कवि के लिये उनकी प्राप्त कविता बहुत कम है और आशा है कि खोज से अन्य रचनाएँ भी उपलब्ध होकर इनके जीवन तथा समय आदि पर प्रकाश डालती हुई हिन्दी साहित्य-भांडार को और भी समुज्ज्वल करेंगी। अब इनकी प्राप्त रचना पर विचार किया जायगा।

(१) शिवराज भूषण—भूषण जी का एक यही ग्रन्थ सम्पूर्ण प्राप्त है। यह अलंकार ग्रन्थ है। इसमें एक सौ नौ अलंकारों के लक्षण तथा उदाहरण दिए गए हैं, पर कवि ने स्वयं पद ३७१ से

३७६ तक जो अलंकारों की नामावली दी है उसमें एक सौ पाँच अलंकारों का नाम दिया है और लिखा भी है कि 'एक सत्र भूषण कहे अरु पाँच।' लुप्तोपमा, न्यून-अधिक रूपक तथा गम्यात्प्रेक्षा ये चार वर्णित हैं, पर सूची में उनका नाम नहीं आया है। वे भूषणकृत अवश्य हैं, जैसा कि लक्षण तथा उदाहरणों से ज्ञात होता है। स्यात् कवि ने उन्हें उपमा आदि प्रधान अलंकारों के अंतर्गत समझ कर उनका पृथक् नाम नहीं दिया है। इस ग्रन्थ में जितने उदाहरण दिए गए हैं उनमें शिवाजी के जीवन की घटनाओं तथा उनके प्रभुत्व और आतंक ही का वर्णन पाया जाता है। इसी से कवि ने इस ग्रन्थ का यह नामकरण किया है। कवि लिखता ही है कि —

शिव चरित्र लखि यों भयो कवि भूषण केचित्त ।
 भाँति भाँति भूषणनि सों भूषित करों कवित्त ॥
 सुकविन हूँ की कछु कृपा समुझि कविन को पंथ ।
 भूषण भूषणमय करत शिव-भूषण सुभ ग्रन्थ ॥

भूषण जी इस ग्रन्थ की रचना का कारण भी इन दोनों दोहों में यों लिखते हैं कि 'मेरे हृदय में शिवाजी के चरित्र को देख कर यह भाव उठा कि कवित्त को अनेक प्रकार के अलंकारों से सज्जित करूँ। इसलिए सुकवियों की कृपा से उन्हीं के मार्ग का अच्छी तरह मनन कर मैं शिवराज-भूषण नामक अलंकारमय ग्रन्थ बनाता हूँ।' इससे यह स्पष्ट ज्ञात होता है कि भूषण जी ने शिवाजी के चरित्र को देख कर इस ग्रन्थ के बनाने का विचार किया था। 'लखि' शब्द आँखों देखे वर्णन का द्योतक है, पर उससे यह ध्वनि नहीं निकल सकती कि जो कुछ वर्णित है सभी उन्होंने अपनी आँखों देख कर लिखा है। तात्पर्य केवल इतना ही है कि जिस प्रकार वे शिवाजी की प्रसिद्धि तथा यश सुन कर

उनके दरबार में आये थे उसी प्रकार वैसा ही उनका सुचरित्र देखकर उन्होंने इस ग्रंथ को शिवाजी के नाम पर बनाना उचित समझा था ।

शिवराज-भूषण ग्रन्थ में प्रायः एक दर्जन घटनाओं का उल्लेख मिलता है, जिनमें किसी किसी पर आठ दस पद तक कहे गये हैं और किसी किसी का केवल एक पद में भी उल्लेख मात्र कर देना काफी समझा गया है । इन घटनाओं की एक तालिका नीचे दी जाती है, जिससे देखा जाता है कि ये घटनाएँ सं० १७१३ से सं० १७२६ तक (सन् १६४६ ई० से सन् १६७२ ई० तक) के बीच की हैं । साथ ही यह भी देखा जाता है कि इन घटनाओं का वर्णन क्रमबद्ध नहीं है और सं० १७२३ वि० में शिवाजी के दिल्ली से प्रत्यागमन के बाद से सं० १७२७ वि० तक की किसी घटना का उल्लेख नहीं मिलता । इस बीच परिशिष्ट ड के अनुसार देखा जाता है शिवाजी भी अपने राज्य के दृढ़ करने में लगे थे और मुगलों से संधि कर रखा था । सं० १७२७ ही से फिर युद्ध आरंभ हुआ है । शिवराज - भूषण अलंकार ग्रन्थ है, इतिहास ग्रंथ नहीं है इस लिये सूदन के सुजानचरित्र तथा लाल के कृत्रप्रकाश सद्गुण क्रमबद्ध इतिहास या घटनावली का इसमें अन्वेषण करना बुद्धिमानी नहीं है । जिस समय भूषण जो इस ग्रंथ को लिखने बैठे थे ' उस समय सब अलंकारों में उपमा ही को उन्होंने उत्तम समझ कर उसीमे आरंभ किया था ' । इसके उदाहरणों में भूषण ने सं० १७२७ वि० की या इसके पहिले की घटनाओं का उल्लेख किया है । कवि घटनाओं का वर्णन करना ही नहीं चाहता, वह उनके उल्लेख मात्र शिवाजी का यश कीर्तन करने के लिये करता है । जिन घटनाओं का इस ग्रंथ में उल्लेख हुआ है, उनकी तालिका इस प्रकार है—

सं०	घटना	पद-संख्या	विशेष सूचना
१	शाहजहाँ के चारों पुत्रों का राज्य के लिए युद्ध करना तथा दारा, शुजाअ और मुराद की हार।	२१७,३४, बा०	सं० १७१५ (सन् १६५८ ई०)
२	अफज़ल खाँ का मारा जाना, बारह सहस्र सवार सेना का पार तथा जावली के बीच प्रतापगढ़ के नीचे नष्ट होना।	४२,६३, १६,३३७, २८ बा०, ३१ बा०, ११ स्कु०	सं० १७१६ (सन् १६५९ ई०)
३	परनाला दुर्ग विजय करना।	१०७,१७८, २०७,२५४, २८ बा०	सं० १७१७ (सन् १६६० ई०)
४	पूना में शायस्ता खाँ की दुर्दशा।	१८६,३२३, ३३७,२६ बा०	सं० १७२० (सन् १६६३ ई०)
५	सुरत की लूट—घर्णन से प्रथम लूट ही ज्ञात होती है।	२००,३३४, ३५४,७ स्कु०	सं० १७२१ (सन् १६६४ ई०)

सं०	घटना	पद-संख्या	विशेष सूचना
६	जयसिंह से हार कर गढ़ों के देने का उल्लेख ।	२१२, २१३	सं० १७२२ (सन् १६६५ ई०)
७	शिवाजी का दिल्ली जाना और वहाँ से लौट आना ।	३४, ३८, ७६, १४८, १८६, १६८, २०४, २०६ ३०६, ३१०, १४ बा०, १५ बा०, २ स्फु०, ५७ स्फु०	सं० १७२३ (सन् १६६६ ई०)
८	सिंहगढ़ का ताना जी मालूसरे द्वारा लिया जाना और उदैमान राठौर का मारा जाना ।	१००, २८५	सं० १७२७ (सन् १६७० ई०)
९	सलहरे युद्ध— अमरसिंह का मारा जाना ।	६७, १०३, १०७, २२५, २२६, २३६, २७५, २६२, ३३१, ३५६, २४ बा०	सं० १७२८ (सन् १६७१ ई०)
१०	रामनगर, जघारि तथा रामगिरि का विजय होना ।	१७३, २१३	सं० १७२९ (सन् १६७२ ई०)

इसके अनंतर यह भी देखना चाहिए कि जिन स्थानों का उल्लेख हुआ है, उनमें भी इस ग्रंथ के रचनाकाल के निर्धारण में कुछ सहायता मिलती है या नहीं। ऐतिहासिक तथ्य-निर्धारण में कवि-कल्पना मात्र से कुछ भी सहायता नहीं मिल सकती। केवल स्पष्ट उल्लेख ही ऐतिहासिक क्षेत्र में प्रमाण माने जा सकते हैं। एक बात जो मान्य हो चुकी है, चाहे वह किंवदंती ही के निर्वल आधार पर ही स्थित हो, उसे संदिग्ध या भ्रमपूर्ण या अशुद्ध प्रमाणित करने के लिए प्रबल तथा अकाट्य प्रमाण देना ही उचित है। खींचातानी करके अर्थ निकालने से प्रमाण निर्वल हो जाते हैं। अस्तु, खंड नं० ११२ में नौ स्थानों का उल्लेख है। कवि का भाव यही है कि, इन स्थानों के तथा 'जे पूरव पछाँह नरनाह ते' सभी दिल्लीपति के शरणागत हैं, ऐसे उस धिजयी औरंगजेब को जीतने वाले शिवाजी अद्वितीय हैं। खंड १५६ में पाँच स्थानों का उल्लेख है और वही भाव है। खंड ११७ में ग्यारह स्थानों का नाम दिया है और १७३ में ६ का दिया गया है। दोनों ही में शिवाजी का आतंक-वर्णन मात्र अभिप्रेत है। आगरे-दिल्ली में कब बेगमों ने सिंदूर लगाया होगा और बलखरूम तक की सेना कब विचलित हो उठी होगी, इसे कवि की कल्पना-शक्ति का साधारण उड़हान समझिए। हबश देश तो दूसरे महाद्वीप अफ्रीका में स्थित है। यह सब कथन अपने नायक के प्रभुत्व की अतिशयोक्ति मात्र हैं। खंड २०६ में पाँच स्थान का नाम देते हुए विषम अलंकार का उदाहरण रचित हुआ है। इसी प्रकार २०७ में परनाला तथा कर्णाटक का उल्लेख कर 'सुकुमार राजकुमारों को विकरार पहार' में दौड़ा कर विषमता लाई गई है। इसमें 'लै परनालो शिवा सरजा करनाटक लौं सब देस बिगूँचे।' पर यह तर्क है कि लौं=तक का प्रयोग कवि ने किस अर्थ में किया है, मर्यादाके

पार्थक्य या अभिविधि के संयुक्तता अर्थ में। इस त्रुंदांश का अर्थ यह हुआ कि 'शिवाजी ने परनाला से लेकर कर्णाटक तक के सब देश विध्वंस कर दिए।' कर्णाटक कृष्णा नदी की घाटी से रासकुमारी तक फैला हुआ है। (भारत साम्राज्य का नया भूगोल, सौरिसन पृ० ११६) इसी नदी की दो सहायक नदियाँ घर्णा तथा हिरण्यकेशी के बीच में परनाला दुर्ग स्थित है। ये दोनों नदियाँ भी कृष्णा की प्रधान धारा के दक्षिण में हैं। प्रो० सरकार 'शिवाजी' के द्वितीय संस्करण पृ० २३७ पर लिखते हैं कि 'दक्षिण में शिवाजी की शक्ति सन् १६७३ ई० में पन्हाला तथा सन् १६७५ ई० में कोल्हापुर और पांडा विजय कर लेने से दृढ़तापूर्वक स्थापित हो गई। इस प्रकार उनके राज्य की सीमा सन् १६७५ ई० में कोल्हापुर होकर पश्चिमी कर्णाटक या कनारा प्लेटो में दूर तक पहुँच गई थी।' वास्तव में परनाला या पन्हाला पश्चिमी कर्णाटक की सीमा के भीतर है। इसीलिए कवि कहता है कि शिवाजी ने पन्हाला दुर्ग लेकर कर्णाटक तक अपना राज्य फैलाया। यदि तक से कर्णाटक के विध्वंस होने का अर्थ भी लिया जाय तो वह भी ठीक है, क्योंकि पन्हाला उस प्रांत के अंतर्गत ही है। हाँ, समग्र कर्णाटक का अर्थ लिया जाय तो फिर सन् १६७७—८ ई० की प्रसिद्ध चढ़ाई का इस पद में उल्लेख समझना चाहिए, पर ऐसा समझने के लिए कोई विशेष कारण नहीं दिखलाई पड़ता। शिवराज-भूषण में ग्रन्थ की समाप्ति का समय एक दोहे में दिया है। उसमें दिन, तिथि, पक्ष, मास तथा संवत् सभी दिए हैं, जिसकी जाँच की जा सकती है। 'सुचि' शब्द दो मास का द्योतक है—ज्येष्ठ तथा आषाढ़ का। सं० १७३० वि० अर्थात् सन् १६७३ ई० में यह ग्रंथ समाप्त हुआ है, इसलिए कर्णाटक की चढ़ाई का उल्लेख नहीं हो सकता। केवल 'लौ' शब्द मात्र का एक अर्थ लेकर समय के दोहे को

अशुद्ध कहना अनुचित है जब कि दूसरा अर्थ सब प्रकार समीचीन है ।

इस ग्रंथ के रचनाकाल अर्थात् समाप्ति का दोहा भूषण ने इस प्रकार दिया है—

सुभ सत्रह सै तीस पर सुचि बदि तेरस भान ।

भूपन शिवभूपन कियो पहियौ सकल सुजान ॥

अभी तक 'सुचि' शब्द का अर्थ न समझ कर, इस दोहे में महीना नहीं दिया गया है ऐसा मान कर इस में दिए हुए समय की जाँच नहीं हुई थी और इससे कुछ लोग इस दोहे ही को भूषण-कृत नहीं मानते थे, पर यह हठ मात्र था । यह भूषणकृत ही है क्योंकि उनका उपनाम भी इसमें दिया हुआ है और समय भी जाँच में ठीक उतरता है । ज्येष्ठ कृष्ण १३ सं० १६३० को रविवार ही था । उस दिन शकाब्द का वैशाख वदी १३ सं० १५६५ और खृष्टाब्द का ४ मई सन् १६७३ ई० था । यह जाँच भारत-संस्कार की आर से मंदराज से प्रकाशित सहस्र वर्षीय बृहत पंचांग देख कर किया गया है और इसे काशी नागरी-प्रचारिणी सभा के खोज विभाग के निरीक्षक रायबहादुर बा० होरालाल बो० ए० ने किया है ।

वृ० २१३ में पाँच स्थानों का उल्लेख है, जो बीजापुर तथा गोलकुंडा राज्य में हैं । मिर्जा जयसिंह से परास्त होकर शिवाजी ने अपने पैतृसिद्ध दुर्गों में से तेईस दुर्ग दिए थे इसका भी इसमें उल्लेख किया गया है । वृ० २४६ में विकल्प करते हुए भूषण जी कहते हैं कि चाहे इन सात स्थानों में जाओ या इन तीन सुलतानों के यहाँ जाओ, पर मन चाहा तभी मिलेगा जब शिवाजी को प्रसन्न करोगे । यह तो अवश्य ठीक है कि भूषण ने प्रायः भारत के सभी

प्रसिद्ध आश्रयदाताओं ही का इस पद में उल्लेख किया होगा, पर इन सब ने उनको आश्रय दिया हो, यह कहना अशुद्ध है। इनमें केवल तीन की प्रशंसा में इनके कुछ छंद पाए जाते हैं, अन्य के लिए वह भी नहीं। कुमाऊँ नरनाह का नाम तक न देकर उनके हाथियों की अवश्य प्रशंसा की गई है। जांभपुर-नरेश तथा दिल्ली पर तो आक्षेप ही किए गये हैं।

शिवराजभूषण पद २५६ में लोहगढ़ दुर्ग का इस प्रकार उल्लेख है 'गौर गरबीले अरबीले राठवर गहो लोहगढ़ सिंहगढ़ हिम्मत हरषते। भूपन भनत तहाँ सरजा सिवा तैं चढो राति के सहारे ते अराति अमरपते'। इस पद का भाव है कि घमंडी गौड़ तथा हठी राठौड़ ने बड़े साहस तथा प्रसन्नता से क्रमशः लोहगढ़ और सिंहगढ़ की अध्यक्षता ग्रहण कर ली थी, पर फल अंत में यही हुआ कि शत्रु पर क्रोध करके शिवाजी रात्रि के समय दोनों दुर्ग पर चढ़ गए अर्थात् विजय कर लिया। सिंहगढ़ विजय का इतिवृत्त प्रसिद्ध है और कई इतिहासों में उसका उल्लेख है। इस पर एक पोवाड़ भी लिखा हुआ प्राप्त है, पर लोहगढ़ विजय का वृत्त इतिहासों में विशेष रूप से नहीं मिलता। इसका वृत्तान्त न जान कर कुछ संपादकों ने इसका अर्थ लोहा गहा लगा लिया है। यह दुर्ग पहिले अहमदनगर के निजामशाही राज्य के अधीन था और इसमें प्रायः राजनैतिक कैदी रखे जाते थे। सन् १६४७ ई० में शिवाजी ने लोहगढ़, राजमाची आदि दुर्गों पर पहिली बार अधिकार कर लिया था जिसे सन् १६६५ ई० की संधि के समय मुगल सम्राट के तेईस दुर्गों के साथ दे दिया था। सन् १६७० ई० मुगलों से पुनः युद्ध आरंभ होने पर इस पर शिवाजी ने दूसरी बार अधिकार कर लिया था। सिंहगढ़ का मुगल दुर्गाध्यक्ष उदयभानु राठौड़ था और भूषण के अनुसार लोहगढ़ का अध्यक्ष कोई गौड़ राजपूत वीर

रहा होगा। प्रो० सर्कार ने ' शिवाजी ' पृ० १२५ पर दिलेर खाँ के साथ हरिभानु तथा उदयभानु गौड़ के होने का उल्लेख किया है, जब वह सन् १६६५ ई० में पुरंधर दुर्ग घेरे हुए था। इसी घेरे में राजा नरसिंह गौड़ और राजसिंह गौड़ भी उपस्थित थे। राजा बिठ्ठलदास गौड़ के भाई गिरिधरदास भी दक्षिण में नियुक्त थे और उन्हीं के भ्रातृपुत्र राजा मनोहरदास शिवाजी द्वारा सुपुर्द किए हुए तेईस दुर्गों में से एक माहुली दुर्ग के अध्यक्ष थे। इस प्रकार देखा जाता है कि उस समय कई गौड़ सदाँर दक्षिण में मौजूद थे और उन्हीं में से कोई एक लोहगढ़ का भी अध्यक्ष रहा होगा, जिससे जेधेशकावली के अनुसार सन् १६७० ई० में यह दुर्ग विजय किया गया था। ये दोनों दुर्ग पास पास हैं और शिवाजी द्वारा वे दोनों ही बार प्रायः एक ही समय में लिए गए थे, इसीसे कवि ने दोनों के विजय का एक साथ वर्णन किया है। सिंहगढ़-विजय में ताना जी की अभूतपूर्व वीरता के आगे इस दुर्ग के विजय की ख्याति मंदी पड़ गई, जिससे न इतिहासज्ञ ही ने और न कवि ने इस पर अधिक लिखा।

क्र० २६१ में विलायत और पुर्तगाल के ' पेसकर्स ' भेजने का उल्लेख होने से कर्णाट सहम जाता है अर्थात् उस पर शिवाजी का अधिकार नहीं है। ठेक एवं लाट अनुप्रास के उदाहरणों में भूपण जी ने शब्दों की पिच्चीकारी का अच्छा आदर्श उपस्थित किया है। इसमें एक स्थान पर भड़ोच का नाम भी आया है। इसमें सूरत के लूटे जाने पर वहाँ के निवासियों में क्या डर समाई थी, इसका वर्णन है। इस क्र० ३५४ का भाव यह है कि ' शिवाजी ने दिल्ली की सेना को परास्त कर निशंक हाँडंका बजाते दिन दहाड़ें सूरत नगर लूट लिया, जिससे दुष्टों (वहाँ के निवासियों) को पेसी डर हुई कि वे सोचने लगे कि अब भड़ोच चले चलिए। आँखों से

आँसू गिराते हुए उन्होंने कष्ट से यही निश्चय किया कि रथ को ठेलो। इससे दिल्ली की सब दिशाओं में बड़ी भद्द हुई।' इसमें शिवाजी के या मराठों के भड़ोच लूटने का गंध भी नहीं है। साथ ही भड़ोच और सूरत केवल नर्मदा ही के इस पार उस पार नहीं हैं; प्रव्युत् और एक नदी ताप्ती तथा एक पहाड़ सतपुड़ा भी बीच में है। पर इनके बीच में रहते हुए भी दोनों में केवल तीस पैंतीस मील की दूरी है। दां दां बार सूरत के लूटे जाने पर यदि भड़ोच के निवासी डर भा जाँय तो कोई शंका की बात नहीं है। शिवाजी का समुद्री बेड़ा सारे मलाबार तट का दौरा लगाता था और ये दोनों स्थान समुद्री तट पर हैं। सन् १६७० ई० में 'शिवाजी ने सूरत की लूट से तीस सहस्र नई सेना और एक शक्तिशाली बेड़ा तैयार किया। अंतिम (अर्थात् बेड़े) के साथ इन्होंने गुजरात तट की ओर भड़ोच तक जाने का रंग दिखलाया। मुगलों ने सूरत की दो बार की लूट के समान भड़ोच पर इस बार लूट की मराठा चढ़ाई की आशंका करके जितनी हो सकी कुल सेना गुजरात में भेज दिया। शिवाजी यही चाहते थे और अब वे अपनी सेना-सहित खानदेश लूटने चले गए।' (पारसनीस किनकेड कृत 'ए हिस्टरी आव मराठा पीपुल' भाग १ पृ० २३५) अर्थात् सूरत की चढ़ाई के बाद ही भड़ोच की चढ़ाई का भी शोर मच गया था।

अब शिवराज-भूषण ग्रंथ में, भूषण की अन्य कृतियों में नहीं, आए हुये कुछ ऐतिहासिक व्यक्तियों की जीवन घटनाओं से मित्रान कर यह विवेचना कर लेनी हांगी कि कवि के दिए हुए रचना-काल से उन सब का सामंजस्य हो सकता है या नहीं। इस ग्रंथ के रचनाकाल को आगे पीछे हटाने के लिए बहुत कुछ तर्क वितर्क हो चुका है; पर उनमें दो एक बातें ऐसी थीं जिनसे

उनका आधा महत्व निकल जाता है। प्रथम तो यही है कि जब तक शिवराजभूषण के रचनाकाल का हो रहा है तब इस ग्रंथ के अतिरिक्त भूषण की अन्य रचनाओं को उद्धृत कर उसे अशुद्ध प्रमाणित करने का प्रयत्न किया गया है। यहाँ तक देखा गया है कि जब पाद - टिप्पणी में ' शिवराजभूषण पृ० १६१ ' लिखा है तब भूषण ग्रंथावली उठा कर देखने से ज्ञात होता है कि उसके कई पृष्ठ पहिले वह ग्रंथ समाप्त हो चुका है और वह उद्धृत पद या पदांश बावनी या स्फुट का है। यह क्या है? इसका नामकरण न करना ही अच्छा है। दूसरे यह भी देखा जाता है कि जिस ग्रंथ की रचना केवल किसी एक व्यक्ति की प्रशंसा में हुई है और जिसका नाम भी उस पद विशेष में दिया हुआ है, उसे छोड़ किसी अन्य पुरुष से उस ग्रंथ के ऐसे पद में वर्णित घटना का संबंध स्थापित कर बराबर कुतर्क किया गया है। ऐसी बातों का कुछ उल्लेख आगे हुआ है।

खवास खाँ

शिवराज-भूषण में खवास खाँ का चार बार उल्लेख इस प्रकार हुआ है:—

- १—बैर कियो शिवजी सो खवास खाँ डोंडिये सैन बिजेपुर बाजी।
कुं० २०६
- २—धाक सों खाक बिजेपुर भा मुख आयगो खान खवास के फेना।
कुं० २४४
- ३—लोगन सों भनि भूषन यों कहैं खान खवास कहा सिख दैहौ।
आवत देसन लेत सिवा सरजै मिलिहौ भिरिहौ कि भगैहौ॥

एदिल की सभा बोलउठी यों सलाह करौऽब कहाँ भजि जेहौ ।
 लीन्हौ कहा लरि कै अफजल कहा लरि कै तुमहू अब लैहौ ॥

कं० ३१२

४—उमड़ि कुडाल में खवास खान आये भनि भूपन त्यों धाये
 शिवराज पूरे मन के ।

कं० ३२८

इन चार क़ंदों में जिस खवास खाँ का उल्लेख हुआ है उनमें उसके जीवन की एक प्रधान घटना का कुछ आभास मिलता है। अंतिम में वह केवल एक सेनापति मात्र है जो शिवाजी से युद्ध करने कुडाल तक आया था; पर अन्य तीन में उसका उल्लेख कुछ विशेषता लिए है। तीसरे पद में स्पष्ट ही एक युद्धीय काउंसिल बंठी हुई है, जिसका सभापति यही खवास खाँ ज्ञात होता है। सभी उसके मुखपेक्षी हैं और उसकी सम्मति चाहते हैं। अपनी सम्मति देते हुए अन्य सभासद संधि का प्रस्ताव करते हैं और यह भी चुनौती देते हैं कि युद्ध करने से जा फल अफजल खाँ को मिला था वही तुम्हें भी प्राप्त होगा। प्रथम क़ंदांश में 'खवास खाँ शिवाजी से वैर कियो' भी उसकी 'बिजेपुर' में प्रधानता दिखलाता है। दूसरा क़ंदांश भी इसीका द्योतक है। एक बात यह भी है कि खवास खाँ की यह प्रधानता अफजल खाँ के सन् १५५६ ई० में मारे जाने के बाद की होनी चाहिए। साथ ही इस खवास खाँ ने कुडाल में आकर शिवाजी से लड़ने का प्रयत्न किया हा, ऐसी भी उसके जीवन की एक घटना होनी चाहिए।

बीजापुर का इतिहास देखने से यह ज्ञात होता है कि उस राज्य के दो प्रधान अमात्य खवास खाँ नाम के हुए हैं, जो शिवाजी के समकालीन थे और दोनों ही की अमात्यता के अंत होने के पहिले अफजल खाँ मारा जा चुका था। अब प्रथम खवास खाँ

का साधारण परिचय दिया जाता है, जिसका वास्तव में इन छंदों में उल्लेख नहीं है। बीजापुर के सातवें सुलतान मुहम्मद आदिल शाह की सन् १६५६ ई० के नवम्बर में मृत्यु होने पर उसका पुत्र अली आदिल शाह तृतीय गद्दी पर बैठा। पुराने मंत्री खानमुहम्मद के मारे जाने पर खवास खाँ मंत्री हुआ और इसीने अफ़ज़ल खाँ को सन् १६५६ ई० में शिवाजी को दमन करने के लिए भेजा था। इसके अनंतर इख़लास खाँ खानखाना, बहलोल खाँ आदि प्रधान हुए। सन् १६७२ ई० के २५ नवंबर को अली आदिल की मृत्यु होगई, जिस पर अब्दुलकरीम तथा दूसरे खवास खाँ ने प्रधानता के लिए झगड़ा किया। खवास खाँ का मृत सुलतान ने अपने पुत्र सिकंदर आदिल शाह का अभिभावक भी नियुक्त किया था, जिससे यह मालूम होता है कि अली आदिल शाह का इस पर पहिले ही से अधिक विश्वास था। इसने सन् १६६६ ई० में शरज़ा खाँ के साथ शिवाजी तथा दिलेर खाँ से युद्ध किया था और परास्त हुआ था। इसके पहिले भी जब जयसिंह ने शिवाजी पर चढ़ाई की थी तब अली आदिल ने खवास खाँ को मुग़लों की सहायता के लिए शिवाजी पर भेजा था, पर कोंकण में पहुँचने पर एकाएक शिवाजी ने उस पर आक्रमण कर परास्त कर दिया था। सन् १६६३ ई० में शिवाजी ने कुडाल पर अधिकार कर लिया था, पर उस पर पुनः उस समय बाजापुरी अधिकार हाँ गया जब शिवाजी मुग़लों के सेनापति जयसिंह से लड़ रहे थे। इसके अनन्तर मराठों का फिर अली आदिल की मृत्यु पर उस पर अधिकार हाँगा। कुडाल के इस लेने देने में बीजापुर पक्ष का प्रधान सेनापति मुहम्मद इख़लास खाँ था जो खवास खाँ का भाई था। इसी खवास खाँ के पिता इख़लास खाँ खानखाना बीजापुर के प्रधान मंत्री भी रह चुके थे। इस प्रकार देखा जाता है कि इसी दूसरे खवास खाँ का इन छंदों में उल्लेख हुआ है और

वह शिवराज-भूषण की रचना के बाद सन् १७७४ ई० के अंत में अफ़ग़ान अब्दुल करीम के हाथ धांखे से मारा गया था ।

इस प्रकार ऐतिहासिक अन्वेषण पर देखा जाता है कि ख़्वास ख़ाँ का उल्लेख शिवराज भूषण के रचनाकाल के अनुकूल ही है और उसके सत्य होने का प्रमाण है ।

आकूत ख़ाँ

शिवराज-भूषण के क़० ६३ में अफ़ज़ल ख़ाँ के मारे जाने का उल्लेख है । क़ंद यह है—

सिंह थरि जाने बिन जावली जंगल भठी,

हठी गज पदिल पठाय करि भटक्यौ ।

भूपन भनत देखि भभरि भगाने सब,

हिम्मति हिये में थरि काहू बै न हटक्यौ ॥

साहि के शिवाजी गाजी सरजा समथ्य महा,

मदगल अफ़ज़लै पंजा बल पटक्यौ ।

ता बिगिरि द्वै करि निकाम निज धाम कहै,

आकूत महाउत सु आकूत लै सटक्यौ ॥

जावली तथा पार के पास शिवथरि नामक एक और ग्राम भी है । यहीं अफ़ज़ल ख़ाँ की सेना टहरी हुई थी । स्यान् इसी ग्राम के नाम के भूषण ने बदल कर सिंहथरि रख दिया है । दोनों के केवल साम्य के कारण इतना लिख दिया गया है । इस क़ंद में एक ऐतिहासिक घटना का अलंकृत वर्णन है । सिंह रूपी शिवाजी ने अफ़ज़ल ख़ाँ रूपी हाथी के भूल कर जंगल में आ जाने पर पंजा के बल पड़ाइ दिया, जिससे आकूत रूपी महाबत बेकार

होकर आँकुश लेकर भाग निकला। पंजा शब्द से उस शस्त्र की ध्वनि भी निकलती है जिसे बाघनख कहते हैं और जिससे शिवाजी ने अफजल खाँ पर चोट किया था। यह घटना सं० १७१६ वि० की है। याकूत का महाघत होने से केवल यही तात्पर्य है कि भूषण के अनुसार वह भी इस चढ़ाई में अफजल खाँ के साथ था। पं० रामचन्द्र गोविन्द भाटे महाशय ने माधुरी व० ८ खं० १ सं० ३ पृ० ४६२-३ पर 'शिवभारत' से कई श्लोक उद्धृत कर दिखलाया है कि 'याकूतः' भी अफजल खाँ के साथ इस चढ़ाई में आया था। यह शंका उठाना व्यर्थ है क्योंकि अफजल के साथ कोई याकूत आया था और उसके मारे जाने पर वह भाग गया था, इसे तो भूषण जी स्पष्ट ही कह रहे हैं। अब यह देखना चाहिए कि उस समय कोई ऐसे याकूत दुनियाँ में थे या नहीं, जिसका इतिहास में पता लगता है।

ऐसे याकूत के उस समय होने या न होने से भी तथा बाद में कभी किसी याकूत के होने से शिवराज-भूषण के रचनाकाल पर कुछ भी असर नहीं पड़ता और उसका विचार उठाना पाठको को भ्रम में डालना मात्र है क्योंकि उससे अफजल के मारे जाने से संबंध है, जिसका समय भ्रम निश्चित है, वह इधर उधर कुछ भी नहीं हट सकता। यह शंका ही नहीं है, वाग्विन्तडा मात्र है। यदि कोई याकूत उस समय न मिले तो अपने ऐतिहासिक ज्ञान की न्यूनता मानना अधिक सम्भव है, बजाय इसके कि यह कहा जाय कि भूषण ने भ्रम से यह नाम दिया है। पहिला ही ठीक हो सकता है क्योंकि 'शिवभारत' ग्रंथ भी भूषण का समर्थन करता है। इस पर यह विवाद भी उठाना कि यह याकूत खाँ सीदी थी और यह पदवी जंजीरा के सीदी सम्भाल का सं० १७२७ ई० में दी गई, यह सब भी व्यर्थ है। सीदी शब्द केवल

हवशी अर्थात् पेबिमिनिअन हाने का द्योतक है और ये लोग केवल जंजीरा ही में नहीं रहते थे; प्रत्युत् दक्षिण के सभी सुलतानों के दरबार में रहते थे। मलिक अंबर, आहूंग खाँ, चीता खाँ आदि हवशी ही थे।

२४ दिसंबर सन् १६६५ ई० को शिवाजी तथा दिलेर खाँ और शरजा खाँ तथा खवास खाँ के बीच जो युद्ध हुआ था, उसमें बीजापुरी सेना के एक सेनाध्यक्ष, पंद्रह अफसर और हजारों सैनिक मारे गये थे। इस सेनापति का नाम प्रो० सर्कार ने शिवाजी के पृ० १४६ पर याकूत खाँ हवशी दिया है। यही सन् १६५६ ई० का भगैल याकूत खाँ हो सकता है।

बहलोल खाँ

शिवराज-भूषण के जिन क़ंदों में बहलोल खाँ का उल्लेख है, उनके अंश यहाँ दिए जाते हैं।

१—अफ़ज़ल की अगति, मासता की अपगति,

बहलोल की बिपति में डरे उमराव हैं। क़० ६६

२—बचैगा न समुहाने बहलोल खाँ अयाने,

भूखन बखाने दिल आनि मेरा बरजा।

तुझसे सवाई तेरा भाई सलहेरि पास,

कैद किया साथ का ना कोई वीर गरजा।

साहिन के साह उसी औरंग के लीन्हें गढ़,

जिसका तू चाकर और जिसकी है परजा।

साहि का ललन दिली दल का दलन,

अफ़ज़ल का मलन शिवराज आया सरजा। क़० १६१

३—अफजल खान, रुस्तमै जमान, फत्तेखान कूटे,
लूटे जूटे ए उजीर विजेपुर के।

अमर, सुजान, मोहकम, बहलोत खान,

खाँडे, क़ाँडे, डाँडे उमराव दिलीसुर के। कुं० २३६

४—मोललुहि जस नेाललुहि बहलोतल्लिय धरि। कुं० ३५६

५—सिवराज साहि-सुध खग बल दलि अडाल बहलोत दल।

कुं० ३५८

प्रथम कुंदांश से यह ज्ञात होता है कि अफ़जल खाँ के मारे जाने, शायस्ता खाँ की दुर्दशा होने तथा बहलोत खाँ पर आपत्ति का पहाड़ टूटने से सदर्गण डर गये हैं और इसी से हज्ज करने का बहाना करके ही वे नदी के पार उतरने हैं। ४ थे और ५ वें कुंदांशों से क्रमशः यही मालूम होता है कि बहलोत को एकड़ कर नया यश क्रय किया और बहलोत की सेना को दल डाला। इन तीनों ही से किसी खास बहलोत का परिचय नहीं मिलता, या यों कहा जाय कि जिस बहलोत का इन तीनों में उल्लेख है, वह कौन है, दिल्ली दरबार का सरदार है या दक्षिण के किसी सुलतान का यह स्पष्ट नहीं ज्ञात होता। ३ रे उद्धरण से यह ज्ञात होता है कि इसमें उल्लिखित बहलोत खाँ दिल्लीश्वर का सदार है और उसे शिवाजी ने कैद कर उससे दण्ड लिया है। २ रा पूरा कुंद बहलोत खाँ के विषय में कुछ और बातें भी बतलाता है। उससे मालूम होता है कि उसके भाई का शिवाजी ने सतहेरि के पास कैद किया था तथा वह औरंगज़ेब का सेवक और प्रजा है।

अब प्रश्न यह रह गया कि दिल्ली-सम्राट के किसी सदार बहलोत खाँ की शिवाजी द्वारा दुर्दशा हुई थी या नहीं। यदि कोई ऐसा बहलोत न मिले तो क्या समझना चाहिए। एक सज्जन ने तो भूपण को इसे भ्रमवश दिल्ली का सेवक लिखना

समझ लिया है । ऐसा समझ लेना अनुचित है । बीजापुरी सदाँर बहलोल खाँ को लेकर अन्य लोग उसके युद्धों के सवन् देकर इस ग्रन्थ के निर्माणकाल के आगे पीछे हटा रहे हैं । वास्तव में सभी को पहिले मुगल दरबार ही के किसी बहलोल की खोज करना चाहिए था ।

सन् १६७१ ई० में गुजरात के सूबेदार बहादुर खाँ तथा दिलेर खाँ दक्षिण भेजे गये थे । ये दोनों इखलास खाँ मियाना, राव अमर सिंह चन्द्रावत आदि सदाँरों को सहैर दुर्ग का घेरा कायम रखने के लिये छोड़कर अहमदनगर गये थे । सन् १६७२ ई० के जनवरी महीने में शिवाजी ने इस सेना को घेर लिया और घेर युद्ध के अनंतर इखलास खाँ, मुहकम सिंह आदि तीस सदाँर कैद हुए और राव अमरसिंह, कई अन्य अफसर तथा कई सहस्र सैनिक मारे गये । पीछे से धन देकर ये सदाँर छोड़ दिये गये थे । यह इखलास खाँ बीजापुर के पठान सदाँर अब्दुलकादिर बहलोल खाँ का पुत्र था और इसका नाम अब्दुलमुहम्मद था । सन् १६६६ ई० के आरम्भ में यह बादशाही सेवा में चला आया था और इसे इखलास खाँ पदवी तथा पाँच हजारी मंसब मिलता था । यह अब्दुल कादिर बहलोल खाँ बीजापुर का प्रधान अमात्य था और यह सन् १६६५ ई० में कर्णाटक से लौटने पर मर गया । इसके दो पुत्र और एक भ्रातृपुत्र था । अली आदिलशाह इस बहलोल से उसकी बारह सहस्र पठान सेवा के कारण उर्षा रखता था, इसलिए उसकी मृत्यु पर उसके पुत्रों में झगडा होने पर उनकी जागीरें दवा ली थीं । इस पर इसका प्रथम पुत्र दिल्ली चला गया और वहाँ का एक सदाँर हो गया । ग़ासिमद खान के आधार पर मेसर्स पारसनीस तथा किनकेड महाशयगण अपने मराठों के इतिहास भा० १ पृ० २३५ पर लिखते हैं कि 'इखलास खाँ के

एक सहकारी बहलोल खाँ ने भी इस युद्ध में योग दिया था भूपण भी किसी एक बहलोल खाँ के पकड़े जाने का उल्लेख करते हैं और अमरसिंह चन्द्रावत के मारे जाने तथा मुहकम सिंह आदि के पकड़े जाने के उल्लेख से इसी सल्हेर युद्ध ही से उनका तात्पर्य भी है ।

पूर्वाक्त विचारों से यही निष्कर्ष निकलता है कि भूपण ने जिस बहलोल का वर्णन किया है वह मुगल सम्राट का सेवक था तथा उसका भाई सल्हेर युद्ध में पकड़ा गया था जिससे उस पर विपत्ति भी पड़ी थी ।

बीजापुर के जिस बहलोल खाँ के सन् १६७३ तथा १६७४ ई० के युद्धों का वर्णन दोनों पत्र के तर्ककर्तोंओं ने किया है, उसका नाम अब्दुर्रहीम था और उसकी बंकापुर में जागीर थी । उसका भाई खिज़्र खाँ था जो हंबार राव से युद्ध करते समय मारा गया था । बहलोल फारसी शब्द है, जिसका अर्थ किसी जाति का सद्गुरु या पेशवा है । यह पदवी प्रायः पठानों ही को मिलती थी और दक्षिण ही में इसका प्रयोग होता था । यह भी उस समय नियम सा था कि एक बड़ी उपाधि एक ही दरबार में एक से अधिक सज्जनों को एक साथ नहीं प्रदान की जाती थी । तब इस प्रकार दो बहलोल खाँ के समसामयिक होने का कारण यही ज्ञात होता है कि सन् १६६६ ई० में एक बहलोल खाँ की मृत्यु पर उसके एक पुत्र को स्थान् छोटे ही को वही पदवी दी गई और जब वह भी अपने भाई के समान जागीरों के कारण बीजापुर दरबार से क्रुद्ध होकर दिल्ली चला गया तब दूसरे अब्दुर्रहीम को यह पदवी दी गई हो । इधर इब्रतनाम खाँ के भाई भी उत्तर में अपनी उसी पदवी से पुकारे जाते रहे होंगे ।

मुहकमसिंह

अमर सुजान मुहकम बहलाल खान खाँडे,
खाँडे, डाँडे, उमराव दिलीपुर के। छं० २३६

लिय भरि मुहकमसिंह कहँ अरु किसोर नृप कुम्भ। छं० २४६

उपर्युक्त छंदਾਂशों में एक हो मुहकम सिंह का उल्लेख है और दोनों ही में उसका एकड़ा जाना वर्णित है। इन्हें कैद करके छोड़ने वाले शिवाजी ही हैं इसमें कुछ भी शंका नहीं है, इसलिये किसी पत्र के विद्वान को ऐसा ही मुहकमसिंह खोज निकालना चाहिए जिसे शिवाजी ने युद्ध में, मुख्य कर सल्हेरि युद्ध में, कैद किया हो और दंड लेकर छोड़ा हो। भूषण ने शिवराज-भूषण चाहे जब भी लिखा हो, पर यदि उसने सत्य घटनाओं का इस ग्रन्थ में समावेश किया है तो ऐसे ही ऐतिहासिक मुहकमसिंह खोजना चाहिये। एक सज्जन ने ग्रांट डफ से एक उद्धरण देकर एक मुहकमसिंह का उल्लेख करते हुये उस घटना का सं० १७५२ वि० (सन् १६६५ ई०) में होना दिखलाते हुए शिवराज-भूषण का रचना-काल आगे की ओर खींचा है। पर यह तो विचार लेना चाहिए था कि क्या इस जाट तथा भरतपुर के राजकुमार मुहकमसिंह की जिन मराठों ने दुर्दशा की थी उनके सेनापति क्या शिवाजी थे। क्या शिवाजी सन् १६६५ ई० में जीवित भी थे ? यदि वे नहीं जीवित थे तो इन मुहकमसिंह का उल्लेख करना व्यर्थ है। भूषण जी या कोई भी यदि आज इस घटना का इतिहास लिखने बैठे तो वह शिवाजी द्वारा ही पकड़े जाने वाले मुहकम सिंह का उल्लेख करेगा, बाद के अनेकों मुहकमसिंह से उससे कुछ भी सम्बन्ध नहीं मिलावेगा।

औरंगज़ेब तथा शिवाजी के समकालीन कई मुहकमसिंह हुए हैं जिनमें चार का तो हमें इस समय ध्यान है, और भी हो सकते हैं। एक मुहकम सिंह हाड़ा हैं, जो सन् १६५६ ई० में धौलपुर में मारे गए थे। इन्हीं के भाई किशोर सिंह कोटा के राजा हुए जिनका परिचय परिशिष्ट च में देखिये। दूसरे राव अमर सिंह चंद्रावत के पुत्र थे जिनके विषय में आगे विचार किया जाएगा। तीसरे मुहकम सिंह जाट-नरेश चूड़ामणि के पुत्र थे। चूड़ामणि ने सं० १७४५ के बाद मुगलों की अधीनता स्वीकार की थी, इसलिये उसी समय या बाद को उसका राजकुमार बादशाही सेना में नियुक्त होकर दक्षिण आया होगा। यह मुहकम सिंह सन् १७२२ ई० में गद्दी पर बैठा था। चौथे मुहकम सिंह खत्री थे जिन्हें भी राजा का खिताब मिला था और यह भी फर्रुखासिंहर बादशाह के समय तक दक्षिण में बहुत दिनों तक नियुक्त रहे। इसकी जीवनी के लिए काशी नागरी प्रचारिणी सभा द्वारा प्रकाशित मन्नासिरुल् उमरा का निबंध ५८ देखिए।

इन पूर्वोक्त चारों मुहकमसिंह में केवल एक चंद्रावत मुहकम सिंह ही ऐसे हैं जिन्हें शिवाजी ने सल्हेरि युद्ध में कैद किया था और बाद में जिन्हें दंड देने पर छुटकारा मिला था। मन्नासिरुल् उमरा फा० भा० २ पृ० १४२-५ पर राव दुरगा सिसोदिया के पौत्र राव अमर सिंह के सल्हेरि युद्ध में मारे जाने तथा राव मुहकम सिंह के कैद होने का विवरण यों दिया गया है। इसके अनंतर वह दक्षिण में नियुक्त हुआ और मिर्जा राजा जयसिंह के साथ अच्छा कार्य किया। ग्यारहवें वर्ष में यह सल्हेरि दुर्ग के नीचे शत्रु-सेना के आक्रमण करने पर मारा गया और उसका पुत्र मुहकम सिंह कैद हो गया। कुछ समय बाद इसे दंड देने पर

छुटकारा मिला, तब यह दक्षिण के सूबेदार बहादुर खाँ के पास आया और इसे राव की पदवी तथा मंसब मिला। बहुत दिनों तक दक्षिण में कार्य करता रहा। ३३ वें वर्ष में मुहकम सिंह का पुत्र गोपाल सिंह अपने देश रामपुर से आकर अपने पैतृक सेवा में नियुक्त हुआ। 'औरंगज़ेब का ग्यारहवाँ जलूसी वर्ष फालगुन सुदि २ सं० १७२४ वि० (४ फरवरी सन् १६६८ ई०) से आरंभ होकर माघ सु० २ सं० १७२५ वि० (२३ जनवरी सन् १६६९ ई०) तक रहा। इसी बीच की यह पूर्वोक्त घटना है। मृतानेणसी की ख्यात (पृ० ६७-१००) तथा ब्लॉकमैन कृत आईन अकबरी पृ० ४१७-८ पर इन चंद्रावतों के विषय में लेख हैं। काशी नागरी प्रचारिणी पत्रिका सं० १६८३ पृ० ४११-४४७ पर एक बड़ा लेख इन पर है जो शिलालेखों तथा ख्यातों के आधार पर लिखा गया है। प्रो० सरकार ने इस युद्ध का वर्णन 'शिवाजी' पृ० २१७ पर फारसी आदि कई भाषाओं के इतिहासों के आधार पर किया है। पारसनीस किनकेड कृत 'मराठों के इतिहास' भा० १ पृ० २३५ पर भी इस घटना का वर्णन है। इतने ग्रंथों का उल्लेख इस लिए कर दिया गया है कि जिन पाठकों को ऐतिहासिक मनन का शौक हो वे इन चंद्रावतों के विषय में विशेष ज्ञान प्राप्त कर सकेंगे।

सफजंग

शिवराज भूषण में इस शब्द का केवल एक बार प्रयोग हुआ है। वह इस प्रकार है।

लूट्यो खानदौराँ ज़ारावर सफजंग अरु लह्या मार तलब खाँ
मनहु अमाल है। कं० १०३

इस छंदांश के भी प्रथम अंश का दो प्रकार से अर्थ हो सकता है अर्थात् (१) शक्तिमान खानदौराँ को युद्धव्यूह में लूट लिया और (२) खानदौराँ, जोरावर तथा सफजंग तीनों को लूटा। तात्पर्य यह कि लूटने वाले एक शिवाजी ही हैं, पर लुटने वाले एक या तीन हो सकते हैं। एरु सज्जन ने इस सफजंग को सफदरजंग का छोटा रूप माना है तथा बाजोराव पेशवा और अवध के द्वितीय नवाब मंसूर अली खाँ सफदरजंग के बीच युद्ध का इसमें उल्लेख बतलाया है। पर भूषण ने इस ग्रंथ में केवल शिवाजी ही का यश गाया है इससे इस प्रकार का कथन उपेक्षणीय है। इस में भी अन्य जिन घटनाओं का उल्लेख है वह सब शिवाजी ही के समय की है तथा भूषण साफ साफ पुकार कर कह रहे हैं कि खानदौराँ, गायस्ता खाँ आदि उमराव के साथ औरंगजेब घेड़े हाथी 'इरसाल' कर (भेज) रहा है। अब केवल यह देखना है कि शिवाजी के समय कोई सदाँर इम नाम का दक्षिण आया था या नहीं। हाँ, एक बात और पहिले ही विचार लेना चाहिए। क्या केवल 'सफजंग' नाम हो सकता है? जोरावर नाम भी हो सकता है तथा विशेषण भी। इसका अर्थ शक्तिशाली है और इसमें खाँ आदि लगाकर नाम बना सकते हैं जैसे जोरावर खाँ; पर इसी प्रकार 'सफजंग' में खाँ, दौंला आदि लगा कर नाम नहीं बनाया जा सकता। मुसलमानी नाम विशेषतः सार्थक होते हैं। सफजंग दो शब्द मिलकर बना है। सफ अरबी शब्द है जिसका अर्थ क़तार, परा, पंगत, लाइन है। जंग का अर्थ युद्ध है। अर्थात् दोनों का मिलकर अर्थ होता है युद्ध की क़तार, व्यूह। तात्पर्य यह कि सफजंग पाठ रहते हुए उसे किसी अमीर का नाम नहीं माना जा सकता। यदि इन दोनों शब्दों के बीच 'दर' के समान शब्द मिलाने तथा लोप होने की बात माननीय हो सके तब यह नाम

बन सकता है। इस सफजंग को यदि सैफजंग का बिगड़ा रूप मानें तब यह अवश्य नाम हो सकता है। सैफ फारसी शब्द है जिसका अर्थ तलवार है। सैफ खाँ, सैफुद्दौला, सैफजंग आदि उपाधियाँ बराबर मुसलमानी दरबारों में वितरित होती रहीं थीं। ८ वें जालूसी वर्ष में शाहजादा मुअज्जम के साथ एक सफाशिकन खाँ और एक सैफ खाँ दक्षिण आये थे। मन्नासिरे-आलमगरी में औरंगजेब के १३ वें जालूसी वर्ष (१६६ ई०) में एक हाजी सैफ खाँ के भी दक्षिण के दीवानो पद पर नियुक्त होने का उल्लेख है; पर यह उस पद पर बहुत ही थोड़े दिन रहा था। किसी अन्य सैफ खाँ, सैफजंग आदि का या किसी जोरावर खाँ, सिंह आदि का शिवाजी से युद्ध करने के लिये दक्षिण की चढ़ाई पर नियुक्त होने का अभी तक किसी इतिहास में उल्लेख नहीं मिला है।

वास्तव में ये दोनों—सैफजंग तथा जोरावर शब्द भूषण द्वारा नाम के रूप में नहीं प्रयुक्त हुए हैं, प्रत्युत वाक्य-योजना में विशेष जोर डालने के लिये लाये गए हैं। उनका भाव यह है कि पहिले तो खानेदौरा ही शक्तिशाली है और दूसरे उसको सरे मैदान उसकी सेना के सामने ही शिवाजी ने लूट लिया था। सफजंग शब्द का इस भाव में हिंदी कविता में प्रयोग भी होता है।

तलब खाँ

सफजंग को विवेचना करते हुए जो त्र्यंश उद्धृत किया गया है उसका दूसरा अंश 'अरु लहो मार तलब खाँ मनहु अमाल है'

है। इसका अर्थ होगा कि 'और तलब खाँ ने मार पाई, मानो मनमाना है।' इस पद्यांश का यह पाठांतर भी मिलता है कि 'लहो मार' के स्थान पर 'लूट्याँ कार' होना चाहिये जिससे केवल 'तलब खाँ' 'कार तलब खाँ' हो जाते हैं। अब पहिले पूरा छंद देकर उस पर विचार किया जायगा।

लूट्यो खानदौराँ जोरावर सफजंग अरु,
 लहो मार तलब खाँ मनहु अमाल है।
 भूषन भनत लूट्यो पूना में सइस्त खान,
 गढ़न में लूट्यो त्यों गढ़ोरन को जाल है॥
 हेरि हेरि कूटि सलहेरि बीच सरदार,
 घेरि घेरि लूट्यो सब कटक कराल है।
 मानो हय हाथी उमराव करि साथी अव-
 रंग डरि शिवाजी पै भेजत रिसाल है॥

भूषण ने इसे हेतूप्रेक्षा उदाहरण के लिए बनाया है। जो वास्तव में जिस वस्तु का हेतु नहीं है उसे उसका हेतु मानना हेतूप्रेक्षा है। इसके दो भेद हैं सिद्ध-विषया और असिद्ध-विषया। इस उदाहरण में सिद्ध-विषया हेतूप्रेक्षा है। शिवाजी मुगल दरबार से भेजे गये सदाँरों की सेना तथा मुगलों के अधीनस्थ दुर्गों के अध्यक्षों के घोड़े, हाथी, धन, सामान आदि लूट लेते थे, इस पर कवि उपेक्षा करता है कि मानों औरंगजेब डर कर इन घोड़े हाथी आदि को सदाँरों के साथ शिवाजी के पास कर के रूप में भेजता है। कवि ने इसीसे 'लूट्यो' शब्द ही का प्रधानता दी है क्योंकि उसीसे उसकी उपेक्षा सिद्ध होती थी। तलब खाँ के मार पाने से तथा शिवाजी के उसका प्राण लेने से कवि का भाव नहीं बनता; प्रत्युत बिगड़ता है। वाक्य-योजना से

भी ऐसा हो ज्ञात होता है। प्रथम तीन पंक्तियों में जितनी क्रियाएँ आई हैं उन सब का, एक लह्या को छाड़ कर, कर्ता एक है। यह कर्ता अर्थात् लूटने वाले शिवाजी हैं। प्रथम पंक्ति के पूर्वार्ध का कर्ता, लह्या पाठ रहने पर, उत्तरार्ध में करण हो जाता है इसके बाद वह पुनः कर्ता हो जाता है। यदि दूसरा पाठ 'लूट्यो कार' लिया जाय तो वाक्य-योजना का यह शैथिल्य नहीं रह जाता और इस पंक्ति का अर्थ भी ठीक ठीक बैठ जाता है। छंद भर में सभी के लूटने की जो कवि ने प्रधानता रखी है वह भी बनी रह जाती है।

तलब अरबी शब्द है जिसका अर्थ याचना या वेतन है। केवल तलब खाँ वेतन सिंह के समान निरर्थक है। कारतलब खाँ सार्थक हो जाता है और इस नाम के एक मुगल सदाँर का इतिहासों से भी पता लगता है, जो शिवाजी के समय में था और जिसे इन्होंने लूटा था। बाद के हजारों तलब खाँ से भूषण के इस छंद से कुछ भी प्रयोजन नहीं। शिवाजी की मृत्यु के बाद अन्य मराठी सैनिकों द्वारा लुटे पिटे तलब खाँ को भूषण किस प्रकार शिवाजी द्वारा पिटा हुआ बयान कर देंगे, यह विचार में भी नहीं आता।

अस्तु, हमारे विचार से 'लूट्यो कार' पाठ शुद्ध है चाहे वह प्राचीन प्रति में मिला हो या न मिला हो। कारतलब खाँ का परिचय परिशिष्ट च में देखिये।

बखतबुलंद

बासव से बिसरत विक्रम की कहाँ चली,

विक्रम लखत बोर बखत बिलंद के।

जागे तेज वृन्द शिवाजी नरिन्द ममनन्द माल-

मकरन्द कुलचन्द साहिनन्द के। वृ० ११०

इस पद में 'बख्त बिलन्द' शब्द आया है, जो फारसी शब्द 'बुलन्द बख्त' का बिगड़ा रूप है। इसका अर्थ ऊँचे इकबाल वाला, अतीव भाग्यवान है। मुसलमानी दरबारों में इस प्रकार की उपाधियाँ बादशाहों तथा शाहजादों के लिए बराबर प्रयुक्त होती रही हैं। शाहजहाँ नामा में लिखा है कि दारा शिकोह को 'शाहबुलन्द इकबाल' की उपाधि मिली थी और उस इतिहास में केवल उसी उपाधि से उसका कई बार उल्लेख किया गया है। सन् १६८६ ई० में देवगढ़ के एक गोंड राजा को मुसलमान होने पर औरंगजेब ने बुलन्द बख्त की उपाधि दी थी; परन्तु उसने सन् १६९६ ई० में पुनः मुसलमानी धर्म छोड़ दिया, जिससे क्रुद्ध होकर बादशाह ने उसकी पदवी 'नगून बख्त' अर्थात् अभागा में बदल दिया था। एक सज्जन का कथन है कि इसी गोंड राजा को विक्रम का इस पद में वर्णन है। 'सवाई सी पदवी का न प्रयोग करने से कवि भूषण को' राष्ट्रवादी कहने वाले के द्वारा यह कथन कि मुसलमान हो जाने के कारण बादशाह द्वारा दी गई 'बुलन्द बख्त' की उपाधि प्राप्त इस गोंड भलेच्छ का इस वृन्द में उसी कवि ने उल्लेख किया है या उस उपाधि का अनुकरण किया है, अनर्गल मात्र है। भूषण ने स्वयं तथा उसके पूर्ववर्ती कवियों ने इस शब्द का विशेषण रूप में प्रयोग किया है।

शिवराज-भूषण में भूषण ने कुत्रपति महाराज शिवाजी का यश-वर्णन किया है। यह प्रत्येक काव्यप्रेमी तथा काव्य-मर्मज्ञ समझता है। धर्मद्रोही गोंड की पदवी का शिवाजी के यश-वर्णन में कहे गये इस वृन्द में उल्लेख होना कहना हठधर्मी मात्र है। इस वृन्द की द्वितीय पंक्ति में भी स्पष्टतः शिवाजी, उनके पिता तथा

पितामह का नाम दिया हुआ है और कवि केवल यही दिखलाता है कि शिवाजी के विक्रम को देखकर शत्रु-स्त्रियाँ रोती हैं। तात्पर्य यह कि बखत बिलंद शिवाजी का विशेषण मात्र है। वह उनका या किसी अन्य का नाम नहीं है।

अन्य ऐतिहासिक पुरुषगण

शिवराज-भूषण में शिवाजी के जिन प्रतिद्वंद्वी राजाओं तथा सेनानियों का उल्लेख हुआ है उनमें कुछ पर शंका उठाई गई थी जिससे उन पर कुछ विशेष रूप में लिखा जा चुका है और अब बचे हुए अन्य सर्दारों के विषय में साधारणतः यहाँ विचार किया जाएगा। मुगल दरबार से आए हुए राजाओं तथा सर्दारों में शायस्ता खाँ, महाराज जसवंतसिंह, राव भाऊसिंह हाड़ा, राव कर्णसिंह राठौर, राव अमरसिंह, राजा सुजानसिंह, बहादुर खाँ, खानदौरा तथा नासिरी खाँ का नाम उद्धृत किया हुआ है। बीजापुर के सर्दारों में रुस्तमजमाँ और फतेह खाँ का नाम आया है। सन् १६६३ ई० में शायस्ता खाँ की दुर्गति हुई थी। महाराज जसवंतसिंह शाहजादा मुअज्जम के साथ आए थे। सन् १६६४ ई० में यह तथा राव भाऊसिंह सिंहगढ़ घेर कर भी उसे न ले सके तथा महाराज जसवंतसिंह सन् १६६५ ई० में उत्तर लौट गए। राव अमरसिंह सन् १६७१ ई० में मारे गये तथा इसी वर्ष सुजानसिंह मर गए। बहादुर खाँ तथा दिलेर खाँ की अधीनस्थ सेना सल्हेर में सन् १६७१ ई० में ऐसी हारी कि वे पूना आदि विजय किए हुए सब स्थानों को छोड़ कर मुगल सम्राज्य की सीमा में लौट गए। परिशिष्ट च में पूर्वाक्त सभी व्यक्तियों का संक्षिप्त

परिचय दिया गया है, जिससे यह ज्ञात हो जाता है कि सं० १६३० वि० के ज्येष्ठ कृ० १३ (४ मई सन् १६७३ ई०) के पहिले इन सब पर शिवाजी ने छोटी बड़ी विजय प्राप्त कर ली थी और इनका इस ग्रंथ में उल्लेख होने से किसी प्रकार की इस ग्रंथ के निर्माणकाल के दाहे में दिए समय में आपत्ति नहीं होती।

इस प्रकार इस कुल विवेचना का यही निष्कर्ष निकलता है कि इस ग्रंथ की समाप्ति सं० १७३० वि० ही के ज्येष्ठ कृष्ण १३ रविवार को हुई थी जैसा कि ग्रंथकार ने स्वयं एक दाहे में लिख दिया है। अब प्रश्न यह है कि इस ग्रंथ का आरंभ कब हुआ था। जैसा कि कवि-परिचय में दिखलाया गया है, भूषण जी सन् १६६४ ही के लगभग शिवाजी के दरबार में आए थे। दरबार आने के अनंतर कुछ समय तक वे ' शिव चरित लख ' रहे थे, जिसके बाद उन्होंने इस अलंकारमय ग्रंथ को अपने नायक के चरित्र से भूषित करने का विचार निश्चित किया होगा। ग्रंथ बनाने का निश्चय कर उन्होंने उपमा से आरंभ करने का कारण भी दे दिया है। इन बातों से यह भी स्पष्टता ज्ञात होता है कि इन्होंने यह ग्रंथ आरंभ से अंत तक क्रमशः बनाया है। हाँ, यह हो सकता है कि पहिले के बनाए हुए किसी पद में किसी अलंकार को प्रधान देखकर उसे उदाहरण में इस ग्रंथ में स्थान दे दिया हो, पर यह ग्रंथ निश्चित विचार के अनुसार आरंभ करके लिखा गया है। प्रत्येक अलंकार अपने उदाहरण में इतनी स्पष्टता से दिया गया है तथा कहीं कहीं एक ही छंद में वह कई बार आया भी है, जिससे इस कथन का समर्थन ही होता है।

ग्रंथारंभ के विषय में विवेचना करते हुए एक सज्जन ने निर्माणकाल के दाहे का देकर इस प्रकार लिखा है कि ' इस

देहे के अनुसार ग्रंथ-रचना-काल आपाढ़ बदी १३ रविवार सं० १७३० को ठहरता है। शिवाजी महाराज का राज्याभिषेक जेठ सुदी १३ सं० १७३० को हुआ। दक्षिण में महीने का अंत अमावास्या को माना जाता है। इस हिसाब से राज्याभिषेक के पूरे डेढ़ महीने बाद यह ग्रंथ समाप्त हुआ। इससे यह अनुमान सहज ही में किया जा सकता है कि भूषण ने राज्याभिषेक के दिन ग्रंथ का आरंभ किया होगा और डेढ़ महीने में उसे समाप्त कर लेना भूषण ऐसे प्रतिभाशाली कवि के लिए कोई कठिन बात नहीं है। इस उद्धरण में जो दो तिथियाँ दी हुई हैं वे दोनों अशुद्ध हैं और उनके आधार पर किया गया 'सहज अनुमान' भी बिल्कुल निराधार है। इसके समर्थन में भी जो कवि की आशुकविता की प्रशंसा की गई है वह भी वास्तविक बात से बहुत दूर जा पड़ी है।

जैसा ऊपर लिखा जा चुका है, ग्रंथ-समाप्ति का महीना ज्येष्ठ है, आपाढ़ नहीं है और शिवाजी के राज्याभिषेक का संवत् १७३१ वि० है। इस प्रकार यह ग्रंथ शिवाजी के राज्याभिषेक के डेढ़ महीने बाद नहीं ; प्रत्युत् एक वर्ष पंद्रह दिन पहिले ही समाप्त हो चुका था। भूषण जी दीर्घजीवी तथा प्रतिभाशाली कवि थे, परन्तु उनकी प्राप्त कविता से यही देखा जाता है कि उन्होंने बहुत कम कविता की है। नवरत्न के एक अन्य कवि बिहारीलाल जी के समान ही इन्होंने भी बहुत थोड़ी कविता की है। यदि भूषण जी का कविताकाल केवल पचास वर्ष माना जाय तब भी यदि वे फी महीने एक छंद बनाते तो छ सौ छंद इनके नाम के मिलते। इस संग्रह में केवल ५०६ छंद संगृहीत हैं। अप्राप्य ग्रंथों में केवल एक 'भूषण हजारा' ग्रंथ में एक संहस्र पद होने की आशा की जाती है। अन्य दो को यदि शिवराज-

भूषण के परिमाण के ग्रंथ मानें तो भी सब मिलाकर ढाई सहस्र से अधिक इनके पद के मिलने की आशा भी नहीं है। इस हिसाब से इनकी रचना का औसत फी साल पचास पद का आता है। इस हिसाब से तीन सौ बयासी पद के ग्रंथ का बनाने में इन्हें कम से कम सात वर्ष लगने चाहिए। अर्थात् सं० १७२३ वि० के लगभग इन्होंने इस ग्रंथ में हाथ लगाया होगा।

क्या भूषण जी में आशुकविव्यञ्जक नहीं थी? क्या वे आलसी थे? आदि प्रश्न उठ सकते हैं इसलिए संक्षेप ही में इस पर यहाँ विचार करना आवश्यक है। सभी भाषाओं के साहित्य में यह एक नियम सा देखा जाता है कि स्फुट काव्य के लेखकों की छंद-संख्या प्रबंधकाव्य के निर्माताओं की छंद-संख्या से कभी नहीं बढ़ पाई है। हर प्रकार से समान दो कवियों की छंद-संख्या देखने से जिनमें एक प्रबंध काव्य-लेखक हो और एक स्फुट पदों का निर्माता हो, अधिक स्पष्ट होगा। दोनों प्रकार की रचना में समानरूपेण कुशल एक ही कवि की कृति देखने से यह अधिकतर स्पष्ट हो जाएगा। अब दृष्टान्त में अपनी ही भाषा के कुछ कवियों को लीजिए। इस साहित्य के नवरत्न कवियों की रचना को देखिए। सूर, शशि. चंद ने सागर ही बना डाले हैं। इनके प्रबंध काव्य कितने विशद हैं। केशवाचार्य की छंद-संख्या भी उनके प्रबंध-काव्यों ही से बढ़ती है। भूषण तथा बिहारी कौरे स्फुट पद-निर्मायक थे। देव जी के जितने ग्रंथ मिलते हैं, उन सब में से वे छंद जो कई ग्रंथों में मिलते हैं अलग कर छंद-संख्या निकाली जाय तो वह भी प्रबंधकाव्य लेखकों के छंद-संख्या की तुलना नहीं कर सकेगी। सुकवि मतिराम की छंद-संख्या भी विशेष नहीं है। भारतेन्दु जी ने साहित्य के सभी अंगों की आर ध्यान दिया है और इन सब पूर्वोक्त महाकवियों से उनमें यह

भी विशेषता अधिक थी कि वे अल्पजीवी थे। अब गोस्वामी तुलसीदास को लीजिये जिन्होंने प्रबंधकाव्य भी लिखे हैं और स्फुट कविता भी की है। इनकी ऐसी दोनों रचनाओं के छंद-संख्या की कोई तुलना ही नहीं है।

अस्तु, तात्पर्य यही है कि प्रबंध-काव्य लिखने में सब से बड़ा सुभीता यह है कि हृदय एक आर लगा रहता है और उसमें स्फूर्ति लाने के लिए विशेष प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ती, जिसकी स्फुट काव्य के लिए पद पद पर आवश्यकता होती है। यह मानव प्रकृति के अनुकूल ही है।

ऊपर लिखा जा चुका है कि इस ग्रंथ की छंद-संख्या के अनुसार भूषण को इसकी रचना में सात वर्ष लगे होंगे, पर जैसी अभी विवेचना की गई है उससे यह भी विचारणीय है कि इस ग्रंथ के कुछ छंद इस हिसाब के बाहर पड़ते हैं। आरंभ के राजवश, कवि, दुर्ग आदि पर रची कविता वर्णनात्मक है, सौ के ऊपर दोहे पारिभाषिक मात्र हैं और अंत के बारह पद भी अलंकार-सूची, आशीर्वाद आदि हैं। इस प्रकार डेढ़ सौ पद ऐसे हैं जिनके बनाने में स्फुट छंद के बनाने के बीच के अवकाश ही अलं है, इसलिए तीन वर्ष निकाले जा सकते हैं। और ग्रंथ का आरंभ इस हिसाब से सं० १७२७ वि० का ज्येष्ठ मास हो सकता है पर वास्तव में ऐसा नहीं हुआ है।

पूर्वाक्त कथन आगे की विचार प्रणाली पर अवलंबित है। सं० १७३० वि० के पहिले तथा रायगढ़ राजधानी होने के बाद शिवाजी की जोवनी में एक ही घटना ऐसी है, जिसका प्रभाव इन महाराज के प्रत्येक प्रजा तथा आश्रित पर अभूतपूर्व रहा होगा। शिवाजी के दिल्लीगमन के अनंतर उनके कैद होने के

समाचार से जितना इनके देश में शोक ज्ञाया था वह एकाएक इनके पूना में आ उपस्थित होने पर हर्षातिरेक में बदल गया होगा, यह प्रत्येक स्वदेशप्रेमी विचार कर सकता है। भूषण जी ने, जो दो तीन वर्ष पहिले से शिव-चरित लख रहे थे, इस मुश्रवसर को ग्रंथ का आरंभ करने के लिए बहुत ही उपयुक्त समझा और इसी घटना को उन्होंने प्रथम अलंकार में स्थान दिया। बीच में सं० १७२३ से सं० १७२७ तक प्रायः तीन वर्ष से कुछ ऊपर युद्ध आदि के बदले शिवाजी राज्य के शांतिस्थापन में लगे थे, इससे भूषण की वाररससिक्त प्रतिभा तथा रौद्र कवित्वशक्ति भी शांति उपभोग करने लगी होगी। इसके अनंतर पुनः रणस्थल के द्वंद्व मचने पर इसे इन्होंने समाप्त किया होगा।

भूषण जी ग्रंथ-निर्माण के प्रेमी नहीं थे। वे किसी कार्य को लेकर बैठने वाले नहीं थे। यही कारण है कि इस ग्रंथ में यदि उन्होंने प्रधान अलंकार दिया है तो उसके भेद का पता नहीं है, एक भेद है तो अन्य नहीं है। अर्थात् देर होते देख उन्होंने इस ग्रंथ को समाप्त कर ही डाला और स्यात् स्वदेश लौट गए।

इस ग्रंथ का नामकरण बहुत ही अच्छा हुआ है। नायक, कवि तथा विषय सभी का यह द्योतक हो गया है। इस ग्रंथ की आलोचना आगे की जाएगी।

शिवाबावनी—यह एक संग्रह ग्रंथ है जिस में उसके नाम के अनुसार शिवाजी की प्रशंसा के बावन छंद संगृहीत हैं। रायबहादुर पं० श्यामविहारी मिश्र द्वारा संपादित भूषण-ग्रंथावली में दिए हुए इस संग्रह के कुछ छंद विचारणीय हैं। उस का १४ वाँ कवित्त औरंगज़ेब की निन्दा में है और उससे शिवाजी से कोई संबंध भी नहीं है। उस संग्रह का तीसरा कवित्त

सरदार के शृंगार संग्रह में गंग कवि के नाम से दिया हुआ है। आठवाँ कवित्त शिवसिंह सराज में इंदु कवि के नाम से उल्लिखित है। ३८ वें कवित्त के विषय में कहा जाता है कि यह चिंतामणि के लिए बनाया गया है और उसके अंतिम पंक्ति में शिवराज के स्थान पर चिंतामणि होना चाहिए। तत्कालीन इतिहास में तीन चिमना जो मिलते हैं, जिनका शुद्ध संस्कृत नाम चिंतामणि होगा। इनमें एक चिमना जी नारायण थे, जो साहू की मृत्यु पर सन् १७५० ई० में पंतसचिव नियुक्त हुए थे। यह हो नहीं सकते क्योंकि इनका समय बहुत बाद का पड़ता है। दूसरे चिमना जी दामोदर मोघे थे, जिन्होंने मुगल हरम के कारागार से छुटकारा पाए हुए साहू जी का साथ दिया था। यह उस समय दक्षिण खानदेश के अध्यक्ष थे। तीसरे चिमना जी आपा प्रथम पेशवा बाला जी विश्वनाथ के द्वितीय पुत्र थे। इनका जन्म सन् १७०८ ई० में हुआ था। इन्हें सन् १७२० ई० में पण्डित की उपाधि मिली। सन् १७२६ ई० में यह ससैन्य गुजरात गए। सन् १७३० ई० में इनके पुत्र सदाशिवराव भाऊ का जन्म हुआ और इनकी स्त्री रुक्माबाई की मृत्यु हुई। दूसरे वर्ष गुजरात में अपने भाई बाजीराव के साथ चंबकराव धावदे पर विजय प्राप्त की। १७ दिसम्बर सन् १७४० ई० को इनकी मृत्यु हुई। यद्यपि इनके बड़े भाई की प्रसिद्धि अधिक है, पर यह भी उनसे किसी प्रकार घट कर नहीं थे। यह विद्याप्रेमी भी थे और शीलवान थे। बाजीराव इन्हें बहुत मानते थे। इन तीन चिमना जी में यदि कोई भूषण की इस रचना का नायक हो सकता है, तो यही हो सकता है। भूषण ने 'साहू को सराहों के सराहों कुत्रसाल को' कहा है और बाजीराव तथा चिमना जी दोनों ही साहू जी के मंत्री तथा सेनाध्यक्ष थे। चिमना जी ने स्लेच्छों पर कोई भी बड़ी विजय प्राप्त

नहीं की थी। भूषण ने अपनी सारी कृति में कहीं भी शुद्ध संस्कृत नाम रखने का प्रयत्न नहीं किया है, प्रत्युत बहुत कुछ नामों को बिगाड़ा ही है। वे चिमना जी नाम से प्रसिद्ध व्यक्ति के संस्कृत नाम को रखने क्यों गए। 'श्लेच्छ चतुरंग पर चिमना जी देखिए' पाठ मिलता भी नहीं। इसी कवित्त के भाव तथा शब्दावलीयुक्त भूषण के अन्य तीन कवित्त भी मिलते हैं। इस ग्रंथावली के शिवराज-भूषण का ५६ वाँ कवित्त 'इन्द्र जिमि जंभ पर' और बावनी का ३३ वाँ ३७ वाँ पद इसी भाव से पूर्ण हैं और चारों ही का अन्त इस प्रकार है—

त्यों मलिच्छ बंस पर सेर सिवराज है ॥ ५६ ॥

जहाँ पातसाही तहाँ दावा सिवराज का ॥ ३३ ॥

दिल्लीपति-दिग्गज के सेर सिवराज हो ॥ ३७ ॥

श्लेच्छ चतुरंग पर सिवराज देखिए ॥ ३६ ॥

प्रथम तीन में शिवराज ही रह सकता है। चौथे ही में पाठांतर 'चिंतामनि' कहा जाता है, पर पूर्वोक्त विचारों से यह पाठांतर ठीक नहीं है। यह शिवाजी ही के लिए रचा गया है।

सभा वाले संस्करण ही का ४८ वाँ पद शृंगार-संग्रह में निवाज कवि के नाम से त्रुत्रसाल की प्रशंसा में मिलता है और २७ वाँ पद साहित्य-सिन्धु में कवि दत्त के नाम दिया हुआ है। इस प्रकार के सब पद इस संस्करण में यथास्थान दिए हुए हैं और पाठांतर पाद-टिप्पणी में दे दिया गया है। इस संग्रह में जिन घटनाओं का उल्लेख हुआ है, उनकी तालिका सन् संवत् के साथ नीचे दी जाती है।

क्रम सं०	घटना	पद-सं०	विशेष सूचना
१	जावली के चंद्र- गव मोरे का मारा जाना ।	२८	सं० १७१२ वि० (सन् १६५५ ई०)
२	साम्राज्य के लिए दारा आदि भाइयों का युद्ध ।	३४	सं० १७१५ वि० (सन् १६५८ ई०)
३	अफ़ज़ल खाँ का मारा जाना ।	२८, ३१	सं० १७१६ (सन् १६५९ ई०)
४	परनाला दुर्ग	२८	सं० १७१७ (सन् १६६० ई०)
५	शायस्ता खाँ की दुर्दशा ।	२६	सं० १७२० (सन् १६६३ ई०)
६	सूरत की लूट, जमवंतसिंह का सिंहगढ़ न ले सकना ।	२५, २६	सं० १७२१ वि० (सन् १६६४ ई०)
७	शिवाजी का बाद- शाही दरबार में जाना ।	१४, १५	सं० १७२३ वि० (सन् १६६६ ई०)
८	काशी तथा मथुरा में मन्दिर ढहाना ।	१८-२०, ३४	सं० १७२६ वि० (सन् १६६९ ई०)
९	सब्रहेरि युद्ध ।	२४	सं० १७२८ वि० (सन् १६७१ ई०)

क्रम सं०	घटना	पद-सं०	विशेष सूचना
१०	विद्वानार विजय तथा सतारा पर अधिकार ।	५,३०	सं० १७३० वि० (सन् १६७० ई०)
११	राज्याभिषेक ।	३२	सं० १७३१ वि० (सन् १६७४ ई०)
१२	गोलकुंडा तथा बीजापुर जाना ।	५०	सं० १७३४—५ वि० (सन् १६७७ —६ ई०)

इस संग्रह में इस घटना-चक्र से यह ज्ञात हो जाता है कि सन् १६७६ ई० तक की घटनाओं का उल्लेख है। यह संग्रह भूषण ने ही किया था या बाद के किसी अन्य सज्जन ने किया है, यह ठीक नहीं कहा जा सकता। किंवदंती के अनुसार यह कहा जा सकता है कि किसी समय इन्होंने साहू महाराज को बाघन क़ंद सुनाए थे, पर वे ये ही बाघन क़ंद थे ऐसा निश्चय-पूर्वक नहीं कहा जा सकता। स्यात् इसी किंवदंती को सुनकर भूषण के काव्य के किसी प्रेमी ने यह संग्रह कर उसका यह नामकरण कर डाला हो।

इस संग्रह के प्रथम पाँच पद सेना के प्रयाण का प्रभाव वर्णन करते हैं और बाद के आठ पद में शत्रु-स्त्रियों की भय से क्या दुर्दशा हुई थी, यह दिखलाया गया है। पाँच व और पद भी शिवाजी के आतंक वर्णन से भरे हुए हैं। मुसलमानों के धार्मिक अन्याचार से शिवाजी द्वारा हिंदू धर्म के बचाने का आजपूर्ण वर्णन चार पाँच पदों में किया गया है। दो पद में मुगल दरबार

में इनकी धाक का अच्छा वर्णन हुआ है। शिवाजी के तलवार तथा पराक्रम के वर्णन भी दस बारह छंदों में बड़ी जोरदार भाषा में किए गए हैं। वास्तव में इस संग्रह ग्रंथ में भूषण के बहुत ही अच्छे चुने हुए पदों का एकत्रीकरण हुआ है।

छत्रसाल दशक—यह भी एक छोटा सा संग्रह है। सभा वाली ग्रंथावली में चौदह पद दिए गए हैं, जिनमें दो दोहों में छत्रसाल हाड़ा तथा छत्रसाल बुंदेला का उल्लेख करते हुए भी दूसरे ही की प्रशंसा की गई है। इसके बाद दो कवित्त छत्रसाल हाड़ा की प्रशंसा में है। जिनमें एक 'लाल' कवि कृत कहा जाता है। दोनों ही में भूषण उपनाम नहीं है। तीसरे पद में 'लाल' उपनाम दिया हुआ है और 'भूषण' उपनाम नहीं है। आठवें पद में भी 'भूषण' शब्द नहीं आया है। उसमें 'पंचम' शब्द आया है, जिसे एक सज्जन ने किसी कवि का उपनाम माना है। मिश्र बन्धुओं ने पाद-टिप्पणी में ठीक लिखा है कि पंचमसिंह बुंदेलों के पूर्वपुरुष थे, परन्तु उन्होंने इस शब्द का इस कवित्त से क्या सम्बन्ध है, यह नहीं बतलाया है, जिससे इस शब्द को कवि का उपनाम मानने वाले सज्जन ने उन पर आक्षेप सा किया है। 'पंचम' शब्द रुढ़ि हो कर आड़का आदि के बुंदेला नरेशों द्वारा पदवी के समान धारण किया जाता है।* इस पद में यह शब्द छत्रसाल के लिए आया है और हो सकता है कि किसी पंचम कवि ने ही इसे बनाया हो, पर बिना प्रमाण के उसे निकालना अनुचित है। इस प्रकार इनमें तीन छंद संदिग्ध हैं, इसलिए इस दशक में नहीं रखे गए हैं और यहाँ उद्धृत कर दिए जाते हैं।

* मतिराम ने वृत्तकौमुदी में राजवंश वर्णन में लिखा है—

हुव चन्द्रभान बुंदेल सोह बीरसिंह पंचम सुअन।

यहाँ पंचम शब्द बीरसिंह देव का विशेषण हो कर आया है।

निकसत ग्यान ते मयूखें प्रलै भानु कैसी,
 फारैं तम तोम ज्यों गयंदन के जाल को ।
 लागत लपटि कंठ बेरिन के नागिन सी,
 रुद्रहि रिभावै दै दै मुंडन के माल को ॥
 'लाल' क्षितिपाल कुत्रसाल महाबाहु बली,
 कहाँ लौं बखान करौं तेरी करघाल को ।
 प्रतिभट कटक कटोले केते काटि काटि,
 कालिका सी किलकि कलेऊ देत काल को ॥
 दारा और औरैंग लरे हैं दोऊ दिल्ली वाल,
 एक भाजि गयो एक मारे गये चाल में ।
 बाजी करि दगाबाजी जीवन न राखत है,
 जीवन बचाये ऐसे महाप्रलै काल में ॥
 हाथी ते उतरि हाड़ा लड़्यो लोह लंगर दै,
 कहै 'लाल' वीरता विराजें कुत्रसाल में ।
 तन तरवारिन में मन परमेश्वर में,
 पन स्वामि कारज में माथो हरमाल में ॥
 चले चन्दवान घनवान औ कुहूक वान,
 चलत कमान धूम आसमान कुवै रहो ।
 चली जमडाहैं बाढ़वारें तरवारें जहाँ,
 लोह आंच जेठ के तरनि मान है रहो ॥
 ऐसे समै फौजें बिचलाई कुत्रसाल सिंह,
 अरि के चलाये पायँ बीर रस चवै रहो ।
 हय चले हाथी चले संग छोड़ि साथी चले,
 ऐसी चलाचली में अचल हाड़ा है रहो ॥

स्फुट पद

इस संग्रह में फुटकर साठ पद एकत्र हुए हैं। इनके सिवा भूषण के नाम और भी कुछ पद पत्र पत्रिकाओं में प्रकाशित हुए हैं, पर उन पर इतनी भी श्रद्धा न हुई कि उन्हें इस संग्रह में स्थान दिया जाता। इन साठ पदों में सं० १०, ११, १४, १६, १६, २०, ३३, ४४, ४७, ४८ में 'भूषण' उपनाम नहीं आया है और इस कारण संदिग्ध हैं। भूषण का समय निश्चित करने में भी इस संग्रह के पदों पर विशेष विश्वास करना ठीक नहीं ज्ञात होता। प्रसिद्ध कवियों के नाम पर अपनी रचनाओं को प्रचार करने का साधारण मनुष्य कभी कभी साहस कर बैठते हैं। इसलिए जब तक किसी विश्वस्तसूत्र से यह निश्चित न हो जाय कि अमुक कृंद भूषणकृत ही है, तब तक उसे किसी तर्क का आधारभूत मान लेना अनुचित है। इन साठ पदों में बत्तीस शिवाजी की प्रशंसा में हैं, बारह शृंगार रस के हैं और बचे हुए सोलह कृंदों में तेरह व्यक्तियों की प्रशंसा की गई है। इन पदों का संग्रह जिन पुस्तकों तथा पत्रिकाओं से हुआ है, उनके नाम आदि संपादन-सामग्री की सूची में दिया गया है।

इनके सिवा जिन अन्य ग्रंथों को भूषणरचित बतलाया जाता था। उनमें से अभी तक एक भी प्राप्त नहीं है।

५-आलोचना

हिंदी साहित्येतिहास के भक्तिकाल के 'स्वांतः सुखाय' रचना करने वाले भक्तप्रवर महाकवियों का समय बीत चला था और उनके स्थान पर वे कवि अपनी प्रतिभा विकसित करने

लगे थे, जिन्हें केवल विष्णु भगवान् ही का केवल ध्यान नहीं रहता था; प्रत्युत उनकी आदि शक्ति महालक्ष्मी का भी वे आह्वान करना अपना प्रधान कर्तव्य मानते थे । वे कंभन-दास जी के साथ ' लाल गिरिधर चिनु और सर्व वैकाम ' नहीं कह उठते थे । वे चंचला लक्ष्मी की प्राप्ति में सतत यत्नवान् रहते थे । ऐसे कवियों को इस प्रयास में ऐसे आश्रयदाताओं की खोज हुई जो धन वैभव समृद्धि पूर्ण होते हुए उदार भी हों । मुगल साम्राज्य का प्रभाव भारत में पूर्णरूपेण व्याप्त हो रहा था, जिससे बहुत से देशी राजे तथा कुछ मुसलमान नवाबादि भी सम्राट् की कुछ सेवा बजा कर बचा समय शांतिपूर्वक विषयवासना भोग-विलासादि में व्यतीत करने लगे थे । सम्राट् अकबर, जहाँगीर तथा शाहजहाँ तीनों ही काव्य, कामिनी, कांचन के उत्कृष्ट गुणग्राहक थे और इनके अधीनस्थ राजे तथा अमीरगण भी अपने सम्राट् के इस कार्य में सच्चे अनुवर्ती थे । जिस प्रकार ये लोग कवियों की केकिल वाणी द्वारा अपनी सभा का मनोरंजन कराने के उत्सुक थे और जिन्हें वे अपने दरबार का एक मुख्य अंग मानते थे उसी प्रकार उस समय कविगण भी एक नहीं अनेक आश्रयदाताओं की खोज में लगे रहते थे और थोड़े से स्वरचित छंदों को कुछ आगे पीछे नये छंद मिला मिला कर कई आश्रयदाताओं के नाम पर ग्रंथ रूप में ग्रथित कर कई नामकरण करते फिरते थे । इस कार्य का कारण धनलिप्सा ही था कि थोड़े से श्रम का जितना अधिक पुरस्कार प्राप्त हो सके वसूल कर लिया जाय । तात्पर्य यह कि धनलोभ के कारण ये कविगण अपने आश्रयदाताओं के मनोनुकूल कविता का उन्हें प्रसन्न रखने में बराबर प्रयत्नशील रहते थे । यों ही वे आश्रय में काफी धन प्राप्त कर लेते थे और अधिक की आशा

कम हो जाती थी तो वे भट्ट दूमरे आश्रय की खोज में निकल पड़ते थे। यही कारण है कि इस काल के महान् महान् कवि भी एक एक दर्जन आश्रयदाताओं के शरणापन्न हो रहे थे। सारांश यह कि इस रीतिकाल में शृंगार रस की प्रधानता इस कारण न थी कि वह जन साधारण के मनोनुकूल थी; प्रत्युत् वह तत्कालीन आश्रयदाताओं की मनोनीत थी और इसी से कवियों ने एक प्रकार विवश होकर उसी रस में शराबोर करके कविता धारा प्रवाहित कर दी थी अर्थात् काव्य-कामिनी का एकीकरण कंचन की प्राप्ति का साधन हो रहा था।

हिन्दी-पद्य-साहित्य का आरंभ हुए पाँच ऋणतादि से अधिक नीचे चुके थे, काव्य-कला प्रौढ़ हो चुकी थी और उसका भांडार भी अनेकानेक रत्नों से समुज्ज्वल हो रहा था। उस कला के रस अलंकारादि सभी अंगों के निरूपण की अब विशेष आवश्यकता थी। काव्य-कला के प्रत्येक अंग की सूक्ष्म विवेचना होने का समय आ गया था और यह कार्य उन गंभीर मननशील विद्वान् कवियों का था, जो आचार्यत्व के पद के पूर्ण रूप से योग्य थे। पर देखा जाता है कि हिंदी के इन रीतिग्रंथ-लेखकों की कवित्व-शक्ति के आगे उनका आचार्यत्व नतशिर हो गया था और काव्यांगों की विवेचना, नये सिद्धांतादि का प्रतिपादन, खंडन मंडन दूर कुछ पर्याप्त या अपर्याप्त परिभाषा देकर ही वे कवि अपना काव्य-कौशल दिखलाने में लग जाते थे। संस्कृत-साहित्य में, जो हिंदी की जननी है, ऐसा नहीं हुआ है। भामह तथा दंडी से लेकर पंडितराज जगन्नाथ तक के आचार्य-कवि-परंपरा ने रीतिग्रंथ लिखने में अपनी आचार्यत्व-शक्ति का ही पूर्ण उपयोग किया है और केवल उदाहरण देने के लिये ही अपनी कवित्व-शक्ति दिखलाई है। आचार्यत्व को

प्रधान रख कर कवित्व को गौण माना है । इनके उदाहरण काव्यागों की विवेचना करने में उसे अधिक स्पष्ट करने के लिए रचे गये हैं, न कि हिंदी आचार्यों के समान उदाहरणों में आए हुए अलंकार, नायिकाभेदादि का दांहां में अपर्याप्त लक्षण देकर उन्हें ग्रन्थ का रूप दे दिया गया है । तात्पर्य यह कि हिन्दी के प्रौढ़ महाकविगण भी इस प्रकार के ग्रन्थ लिखने में पूर्णतया सफल नहीं हुए हैं ।

भक्तिकाल में भी शृंगार रस ही को प्रधानता थी । कृष्णा-पासक वैष्णव संप्रदाय के भक्त कवियों ने इस रसराज के देवता श्रीकृष्ण भगवान ही की बाललीला का विशेष कर वर्णन किया है । बाललीला से तात्पर्य ब्रजलीला ही से है, क्योंकि श्रीकृष्ण जी अपने भाई बलराम जी के साथ चौदह वर्ष की अवस्था में मथुरा चले आए थे । सूरदास जी से महाकवि के वर्णन में भी इसी लीला का आश्रित्य है और प्रवासलीला तो बहुत संक्षेप में कही गई है । मथुरागमन के बाद तो उद्धव-गोपी संवाद रूप में विप्रलंभ शृंगार का अविरल करुण-स्नान बहाया गया है ; परन्तु यह सब बाल-क्रीड़ा, प्रेम के अनेक रूप, संयोग तथा वियोग शृंगार सभी के वर्णन परम पुनोत्त वाणी में कहे गए थे । यही रसराज भक्तिकाल के अनन्तर गीतिकाल में भी प्रधान रहा, पर उसमें प्रथम काल की जो पवित्रता थी वह दूसरे काल में नहीं रही और मानव प्रकृति की तुष्टि के लिए रची जाने के कारण इसमें भोगविलास के उत्तेजक नायिका-भेद, पटञ्जल, नखशिख आदि के वर्णन प्रचुरता से प्राप्त हैं । यही कारण था कि इस प्रकार की रचना से अगवित्र हुई वाणी को पवित्र करने के लिए भूपण ने शिवाजी के चरित्र रूपी सर में उसे नहलाया था ।

रीतिकाल की हिन्दी कवि-परम्परा में सब से पहिला नाम कृपाराम जी का आता है, जिन्होंने सं० १४६८ ई० में अपनी 'हिततरंगिनी' समाप्त की है। यह ग्रन्थ दोहों में रमरीति पर सुन्दर ब्रजभाषा में लिखा गया है। इसके बीस वर्ष बाद ही गोपा कवि ने रामभूषण और अलंकारचन्द्रिका नामक दो ग्रन्थ लिखे थे। चरखारी वाले मोहनलाल मिश्र ने सं० १६१६ वि० के लगभग शृंगार-सागर नामक एक पुस्तक लिखा। इसी समय के लगभग करनेस कवि हुए हैं, जिन्होंने कर्णाभरण, श्रुतिभूषण और भूपभूषण तीन ग्रन्थ लिखे। यह नरहरि कवि के साथ अकबर के दरबार में भी जाते थे। इसके अनंतर नवाब 'रहीम' खानखाना का नायिका भेद तथा बलभद्र मिश्र का नखशिख और दूषण-विचार लिखा गया था। इन्हीं बलभद्र मिश्र के छोटे भाई आचार्य महाकवि केशवदास थे, जिन्होंने शास्त्रों के अनुसरण पर काव्य के सभी अंगों का विवेचन किया है। इनके बनाए आठ ग्रन्थ हैं जिनमें रसिकप्रिया तथा कविप्रिया रीति ग्रन्थ हैं। प्रथम में रसनिरूपण और द्वितीय में अलंकार, गुणदोष आदि का विवेचन है। हिन्दी साहित्यक्षेत्र में यही प्रथम आचार्य कवि हुए हैं, जिन्होंने संस्कृत के आचार्य कनि दंडी आदि की प्रथा पर काव्यरीति का पूरा प्रतिपादन किया है। इनके रीति-ग्रन्थों का रचनाकाल खोज के अनुसार सं० १६४८ वि० के लगभग है। इसके अनंतर प्रायः पचास वर्ष तक के बीच कोई भी उल्लेखनीय रीति-ग्रन्थ का निर्माण नहीं हुआ था।

सं० १७०० वि० के लगभग चिन्तामणि आदि त्रिपाठी बंधुओं की रचनाओं के साथ रीति ग्रन्थों की एक नई अखंडित परंपरा चली जो प्रायः वर्तमान काल तक चली आई। पर यह परंपरा दंडी भामह आदि के पूर्ण पर्यालोचना के अनुकरण को छोड़कर

केवल कवित्व-शक्ति दिखलाने की पूर्वाक्त प्रथा पर चली थी। इसी बीच अति संक्षेप में चन्द्रालोक की प्रथा पर लक्षण तथा उदाहरण दोनों ही को छोटे छोटे कन्दों में ठूस कर दो एक ग्रंथ लिखे गए थे। हिन्दी के आचार्य कवि महाराज यशवंतसिंह जोधपुर नरेश ने इसी शैली पर भाषाभूषण नामक अलंकार ग्रन्थ दोहों में बनाया था। इसके अनन्तर दोहों में अलंकारादि के लक्षण देकर उदाहरण में सवैया तथा कवित्त दे देने की प्रथा भी चल निकली। इस ढंग के ग्रन्थों का हमारे साहित्य में भरमार सा हो गया है, जिनके विषय में यहाँ विशेष लिखने की कोई आवश्यकता नहीं है।

महाकवि भूषण भी इसी काल के कवि थे और इस काल की प्रायः सभी विशेषताएँ इनमें हैं, पर इन विशेषताओं के होते भी इनकी एक निजी विशेषता यह है कि इन्होंने इस काल के अनुरूप शृंगाररस प्रधान कविता न कर वीररस-पूर्ण कविता की है। अलंकार क्या है, उसकी उपादेयता क्या है, इत्यादि की विवेचना न कर इन्होंने भट्ट उपमा से अलंकार-वर्णन आरम्भ कर दिया है। लक्षण प्रायः अपर्याप्त हैं और कहीं कहीं भ्रमपूर्ण हैं। यहाँ अपर्याप्त लक्षण से किस प्रकार भ्रम फैलता है इसके दो उदाहरण भूषण की कृति ही से दिए जाते हैं। यह इसलिए कि एक संपादकप्रवर स्वयं इन भ्रम में पड़े हुए दिखलाई पड़े, जिससे उनके ही दो भ्रम यहाँ लिखे जाते हैं। जब ऐसे योग्य संपादकगण इस प्रकार के अस्पष्ट लक्षणों से भूल में पड़ जाते हैं तब साधारण पाठकों तथा छात्रों को समझने में कितनी कठिनाई पड़ती होगी यह दुर्ज्ञेय नहीं है।

एक अलंकार का नाम विभावना है जिसके छ भेद होते हैं। भूषण ने केवल चार ही दिये हैं। दो भेदों का लक्षण एक ही दोहे में इस प्रकार दिया है—

जहाँ हेतु पूरन नहीं उपजन है पर काज ।

कै अहेतु ते और यों द्वै विभावना साज ॥ १८८ ॥

इसका अर्थ एक संपादक लिखते हैं कि 'जहाँ कारण पूर्ण होने के पहिले कार्य उत्पन्न हो जाता है, वहाँ हेतु विभावना और जहाँ बिना कारण ही कार्य की उत्पत्ति हो, वहाँ अहेतु विभावना नाम से विभावना के दो और भेद हैं।' इसके पहिले एक विभावना की आप यों व्याख्या कर चुके हैं—किसी हेतु के बिना ही कार्य होने के वर्णन का विभावना कहते हैं। इन दोनों—विभावना तथा अहेतु विभावना—की व्याख्याओं में केवल इतना भेद है कि एक में 'हेतु' शब्द के बदले 'कारण' शब्द आया है; पर ये दोनों पर्यायवाची हैं। ज्ञात नहीं कि आपने इन दोनों विभावनाओं में क्या भेद समझाया है? वास्तव में जिस विभावना को आपने अहेतु विभावना नाम दिया है उसका 'अ' अभावसूचक न होकर वैपरीत्य सूचक है अर्थात् किसी कार्य का जो कारण न हो उसके उसे उसका कारण वर्णन करना एक प्रकार का विभावना है। इसका उदाहरण भा इसे इस प्रकार स्पष्ट करता है 'कारे घन उमड़ि अंगारे बरपत हैं।' काला मेघ जल बरमाता है, अग्नि नहीं, इसलिये मेघ यहाँ अग्निवर्षा का अहेतु है। 'हेतु' विभावना की व्याख्या भी कुछ भ्रामक है। मूल 'जहाँ हेतु पूरन नहीं' का अर्थ यह है कि कार्यात्पत्ति के लिए जो कारण होना चाहिए वह पूरा न हो अर्थात् अपूर्ण कारण से पूरे कार्य का हो जाना दिखलाया जाय। जैसे, दो सौ सवार लेकर सौ हजार के सेनापति को परास्त कर डालना। किसी कारण से अधिक कार्य के होने को दिखलाना ही इस विभावना का ध्येय है। इसी प्रकार कुं० सं० २७१ पर 'मिथ्या-ध्यवसित' अलंकार की परिभाषा यों दी है—

भूठ अर्थ की सिद्धि को भूठों बरतन आन ।

मिथ्याध्यवसित कहत हैं भूपन मुकवि मुजान ॥

संपादक जी इसकी व्याख्या यों करने हैं—‘किसी भूठे अर्थ को सच्चा साबित करने के लिए कोई अन्य भूठ कहना मिथ्या-ध्यवसित है ।’ इसका उदाहरण कवि ने एक दोहे में यों दिया है—

पग रन में चल यों लसैं ज्यों अंगद पग ऐन ।

ध्रुव सो भुव सो मेरु सो सिध सरजा को वैन ॥

दूसरी पंक्ति का अर्थ करते हुए लिखते हैं—‘शिवाजी का वचन ध्रुव, पृथ्वी और मेरु के समान अचल है । (इस दोहे में शिवाजी के लिए भूठी उपमाएँ कही गई हैं) ।’ इस व्याख्या से कहाँ तक अर्थ स्पष्ट हुआ है, यह विवेचनीय है । चन्द्रालोक में इस अलंकार का मिथ्याध्यवसाय के नाम से एक श्लोक में लक्षण तथा उदाहरण दोनों यों दिया गया है—

स्यान्मिथ्याध्यवसायश्चेत् असती साध्यसाधने ।

चंद्रांशुसूत्रप्रथितां नमः पुष्पस्रजंवहः ॥

जहाँ साध्य तथा साधन दोनों ही मिथ्या हों वहाँ यह अलंकार होता है । जैसे, चन्द्रकिरणों द्वारा गुही गई आकाश-पुष्पों की माला को धारण करना मिथ्याकल्पना मात्र है । भूपण जी भी यही कह रहे हैं पर उनकी शब्दावली कुछ अस्पष्ट है, जिससे अर्थ करने में संपादक महाशय भ्रम में पड़ गये और एक भूठ को अन्य भूठ कह कर सच्चा साबित करने लगे । वास्तव में कवि यही कहता है कि भूठे साधन द्वारा किसी भूठी बात की सिद्धि का प्रयत्न करना मिथ्याध्यवसित अलंकार कहलाता है ; पर इसे न समझ कर अर्थ करने में गड़बड़ी होगई । जो उदाहरण कवि ने दोहे में दिया है वह भी अस्पष्ट है, पर

कवित्त वाले उदाहरण को साथ पढ़ लेने से दोहे की अस्पष्टता दूर हो जाती है। पूरे दोहे का अर्थ इस प्रकार है—

शिवाजी का पग रण में ठीक उम्मी प्रकार चल है जिस प्रकार (बालिपुत्र) अंगद का (रावण की सभा में) था। शिवाजी का वचन ध्रुव, पृथ्वी और मेरु के समान चल है। पहिली पंक्ति ही का 'चल' शब्द द्वितीय पंक्ति में उम्मी प्रकार लागू है जिस प्रकार दूसरी का 'शिव सरजा को' पहिलो में 'पग' के पहिले प्रयुक्त होगा। अर्थात् दोनों पंक्ति का मिलाकर अर्थ करना चाहिए। संपादक जी ने 'चल' के स्थान पर 'अचल' रखकर इस अलंकारत्व ही का लोप कर दिया है। उस पर टिप्पणी भी यह दे दी है कि शिवाजी के लिए झूठी उपमाएँ दी गई हैं। इस अलंकार का तो यही तात्पर्य है कि कवि दोनों ही बातें अशुद्ध कहता है, पर पाठकों या श्रोताओं के मन में उसका उलटा शुद्ध अर्थ जम जाता है। शिवाजी का वचन मेरु के समान अचल है, यह अपना अलंकार है। शिवाजी का वचन मेरु के समान चल है, यह मिथ्याध्यवसिन है। मेरु पर्वत अचल है, यह सभी जानते हैं तब उसे चल कहना मिथ्या है। शिवाजी भी दृढ़वती हैं और उन्हें झूठा कहना भी मिथ्या है, पर इस झूठी बात का मेरु की चलायमानता से समता करते हुए मिद्ध करना ही मिथ्याध्यवसित अलंकारत्व है।

रीतिकाल की रीति के अनुसार अपर्याप्त लक्षणों द्वारा किस प्रकार भ्रम फैलता है इसका दिग्दर्शन हो चुका। भूषण के लक्षणों तथा उदाहरणों के विषय में अन्यत्र विचार किया गया है, इसलिये इस विषय पर यहाँ इतना ही अलं है।

जैसा लिखा जा चुका है, रीतिकाल का प्रधान रस शृंगार ही रहा है। यद्यपि प्रायः सभी कवियों ने अपने अपने आश्रय-

दाताओं का प्रशंसा में वीर रस की कविता की है, उनके आंतक, प्रभुत्व तथा सेनादि के प्रयाणादि का भी अच्छा वर्णन किया है, पर वह केवल प्रथापालन मात्र था या अपने आश्रय देने वालों का परिचय देना आवश्यक समझ कर निर्मित हुआ था। ऐसे वर्णन, जो इन कवियों के उत्साहपूर्ण हार्दिक उद्गार नहीं थे, प्रयुक्त बलान् आवश्यक समझ कर या प्रथापालन के लिए बनाये गए थे, कभी लोकप्रिय नहीं हो सकते थे। उनसे उन कवियों के आश्रयदाताओं के विषय में कुछ जानकारी अवश्य मिल जाती थी, जिनमें कितनों का स्थान इतिहास में पता भी नहीं है। कभी कभी अच्छे अच्छे सुकवियों ने साधारण पुरुषों का ऐसी बड़ा चढ़ाकर वर्णन किया है कि वे पाठकों की सहानुभूति के बदले उनकी हँसी के पात्र हो जाते हैं। भूषण ने ऐसा एक प्रकार कहना चाहिए कि नहीं किया है। वे शृंगार-रसप्रधान काल में हो कर भी उस काल के वीर रस के एक मात्र महाकवि हो गए हैं। इन्होंने शृंगार रस की भी कुछ कविता की है, पर वह बहुत थोड़ी प्राप्त है। यहाँ वीररस विवेच्य है।

अनुभाव-विभावादि की सहायता से स्थायीभाव में जो प्रबल आनन्दातिरेक होता है वही रस कहलाता है। काव्य के श्रवण अथवा नाटक के दर्शन से आलंबन उद्दीपन विभाव, कटाक्ष आदि अनुभाव, स्तंभ आदि सात्विक भाव तथा निर्वेद-ग्लानि आदि संचारी भाव के द्वारा अभिव्यक्त हृदयस्थित रति, उत्साह आदि स्थायीभाव ही शृंगार, वीर आदि रसों में परिणत हो जाते हैं। विभाव के आलंबन और उद्दीपन दो भेद हैं। स्थायी-भावों के उद्बोधन के जो परिपोषक हैं वे विभाव कहलाते हैं। नायक प्रतिनायक नायिकादि, जिनका आश्रय लेकर रस की उत्पत्ति होती है, वही आलंबन हैं और जिनसे रस-निष्पत्ति होने

पर उद्दीप्ति प्राप्त हो रही उद्दीपन है । विभावो द्वारा उद्बुद्ध स्थायीभाव को बाहर प्रकट करने वाले कार्य अनुभाव कहलाते हैं । अनुभाव ही में परिगणित पर अंतःकरण के विशेष धर्म मन्व मे उत्पन्न स्तंभ स्वेदादि आठ सात्विक भाव होते हैं । दोनों ही शारीरिक विकार हैं । स्थायीभाव में क्षण मात्र के लिए उत्पन्न और नष्ट होने वाले जो अनेक गौण अस्थिर भाव होते हैं, वे ही व्यभिचारी या संचारी भाव कहलाते हैं ।

रस आठ हैं, जिनके नाम शृङ्गार, वीर, करुण, हास्य, रौद्र, वीभत्स, भयानक और अद्भुत हैं । भूषण की कविता में वीर रस प्रधान है, इसलिए इसी रस के विभाव अनुभावादि का यहाँ उल्लेख किया जाता है । वीर रस का स्थायीभाव उत्साह है । नायक तथा प्रतिनायक आलंबन विभाव और विजयेच्छा रूप में वेश आदि उद्दीपन है । युद्ध आदि के सहायक शस्त्र, सेना आदि का अन्वेषण, तैयारी अनुभाव हैं । धैर्य, मति, गर्व, स्मृति, तर्क और रोमांच व्यभिचारी हैं । वीर चार प्रकार के माने जाते हैं—दानवीर, दयावीर, धर्मवीर और युद्धवीर । उत्साह के स्थायीभाव होने के कारण कुछ आचार्य कर्मवीर, विद्यावीर आदि अनेक और भेद भी मानना उचित समझते हैं, जो पूर्वोक्त चारों भेद के अंतर्गत नहीं आसकते । एक उदाहरण लेकर वीर रस के इन अंगों के क्रमिक विकास पर विचार कीजिए—

साजि चतुरंग वीर रंग में तुरंग चढ़ि,
सरजा सिवाजी जंग जीतन चलत है ।
'भूपन' भनत नाद बिहद नगारन के,
नदी नद मद गैवरन के रलत है ॥
पेल फेल खेल भैल खलक में गैल गैल,
गजन की ठेल पेल सैल उसलत है ।

तारा से तरनि धूरि-धारा में लगत जिमि,

थारा पर पारा पारावार यों हलत है ॥

इस कवित्त में शिवाजी के विजय-प्रयाण का वर्णन किया गया है। युद्ध के लिए शिवाजी के हृदय में जो उत्साह है वही स्थायीभाव इस पद में दर्शाया गया है। इस भाव का रस का रूप देने के लिए विभावादि आवश्यक हैं। यह युद्धोत्साह दो पद के बीच में स्थित रह सकता है। शिवाजी उत्तम प्रकृति वीर-नायक तथा जिस पर चढ़ाई की जा रही है वह विश्रुती प्रति-नायक आलंबन हैं। विजय की इच्छा से जो प्रयत्न किया जा रहा है वही उद्दीपन है। चतुरंगिणी सेना का सजाना इत्यादि अनुभाव हैं। युद्ध विजय करने ही को चलना, खलक में खलभल मचाना आदि गर्व, स्मृति आदि संचारियों की सूचना देता है। इस प्रकार इस पद में वीर रस का अच्छी प्रकार परिपाक हुआ है। अब भूषण को समग्र कविता पर इसी प्रकार विवेचना करने का प्रयत्न किया जाता है।

वीर रस का स्थायीभाव उत्साह अत्यंत अमूल्य वस्तु है जो प्रेम से बढ़ कर न हाने पर भी उससे कम नहीं है। प्रेम में भी उत्साह की आवश्यकता है और उसके बिना वह प्रेम पंगु हो जाता है। जिस प्रकार शृङ्गार रस का परिपाक नायक नायिका का आलंबन मिलने से होता है उसी प्रकार वीर रस का परिपाक नायक तथा प्रतिनायक का आलंबन लेकर होता है। नायक में जितना उत्साह प्रतिनायक को विजय करने के लिए होता है उतना ही प्रतिनायक में भी नायक के प्रति रहता है। दोनों ही पक्ष में समान रूप से एक दूसरे पर विजय प्राप्त करने का उत्साह बना रहता है। दानी में दान देने का और याचक में ईप्सित धन पाने का समान उत्साह रहता है। महाकवि

भूपण ने यह रस चुनकर जितनी तत्सामयिक समाज की आवश्यकता समझने की अपनी अनुभवशालीनता दिखलाई है उससे बढ़कर अपने नायक के चुनने में बुद्धिमानी दिखलाई है। यद्यपि इनके दर्जनों आश्रयदाता रहे हों, पर उन सब की इनकी प्रशंसा विद्वन्मंडली तथा जनसाधारण में आदृत न होती यदि वे प्रातःस्मरणीय महाराज कुवर्पति शिवाजी भासला का अपनी वीर-रसमयी कविता का आलंघन न बनाते। पन्नाराज्य-संस्थापक महाराज कुवर्पाल भी ऐसे ही एक वीर हो गए हैं। भूपण ने शिवाजी ही पर विशेष कविता की है और उनमें वीर रस के चारों प्रधान भेद का आरोपण किया है। अनन्वय अलंकार का उदाहरण देते हुए तथा शिवाजी की दानवीरता का वर्णन करते हुए उन्हें उन्हीं सा कहा है—

साहि-तनै सरजा तब द्वार,
 पतिच्छन दान की दुंदुभि बाजें ।
 भूपन भिच्छुक भीरन का,
 अति भोजहु ते बढि मौजनि साजें ॥
 राजन का जन, राजन का, गनै ?
 साहिन में न इती छवि छाजें ।
 आजु गरीबनेवाज मही पर,
 ता सो तुहा सिधराज बिराजें ॥

धर्म के रक्षक धर्मवीर शिवाजी ही ने उस समय हिंदू-धर्म की कहाँ तक रक्षा की थी यह कवि इस प्रकार कहता है—

कुंभकर्न अजुर औतारी अवरंगजेब,
 कीन्ही कल्ल मथुरा दोहाई फेरी रब की ।
 खोदि डारे देवी देव सहर मुहल्ला बाँके,
 लाखन तुरुक कीन्हें छुटि गई तब की ॥

भूषण भनत भाग्या कासीपति विस्वनाथ,
 और कौन गिनती में भूली गति भव की ।
 चारों बर्न धर्म क्वाड़ि कलमा नेवाज पढ़ि,
 सिवाजी न हो तो तौ सुनति होति सब की ॥

अब केवल एक ही सवैया यहाँ और उद्धृत की जाती है,
 जिसमें भूषण ने स्वयं शिवाजी में दान, दया, युद्धप्रियता आदि
 अनेक प्रकार की वीरता का उल्लेख किया है—

सुंदरता गुरुता प्रभुता भनि,
 भूषण होत है आदर जा में ।
 सज्जनता औ दयालुता दीनता,
 कोमलता झलकै परजा में ॥
 दान कृपानहु को करिबो,
 करिबो अभै दीनन को बर जा में ।
 साहन सो रन टेक बिबेक,
 इते गुन एक सिवा सरजा में ॥

कवि को जिस प्रकार सौभाग्य से शिवाजी से नायक मिल
 गए थे, उसी प्रकार प्रतिनायक भी औरंगजेब सा मिल गया
 था, जो प्रबल प्रतापी सम्राट् होने पर भी हिंदू जाति के लिए
 महान् अत्याचारी प्रसिद्ध हो रहा था । कवि ने इस प्रकार संयोग
 से प्राप्त नायक तथा प्रतिनायक का ऐसा चित्र खींचा है कि
 पाठकों की एक के प्रति जितनी अश्रद्धा तथा क्रोध बढ़ता जाता
 है, उतनी ही दूसरे के प्रति श्रद्धा और महानुभूति भी बढ़ती
 जाती है । यही भूषण की कविता की लोकप्रियता की कंजी है ।
 जिस प्रकार कवि ने एक ओर शिवाजी को विष्णु, राम, कृष्ण
 आदि का अवतार वर्णित कर ऊँचे उठाया है, उसी प्रकार दूसरी

और 'कम्भकर्ण औतारी अवरंगजेब' के अत्याचारों का वर्णन किया है।

कबले की ठौर बाप बादशाह साहजहाँ,
ताकें केंद कियो मानो मकें आगि लाई है।
बड़ा भाई दारा बाको पकरि कें केंद कियो,
मेह हू नाहिं माँ को जाये मगो भाई है ॥
बधु तो मुगद बकस बादि चूक करिबे को,
बीच दै कुरान खुदा की कसम खाई है।
भूपन सुकवि कहै सुनो औरंगजेब पते,
काम कीन्हें फेरि पातसाही पाई है ॥

इसे तथा ऐसे वर्णन को पढ़कर औरंगजेब और उसकी बादशाही पर सभी को घृणा होगी। साथ ही अन्य धर्म वालों पर उसके गत्तसी अत्याचार का वर्णन जो पढ़ेगा उसे उस पर रक्तो भर भी सहानुभूति नहीं रह जाएगी। 'कल्ल आम, दंवल गिरावतें' आदि का अभी ऊपर उल्लेख हो चुका है। इस प्रकार प्रतिनायक के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न करते हुए भी उसके प्रबल प्रताप का वर्णन किया गया है, जिस से उस पर विजय प्राप्त करने वाले नायक का अत्युत्कर्ष दिखलाया जा सके।

जीति रही औरंग में सबै कुत्रपति झाँड़ि।
तजि ताहू को अब रही सिव सरजा कर माँड़ि ॥

जाहि देत दंड सब डरिकै अखंड सोई दिल्ली दलमली तो
तिहारी कहा चली है ?

प्रतापी प्रतिनायक के प्रति पूर्णतया अश्रद्धा उत्पन्न कर उसके प्रतिस्पर्धी नायक के प्रति जनता की सहानुभूति यों आकर्षित की है—

वेद राखे विदित पुरान राखे मार युन,
 रामनाम राख्यो अति रमना सुघर में ।
 हिंदुन की चांटी रोटी राखी है सिपाहिन की,
 काँधे में जनेऊ राख्यो माला राखी गर में ॥

मीढ़ि राखे मुगल मरोड़ राखे पातसाह,
 बेरी पीमि राख्यो बरदान राख्यो कर में ।
 राजन* की हद राखी तेग बल सिवराज,
 देव राखे देवल स्वधर्म राख्यो घर में ॥

इस कथन से अन्याचार-पीड़ित हिन्दुओं के हृदय में शिवाजी के प्रति सहानुभूति उमड़ पड़ती है और 'आय धर्या हरि ते नर रूप पै काज करै सबही हरि के' कह कर उस पर श्रद्धा की अटल सत्ता स्थापित कर दी जाती है ।

इस प्रकार कवि ने आलंवन को स्थापित करके उसकी उद्दीप्ति के लिए भी वर्णन रखे हैं । ऋषपति शिवाजी महाराज ने अपने जीवन का जो ध्येय बना रखा था उसे भी कवि ने दिखलाया है । दक्षिण के सुलतानों तथा उत्तर से दक्षिण की ओर बढ़ती हुई मुगल शक्ति को दमन करते हुए स्वधर्म और स्वदेश की रक्षा के लिए ही इनके सब प्रयास थे । उस समय स्वधर्म की क्या दशा थी और इनके प्रयत्न से क्या हुआ यह कवि दिखलाता है —

यों कवि भूषन भाषत हैं यक तौ पहिले कलिकाल की सैली ।
 तापर हिंदुन की सब राह सु नौरंगसाह करी अति मैली ॥
 साहिनने शिव के डर सेां तुरकौ गहि बारिधि की गति पैली ।
 वेद पुरानन की चरचा अरचा द्विज देवन की फैली ॥

शिवाजी का हिंदू, हिंदुस्थान तथा हिन्दू धर्म पर इतना प्रेम

था और वह इसकी रक्षा में इतने दत्तचित्त हो रहे थे कि इनका पृथ्वी पर एक मात्र यही काम रह गया था ।

काज मही शिवराज बली हिन्दुवान बढ़ाड़वे को उर ऊट्टे ।
भूपन भू निरस्तेच्छ करो चहै स्तेच्छन मारिवे को रन जूट्टे ॥
हिन्दु बचाय बचाय यही अमरेस चँदावन लौं कोइ दूट्टे ।
चंद अलोक ते लोक सुखी यहि कोक अभागे को शोक न कूट्टे ॥

कवि ने यहाँ एक मर्म की बात कह कर नायक के देश-जाति-प्रेम की अत्युत्कृष्टता दिखला दी है । विभीषणवत् स्वदेश तथा स्वजाति से द्वेष करने वालों को भी बचाने तथा उनके मारे जाने पर कुछ दुखी होने में नायक का प्रेमभाव बहुत उन्नत हो गया है । शस्त्रों तथा सेना-संचालन के आज्ञापूर्ण वर्णन शिवाबावनी के कई छंदों में दिए गए हैं । शिवाजी के विजयों से समग्र मुगल बादशाहत में कैसा आतंक छा गया था इसका कवि ने अत्यंत रोमांचकारी पर अत्युक्तिपूर्ण वर्णन किया है । इस प्रकार देखा जाता है कि महाकवि-भूषण वास्तव में वीर रस के कवि थे और उनकी कविता में इस रस का पूर्ण रूप से परिपाक हुआ है ।

अलंकार

महाकवि भूषण को अलंकार क्या वस्तु है, इसकी विवेचना करना स्यात् ठीक या आवश्यक नहीं समझ पड़ा या उसके लिए उन्हें अवकाश ही नहीं मिला । अस्तु, संस्कृत के दो एक आचार्यों के वचन यहाँ उसके स्पष्टीकरण के लिए दे दिए जाते हैं । आचार्य दंडी लिखते हैं —

काव्यशोभाकरान् धर्मानलंकारान् प्रवृत्तते ।

ते चाद्यापि विकल्पन्ते कस्तान् कार्त्स्न्येन वक्ष्यति ॥

अलंकार शब्द का साधारण अर्थ शरीर की शोभा बढ़ाने वाला आभूषण है । काव्यजगत के अलंकारों के लिए भाँ शोभा बढ़ाने को कोई आश्रय चाहिए । इसके लिए काव्यादर्श के पहिले परिच्छेद में इन्हीं आचार्यों ने लिखा है कि—

तैः शरीरं च काव्यानामलंकाराश्च दर्शिताः ।

शरीरं तार्वादिप्रार्थव्यवच्छिन्ना पदावली ॥

इष्ट अर्थात् वाञ्छनीय अर्थ को देने वाला शब्दों का समूह काव्य का शरीर कहलाता है अर्थात् केवल शब्द ही नहीं, प्रत्युत् इष्ट अर्थ-संयुक्त पदावली ही शरीर कहला सकती है । कुछ लोगों का मत है कि यह पदावली रसात्मक होनी चाहिए अर्थात् निष्प्राण शरीर कितना भी सुन्दर हो, पर उसमें प्राणप्रतिष्ठा करना ही कवि का प्रथम धर्म होना चाहिए । ऐसे सरस इष्ट अर्थ देने वाले काव्य की शोभा बढ़ाने वाले उपमा, उपेक्षादि धर्म ही अलंकार कहलाते हैं ।

इस प्रकार काव्य-पदावली में शब्द तथा अर्थ के सामंजस्य के साथ सारस्य होने पर उसे जिस साधन से चमत्कारोत्पत्ति के लिए विशेष अलंकृत किया जाय, वही अलङ्कार है । ये दो प्रकार के होते हैं—अर्थालंकार और शब्दालंकार । जिनमें ये दोनों मिलते हैं, वे उभयालंकार कहे जाते हैं । अर्थालंकार साधारणतः सौ हैं, जिनमें आचार्यों के मतानुसार घटी बढ़ी होती रहती है । इन अलंकारों को उनके अंतर्सिद्धांतों के अनुसार स्वसंपादित भाषा-भूषण ग्रंथ में कई श्रेणियों में विभाजित करने को प्रयत्न किया गया है, जिनमें साम्य, विरोध, शृंखला, न्याय तथा वस्तु प्रधान हैं । शिवराज-भूषण में भी कवि ने सौ अर्थालंकार

तथा पाँच शब्दालंकार का वर्णन किया है। जैसा लिखा जा चुका है भूपण जी भी अपने समय के प्रभाव से नहीं बचे और उन्होंने यह अलंकार ग्रंथ लिख डाला। इससे उनकी घोर रस की प्रौढ़ कवित्व-शक्ति का पूर्ण परिचय मिलते हुए भी इनके आचार्यत्व का परिचय उसी मात्रा में नहीं मिलता। अपर्याप्त लक्षण किस प्रकार अच्छे अच्छे विद्वान का भ्रम में डाल देता है, यह दिखलाया जा चुका है। इसी प्रकार इस ग्रंथ में कुछ अलंकारों के लक्षण अशुद्ध हैं और कुछ के उदाहरण भी ठीक नहीं हैं। यहाँ केवल इसी की विवेचना की जाएगी। एक परिशिष्ट में सभी अलंकारों का उदाहरणसहित गद्य में संक्षिप्त विवरण दे दिया गया है; पर थाड़े का कुछ विषद रूप में यहाँ विचार भी किया जाएगा। ग्रंथ के प्रारंभ में कवि ने उपमा की परिभाषा दी है और उसके दो उदाहरण दिए हैं। उसके भेदों में से केवल एक लुप्तोपमा दिया गया है और उसके भी अनेकों उपभेदों में केवल एक ही वर्णित है। उपमा के चार अंग उपमेय, उपमान, वाचक तथा धर्म हैं, पर प्रथम दो का कुं० सं० ३३ में लक्षण दिया गया है और अन्य दो का नहीं। इस प्रकार ग्रंथ में दिए गए पहिले ही अलंकार का यह हाल है कि उसका अधूरा क्या तिहाई अंश का भी वर्णन नहीं दिया है। उपमा की परिभाषा यों दी गई है—

जहाँ दुहुन की देखिये सोभा बनत समान ।

उपमा भूपन ताहि को भूपन कहत सुजान ॥

‘जहाँ दोनों की समान शोभा बनती देखिए, उसको सुजान भूपन उपमा अलंकार कहते हैं’। भाषा-वैचित्र्य जाने दीजिए, यहाँ यह भी नहीं स्पष्ट है कि उपमा अलंकार क्या है, समान शोभा उपमा है या उस शोभा का दर्शन। कमल और मुख की शोभा ठीक बराबर होते हुए भी उनमें किसी में अभी उपमा

अलंकार शोभायमान नहीं हुआ। दो भिन्न वस्तुओं के सादृश्य दिखलाने या समान धर्म बतलाने को उपमा अलंकार कहते हैं। कमल और नेत्र दो भिन्न वस्तुएँ हैं और इन दोनों में समान धर्म स्थापित करने ही पर इसमें उपमा अलंकार का प्रस्फुटन होगा। कवि ने इस प्रकार पहिले ही अलंकार का स्पष्ट लक्षण तथा सभी भेदों और उपभेदों को न देकर मानों अस्पष्टतः कह दिया है कि वे इस ग्रंथ की रचना अलंकार विवेचना ही के लिए नहीं कर रहे हैं; प्रत्युत् शिवाजी की कीर्ति वर्णन करने ही के लिए उन्होंने 'भाँति भाँति भूषननि सों कवित्त को भूषित किया था'। सब अलंकारों तथा उनके भेदों का विश्लेषण वे नहीं करने बैठे थे।

इस अलंकार का प्रथम उदाहरण उस घटना से लिया गया है, जिससे शिवाजी औरंगजेब के दरबार में गए थे। इन्हें इनकी योग्यतानुसार उच्चपदस्थ मंनसबदारों में न खड़ा कर पाँच हज़ारी मंनसब वाली श्रेणी में स्थान दिया गया था जो मंसब इनके छोटे से पुत्र तथा इनके एक सेनापति को मिल चुका था। इस कारण शिवाजी बहुत क्रोधित हुए और उन्होंने 'भेंट होत ही चकत्ता की ओर देखकर उसे उसी प्रकार कुसब किया जिस प्रकार इन्द्र ने कृष्ण जी को किया था।' यहाँ शिवाजी को इन्द्र तथा औरंगजेब को श्रीकृष्ण के समान कहा गया है, जो अनुचित है और साथ ही पौराणिक कथा के भी अनुकूल नहीं है। इन्द्र ही दुचित्त हुआ था और दो बार हुआ था। पहिले पकवान्न न प्राप्त होने से और दूसरी बार वर्षा का कुछ न असर होने से। दूसरे उदाहरण में महाभारत के पात्रों से शिवाजी तथा उनके प्रतिद्वंद्वियों की तुलना की गई है। महाभारत का युद्ध भाई भाई का था, और भूषण जी ने मुसलमानों को हिंदूधर्म के शत्रु अत्या-

चारी विधर्मी कहते हुए भी उनके सेनानियों की कौरवों से उपमा दी है। भ्रातृ-युद्ध की देश-स्वातंत्र्य-युद्ध से तुलना करना अनुचित है। महाभारत में कौरव-पक्ष के प्रधान दुर्योधन और पांडव पक्ष के युधिष्ठिर थे। अर्जुन पंचपांडव में सर्वश्रेष्ठ वीर थे। भूपण के समय एक पक्ष के प्रधान शिवाजी और दूसरे पक्ष के प्रधान सम्राट् औरङ्गजेब थे। उसके एक सद्दीर शायस्ता खाँ को दुर्योधन की उपमा देना भी समीचीन नहीं है। साथ ही जिस प्रकार अर्जुन ने जयद्रथ को मारा था, उसी प्रकार शिवाजी ने किस को मारा; इसका भी उल्लेख नहीं है। छत्र शब्द मात्र से कुछ अर्थ निकालना होगा।

प्रतीप शब्द का अर्थ प्रतिकूल, विरुद्ध है। अलंकार-सर्वस्व में लिखा है कि 'उपमानं प्रतिकूलत्वादुपमेयस्य प्रतीपमिति व्यपदेशः' अर्थात् जब उपमेय उपमान का प्रतिद्वंद्वी हो जाता है, तभी प्रतीप अलंकार होता है। संस्कृत आचार्यों ने इसके दो भेद इस प्रकार किए हैं - 'प्रसिद्धस्यापमानस्यापमेयत्वप्रकल्पनम्। निष्फलत्वाभिधानं वा प्रतीपमिति कथ्यते ॥ (साहित्यदर्पण १० परि० ८७-८८) अर्थात् पहिला भेद वह है जिसमें प्रसिद्ध उपमान की वस्तु उपमेय रूप में वर्णित हो और दूसरे भेद में उपमान निष्फल या व्यर्थ से कहे जायें। हिन्दी आचार्यों के ये प्रथम और पंचम प्रतीप हुए। अन्य तीन भेद भी कुछ संस्कृत-आचार्यों ने ग्रहण किए हैं, जो हिन्दी में द्वितीय, तृतीय तथा चतुर्थ प्रतीप कहलाते हैं। उपमा तथा प्रतीप में यही अंतर है कि पहिले में दोनों उपमेय तथा उपमान समान वर्णित होते हैं और दूसरे में उपमा प्रधान होते भी या तो उपमेय को उपमान बना देते हैं या दो में से एक को घटा बढ़ा कर वर्णन करते हैं। इसी प्रकार व्यतिरेक में इससे अधिक इतनी ही विशेषता है कि

उसमें उपमेय उपमान से जिस बात में अधिक कहा जाता है, वह स्पष्ट वर्णित होता है। जैसे यह कथन व्यतिरेक है कि मुख कमल सा है पर उससे मीठी बातें भी निकलती हैं।

शिवराज-भूषण में इन पाँचों प्रतीकों का वर्णन है। इनमें दो विचारणीय हैं। द्वितीय प्रतीप की परिभाषा कवि ने यों की है— करत अनादर वर्ण्य को पाय और उपमेय। अर्थात् अन्य उपमेय पाकर (जब उपमान) उपमेय का अनादर करता है। एक संपादक ने इस अस्पष्ट लक्षण को न समझ कर यह व्याख्या की है कि 'जहाँ उपमान को उपमेय मानकर वर्णनीय का अनादर किया जाय' इसका उदाहरण निम्नलिखित दोहे में दिया गया है—

विष ! प्रताप तब तरनि सम अरि पानि-हर मूल ।

गरव करत केहि हेत है बड़वानल ता तूल ॥

हे शिवाजी, आपका प्रताप सूर्य के समान जल के पानी को मूल तक सुखा देने वाला है, पर तब भी वह क्यों गर्व करता है, बड़वानल तुम्हारे समान है। अब विचारणीय यह है कि द्वितीय प्रतीप की भूषणवृत्त परिभाषा तथा उदाहरण मिलते जुलते हैं और एक दूसरे का समर्थन करते हैं या नहीं। परिभाषा कहती है कि उपमेय निरस्त हो पर उदाहरण में दोनों—प्रताप और बड़वानल समान कहे गये हैं। तृतीय प्रतीप का लक्षण तथा उदाहरण एक दूसरे को पुष्ट करते हैं। उपमान चाँदनी का उपमेय कानि द्वारा निरस्तकरण दिखलाया गया है। पर इसी प्रकार द्वितीय प्रतीप में उपमेय प्रताप का उपमान बड़वानल से अनादर होना नहीं दिखलाया गया है। काव्यप्रकाश १० म उल्लास में लिखा है 'यत् असामान्यगुणयोगाच्चोपमानमर्वाप अनुभूतिपूर्ति, तस्य तत्कल्पनायामपि भवति प्रतीपमिति

प्रत्येत्यम्' । अर्थात् किसी वस्तु का किसी गुण में बहुत बढ़ कर होना दिखलाने पर दूसरे से उसकी समता की जाय । जब पहिला दूसरे का उपमान बना दिया जाय, तब वह भी प्रतीप कहलाता है । इस दोहे में इस भेद के उदाहरण का होना ज्ञात होता है ।

पंचम प्रतीप का लक्षण यों कहा गया है कि 'उपमेय से हीन होकर उपमान नष्ट होता है ।' यह अशुद्ध है, वास्तव में उपमान व्यर्थ और निष्फल हो जाता है और सादृश्य योग्य नहीं रह जाता है । पहिले उदाहरण में कहा गया है कि 'जेप, पेरावत, हाथी, हंस, महादेव, अमृत का तात्वाव सभी तुम्हारे समान हैं, पर सब संसार ढ़ोड़कर भाग गये हैं । इस लिये हे शिवाजी, तुम्हारे यश के समान आज किसे गिनें ?' उदाहरण ही की भाषा देखिये । 'ता सम का' ता शिवाजी के लिए है और जेप आदि यश के उपमान हैं । परिभाषा करने हैं कि उपमान-हीन होकर नष्ट हो जाय, पर उदाहरण में सम होकर दुनिया ढ़ोड़ गया है । अन्य दोनों उदाहरण निष्फलत्व के अच्छे उदाहरण हैं ।

'साम्यादतस्मिन् तद्वुद्धिः भ्रांतिमान् प्रतिमंस्थितः'
(सा० ६०) अर्थात् किसी वस्तु में सादृश्य के कारण अन्य वस्तु का भ्रम कविकल्पना द्वारा उत्पन्न किया जाय । इस नाम की व्युत्पत्ति अलंकार-सर्वस्वकार ने यों की है 'भ्रांतिश्चित्तधर्मः स विद्यते यस्मिन् भणितप्रकारे स भ्रांतिमान् ।' यह ठीक है पर अलंकार स्तवः भ्रांत नहीं है और इससे उसका नाम भ्रांतिमान् रखना अनुचित है । रसगंगाधर में पंडितराज लिखते हैं कि "अत्र च भ्रांतिमात्रमलंकारः । भ्रांतिमानलंकार इति व्यवहारस्त्वौपचारिकः । तथा चाहुः । 'प्रमात्रन्तरधीभ्रांति-

रूपा यस्मिन्ननूयते । स भ्रांतिमानिति ख्यातोऽलंकारे त्वौप-
चारिकः ॥” इस कारण भ्रांति या भ्रम ही अलंकार का नाम-
करण ठीक है । इस अलंकार में दो बातें अवश्य होनी चाहिए ।
(१) भ्रम या भ्रांति साम्य पर ही स्थित हो और (२) भ्रम
काल्पनिक मात्र हो, वास्तविक न हो । भूषण ने भ्रम की परिभाषा
यों दी है कि ‘अन्य में अन्य बात का जहाँ भ्रम होय वहाँ यह
अलंकार होता है, रज्जु में सर्प का भ्रम होना आलंकारिक
चमत्कार नहीं है । ‘दामोदरकराघातचूर्णिताशेषवत्तसा । दृष्टं
चाणूरमल्लेन शतचंद्रं नभस्तलम् ।’ यहाँ चन्द्रमा में सौ चंद्र का
भ्रम घूँसे की चाट से हुआ है, सादृश्य से नहीं हुआ है, इस
लिये इन दोनों उदाहरणों में भ्रम अलंकार नहीं है । इसी
कारण भूषण का किया हुआ लक्षण भी पर्याप्त नहीं है, प्रत्युत
भ्रामक है । उदाहरण जो दिया गया है उसमें भ्रम कहीं नहीं है
और स्यात् वह भ्रमवश ही इस अलंकार का उदाहरण मान
लिया गया है ।

प्रस्तुताद्वाच्यादप्रस्तुतस्य प्रतीयमानत्वे संक्षेपेणार्थयाः
कथनमित्यन्वर्था समामोक्तिः । (एकावली पृ० २५) मम्मट
भी लिखते हैं कि ‘समामेन संक्षेपेण अर्थद्वयकथनात्
समामोक्तिः ’ । दो बातों को एक ही में संक्षेप में कहने से इस
अलंकार का समामोक्ति नामकरण हुआ है । साहित्य-दर्पण में
इसका लक्षण यों दिया है ‘यत्र समैः कार्यलिङ्गविशेषणैः अन्यस्य
वस्तुनः प्रस्तुते व्यवहारसमारोपः सा समामोक्तिः’ । अर्थात्
कार्य, लिङ्ग तथा गुण की समानता देख कर अन्य के भ्रम
का प्रस्तुत में समारोप किया जाय । यहाँ अन्य से तात्पर्य
उससे है जिसका वर्णन नहीं हो रहा है । इस प्रकार इस अलंकार
में (१) कार्य (२) लिङ्ग तथा (३) विशेषण तीनों में

से किसी का साम्य होना आवश्यक है। अंतिम का साम्य श्लेष, संबंध तथा उपमा तीन प्रकार से हो सकता है। महाकवि भूपण इसका लक्षण यों कहते हैं—वरनन कीजें आन को ज्ञान आन को होय। बस, समासेक्ति अलंकार की परिभाषा पूर्ण समझ ली गई। उदाहरण तीन दिए गये हैं और तीनों ही औपम्यमूलक विशेषणों के साम्य द्वारा समारोपित किए गए हैं। तात्पर्य यह है कि लक्षण अपर्याप्त है।

व्याघातः स तु केनापि वस्तु येन यथा कृतम् । तेनैव चेदुपायेन कुरुतेऽन्यस्वदन्यथा ॥ मौक्तिक्यं च कार्यस्य विरुद्धं क्रियते यदि (सा० द० १० स० ७४—१) तब किसी एक उपाय से किसी ने एक कार्य किया तब उसी उपाय से दूसरा उस कार्य के विपरीत करे तब एक प्रकार का व्याघात होता है। दूसरी प्रकार का व्याघात वह है कि जब उसी तर्क का उल्ट कर सुगमता से विरुद्ध पक्ष का समर्थन किया जा सके। शिवराजभूषण में दिया हुआ लक्षण ठीक नहीं है। दोनों उदाहरण प्रथम व्याघात के हैं।

‘विकल्पस्तुल्यवत्तयाविरोधश्चातुरीयुतः’ (साहित्य द० १० पृ० ८४) जहाँ चातुरीपूर्ण दो विरुद्ध बातें, जो समान शक्ति की हों, कहा जायें वहाँ विकल्प होता है। भूषण महाराज ने परिभाषा ठीक किया है, पर दोनों उदाहरणों में आरंभ में विकल्प रखते हुए अंत में निश्चयात्मक बान कह डाली है।

समुच्चयाऽयमेकस्मिन्वति कार्यस्य साधके । खलेकपोतिका-न्यायत्तत्करः स्यात् परोऽपि चेत् । गुणौ क्रिये वा युगपत्स्यातां यद्वा गुणक्रिये ॥ (सा० द० ८४—४) समुच्चय के दो भेद हैं। (१) जहाँ किसी कार्य की पूर्ति के लिए एक काफी कारण रहते अन्य कई कारण दिए जायें। (२) जहाँ दो गुण या दो कार्य या एक गुण

और एक कार्य एक साथ ही उत्पन्न हैं। भूषण ने इन्हीं दोनों भेदों की परिभाषा किया है, पर अस्पष्ट भाषा में होने से कुछ लोग इसे नहीं समझ सके हैं और व्यर्थ का अर्थ कर बैठे हैं। भूषण ने यों लक्षण दिया है—

१ एक बार ही जहँ भयो वहु काजन को बंध ।

२ वस्तु अनेकन को जहाँ वर्णन एक ही और ।

अर्थात् (१) जहाँ वस्तु में कार्य एक साथ उत्पन्न हुए हों या (२) जहाँ एक के स्थान पर अनेक वस्तुयों (कारणों) का वर्णन हो। उदाहरण दोनों के स्पष्ट हैं।

सामान्य वा विशेषेण विशेषस्तेन वा यदि । कार्य च कारणेनैव कार्येण च समर्थ्यते । बाधस्यैवरेणार्थोत्तरन्यासोऽप्यत्र ततः ॥ (सा० द० १० प० ६१-६२) जहाँ एक सामान्य बात का विशेष से या विशेष बात का सामान्य से समर्थन किया जाय या कार्य का कारण से या कारण का कार्य से समर्थन किया जाय। इस प्रकार का समर्थन बाधस्य या वैधस्य दोनों प्रकार से होने से अर्थोत्तरन्यास आठ प्रकार का हुआ। परन्तु अन्य आचार्यों का कार्य कारण समर्थन को अर्थोत्तरन्यास में अंतर्गत नहीं मानते क्योंकि वह तब काव्यालिंग अलंकार हो जाता है। अस्तु, भूषण इसकी परिभाषा यों करते हैं—

कलां अर्थ जहँ हा लियो और अर्थ उल्लेखि ।

जहाँ किसी दूसरी बात का उल्लेख करके कदी हुई बात मान ली जाय अर्थात् उसका समर्थन किया जाय। परिभाषा ठीक है, पर पर्याप्त नहीं है। इसे न समझ कर विद्वान् संपादकों ने अशुद्ध अर्थ किया है और दूसरे कवियों के लक्षण देकर भागभाने का प्रयत्न किया है। भूषण ने तो उदाहरण दिए हैं, पहिले में 'समय पर वीरों का शस्त्र उनका साहन होता है' इस सामान्य बात

का समर्थन रामचंद्र, अर्जुन तथा शिवाजी की विशेष कृतियों से साधर्म्य द्वारा किया गया है । दूसरे में शिवाजी की विशेष कृतियों का समर्थन 'एसियै रीति सदा शिवजी की' सामान्य बात द्वारा की गई है ।

भूषण की भाषा

भूषण काल के पहिले हिंदी काव्य परंपरा की भाषा के दो प्रधान भेदों ब्रजभाषा तथा अवधी में अनेकानेक अच्छे अच्छे काव्यग्रंथ लिखे जा चुके थे । कृष्णोपासक वैष्णवों की सगुण भक्ति धारा से अनेक सागर जब ब्रजभाषा में भरे जा चुके थे तब अवधी में रामोपासक भक्तों द्वारा मानस आदि तथा सूफियों द्वारा प्रेम गाथाएँ निर्मित हो चुकी थीं । इन महा-कवियों द्वारा काव्य भाषा विशेष रूप से परिमार्जित भी हो चुकी थी और यही समय काव्यांगों की विवेचना के साथ भाषा को व्याकरण बनाकर सुव्यवस्थित करने के लिये अनुकूल था । परन्तु ऐसा नहीं किया गया और इस कारण यह अव्यवस्था बनी ही रही । भाषा की सरुई, चुस्ती, वाक्ययोजना आदि पर उर्दू भाषा के कवियों ने विशेष ध्यान दिया है, जिससे उसमें भाषा की वैसी अव्यवस्था नहीं रहने पाई ।

हिंदी काव्य-भाषा में ब्रजभाषा, अवधी, बुंदेलखंडी, खड़ी बोली, उर्दू आदि के मिश्रण से यह अव्यवस्था और भी बढ़ी है । इस प्रकार का बेमेल मेल अच्छे अच्छे कवियों में पाया जाता है । सुकवि भिखारीदास जी के समय पट्टविधि की भाषाएँ इस काव्य भाषा में एकत्र हो चुकी थीं और उनके ज्ञानोपार्जन का भी इन्होंने निम्नलिखित साधन बतलाया है ।

सूर केशव मंडन बिहारी कालिदास ब्रह्म ,
 चिंतामणि मतिराम भूपण सुजानिए ।
 लीलाधर सेनापति निपट नेवाज निधि ,
 नीलकंठ मिश्र सुखदेव, देव मानिए ॥
 आलम रहीम रसखान सुंदरादिक ,
 अनेकन सुकवि भए कहाँ लों बखानिए ।
 ब्रजभाषा हेत ब्रजवास ही न अनुमानों ,
 ऐसे ऐसे कविन की बानी हू सों जानिए ॥

ऐसी अवस्था में सुकवियों की भाषा इस योग्य होनी चाहिए थी कि उसे पढ़ कर पाठकगण उस भाषा का पूरा पूरा ज्ञान प्राप्त कर सकें। आचार्य दाम ने ब्रजभाषा ही को प्रधानता दी है जिसमें अन्य भाषाओं के शब्दों का केवल सम्मिश्रण होना चाहिए। पर 'निरंकुशाः कवयः' ऐसे नियम नहीं मानते थे और ब्रजभाषा में अवधी आदि भाषाओं के कारक चिन्ह तथा क्रियाओं के रूपों तक का बराबर व्यवहृत करते रहे। इसका कारण विशेषतः सुगमता थी जिससे छंद में जो कुछ खप गया उसी का प्रयोग कर कविगण आगे बढ़ चलते थे। मुसलमानों के संघर्ष से फारसी, तुर्की भाषाओं के शब्द भी हिंदी काव्य-भाषा में क्रमशः बढ़ने लगे। भूपण जी ने ऐसे शब्दों का मनमाना प्रयोग किया है। कितनों को इतना तोड़ मरोड़ दिया है और कितनों का ऐसा प्रयोग किया है कि अर्थ भी समझना कठिन हो जाता है। उदाहरणार्थ दो एक शब्द लीजिए अ० १६७ में एक शब्द 'इलाम' लिख गया है। एक सज्जन ने अ० शब्द पलान का इसे अपभ्रंश मान कर इश्तहार अर्थ लगाया है। इस शब्द से विशेष मिलते जुलते दो अन्य अरबी शब्द पलाम और इल्हाम हैं। प्रथम का अर्थ समाचार बनलाना और द्वितीय

का दैवी आज्ञा है। अंतिम हो शब्द विशेष जँचता है। इसीमें एक शब्द 'लरजा' आया है जो फारसी क्रिया लर्जीदन का हिंदी भूतकाल का रूप है। यह इसी प्रकार आधुनिक हिंदी की कविता में अंग्रेजी 'जिबर' क्रिया से 'जिबरा' बनाने के समान हास्योत्पादक मात्र है। छंद २०६ का 'जोर सिवा करना अनरथ्य भली भई हृथ्य हृथ्यार न आया' अंतिम चरण है। इसमें जोर शब्द फारसी 'ज़रूर' का भ्रष्ट रूप है और उसी भाषा के 'ज़ोर' शब्द से विशेष साम्य रचता है। इस अर्थ में भूषण ने इसे प्रयुक्त भी किया है। उद्धरित पंक्ति खड़ी बोली में है, पर वाक्य-याचना कितनी गिथिल है। अन्य भाषाओं के शब्द लेकर उनका इनका रूप बिगाड़ना किम्बो कवि का महत्व नहीं दिखलाता, प्रत्युत उस महत्व का अपकर्ष अवश्य करता है। 'नाहन को निंदते' जमान कहीं एकाग्र लिंग भेद की अशुद्धि भी रह गई है। 'बसो तें निकामती' के स्थान पर 'निकामती' होना चाहिए, पर इस कवित्त में 'भूपन' उपनाम नहीं आया है। तात्पर्य यह कि भूषण ने आज्ञापूर्ण वर्णन करने के समय इन 'छोटी मोटी' बातों पर ध्यान ही नहीं दिया।

भूषण वीर रस के कवि थे और उन्होंने अपनी भाषा ब्रजभाषा रखते हुए भी उसमें आज लाने के लिए खड़ी बोली का यत्र तत्र प्रयोग बराबर किया है। इनकी भाषा का सौंदर्य केवल इसमें है कि उनके पढ़ने से पाठकों के हृदय में धीरों के आत्मरक्त, युद्ध-कोशल, रणचंडी-नृत्य इत्यादि का पूरा चित्र लखित हो जाता है। रस के अनुकूल शब्दों तथा अक्षरों में शस्त्र-चातल, मेरीख आदि को विकट ध्वनि परिलभित होती रहती है। प्रभावोत्पादन के लिए जिस प्रकार की भाषा समीचीन है वैसे भाषा का भूषण ने पूर्णरूपेण प्रयोग किया है। कवि ने

शिवाजी के आतंक का बहुत ही जोरदार वर्णन किया है, वह कितना व्याप्त हो गया था और उसने शत्रुओं के हृदयों में कैसा स्थान प्राप्त कर लिया था, यह एक एक शब्द से स्पष्ट हो रहा है। मुगलसम्राट् औरंगजेब ने सारत्ता का बहुत सा प्रबंध करके तब शिवाजी को दरबार में बुलाया था, तब पर भी वह उनके आतंक से इतना डरा हुआ था कि गुप्तुलखाने के पास ही ठिठक रहा था।

कैयक हजार जहाँ गुर्जरदार ठाढ़े,
करिके हुस्यार नीति पकरि सभाज की।
राजा जसवंत को बुलाय के निकट राखा,
तेऊ लखें नीरि जिन्हें लाज स्वामि-काज की ॥
भूषन तबहु ठठकत हँ। गुप्तुलखाने,
सिंह लीं भेषट गुनि साहि महाराज की।
हृत्कि हृथ्यार फड़ बाँधि उमरावन की,
कीन्ही तब नौरंग ने भेंट शिवराज की ॥

कैसा उदात्त वर्णन है? कोई भी इसे पढ़कर शिवाजी के प्रताप तथा आतंक का समग्र-भारत-व्यापी होना सहज में समझ जाएगा। उक्ति पूर्ण, प्रसाद-गुण-संपन्न तथा सुष्ठु योजना-युक्त ऐसे वर्णन भूषण ही के योग्य है। भूषण की उक्तियाँ भी विचित्र होती थीं। इन्होंने प्रकृति-निदर्शन भी खूब किया था। भ्रमर सभा पुष्पों का रस लेता है, पर चंपा पर उसके तीव्र गंध के कारण नहीं बैठ सकता। कवि ने इस पर एक नई युक्ति निकाली। भारत-सम्राट् औरंगजेब को भ्रमर बनाया और अन्य सभी देशी राजाओं को फूल बनाए। उदयपुर के महाराणा को केतकी पुष्प बनाना विदग्धतापूर्ण है, क्योंकि उसका रस लेने में उसे काँट

निरंतर गड़ते रहे । शिवाजी को चंपा बनाना चमत्कार-युक्त है,
जिसका वह कभी रस न ले सका ।

कूरम कमल कमधुज है कदम फूल,
गौर है गुलाब राना कैतकी बिराज है ।
पांडरी पंवार जूही मोहन हैं चन्द्रावत,
सरस बुँदला सो चमेली साजबाज है ॥
भूपन भनत मुचकुंद वडगुजर हैं,
बघेले बसन्त सब कुसुम समाज है ।
लेइ रस एतेन को बैठि न सकत अहै,
अलि नौरंगजेव चम्पा सितराज है ॥

उपसंहार

इस प्रकार विचार करने के अनंतर यह निश्चयतः कहा जा सकता है कि जिस प्रकार महाकवि-भूषण का शिवाजी के दरबार के हिंदी कवि-श्रेणी में उच्चतम स्थान था उसी प्रकार हिंदी-साहित्येतिहास के वीर रस के कवियों में इनका सर्व-श्रेष्ठ स्थान है । हिंदी-साहित्य के इतिहासकारों ने इसी कारण इन्हें उस इतिहास के नवरत्न में परिगणित किया है । हिंदी-साहित्य तथा भारत के इतिहास में भूषण कवि का नाम सदा अमर रहेगा ।

इतिहास-प्रेमी तथा मातृभाषा-भक्त होने के नाते भूषण की कविता पढ़ना आवश्यकभावी था और इधर इनके रचना-काल विषय को लेकर विशेष तर्क वितर्क होने से पत्र-पत्रिकाओं में चहल-पहल भी मची हुई थी । यह विवाद ऐतिहासिक था इससे उसे बराबर पढ़ता रहता था । पूर्वपक्ष ने भूषण को शिवाजी के

समकालीन न होने का विवाद उठाया और अपनी शैली पर अंत तक अपने पक्ष को साबित ही कर डाला और स्यात् अभी भविष्य में भी ऐसा करते रहें ; पर उत्तर पक्ष तथा प्रायः सभी अन्य साहित्य-प्रेमी और इतिहासकार इसे अस्वीकार करते हैं और भूषण का शिवाजी ही का समकालीन होना मानते हैं । इस भूमिका में, उभय विवाद को पूर्णतया पढ़कर भी, उससे अलग अपने विचारों के अनुसार तर्क किया गया है और जिसका आधार किसी प्रकार का हठधर्मी नहीं है ।

विशाल-भारत की अगस्त सन् १९३० ई० की संख्या में कुँअर महेंद्रपाल सिंह का एक लेख निकला है जिसमें लिखा है कि तिकवाँपुर के एक पुराने भाट से उन्हें पता लगा है कि भूषण का असली नाम 'मतिराम' था, जो मतिराम के वजन पर होने से ठीक हो सकता है । उस भाट ने भूषण के विषय में कुछ दंत-कथाएँ भी बतलाई, जो प्रायः वैसे ही हैं जिनका उल्लेख हो चुका है । निम्न वाली कथा के बदले इनका कथन है कि "एक दिन भूषण की स्त्री स्नान कर घर आई तब द्वार पर बंधे किसी हाथी ने धूलि उड़ायी जो उस पर पड़ गई । उसने मतिराम की स्त्री से कुछ काथ के साथ कहा कि 'जेठ जी ने व्यर्थ इन पँड़वों को यहाँ इकट्ठा कर रखा है ।' मतिराम की स्त्री ने उत्तर दिया कि 'इन पँड़वों को कौन कमाकर लाया है, जाओ अपने खसम से कहो कुँजर मँगा दे ।' भूषण की स्त्री यह व्यंग्य सुनकर पति से हाथी कमा लाने के लिए हठ करने लगी, तब भूषण जी घर से निकल पड़े । एक योगी की सहायता से देवी से बरदान पाया और चित्रकूट-पति के यहाँ जाकर उनसे भूषण को पदवी ली । इसके अनन्तर बादशाह के दरबार में गए और केवल बादशाह ही का नहीं, सभी सभासदों का हाथ धुलवा कर निम्न लिखित कवित्त पढ़ा:—

कीन्हें खंड खंड ते प्रचंड बलबंड वीर,
 मंडन मही के अरि खंडन भुताने हैं ।
 लै लै डंड छंडे ते न मंडे मुख रंचक हू,
 हेरत हिराने ते कहू न ठहराने हैं ॥
 पूरव पक्काँह आन माने नहिं दन्किन हू,
 उत्तर धरा को धनी रोपत निज थाने हैं ।
 भूपन भनत नवखंड महिमंडल में,
 जहाँ तहाँ दीसन अब साहि कं निमाने हैं ॥

इसके बाद कई राज्यों में घूमते हुए यह शिवाजी के यहाँ गए और ऋषवेशधारी महाराष्ट्रपति को वाचन बार 'इंद्रजिप्त' जम पर वाला कवित्त सुनाकर वाचन हार्या वगैरह पाए जिनमें से चार अपनी भावज को भेजे थे । इस दंतकथा में बुद्ध नवीनता थी इसलिए उसका आशय उपसंहार ही में दे दिया गया है क्योंकि भूमिका का और सब अंश रूप चुका था ।

इस ग्रंथ के संपादन में जिन मज्जनों के लेखों तथा रचनाओं से सहायता ली गई है उनका सूची अन्यत्र दे दी गई है और उनके प्रति इस संग्रह का संपादक विशेष रूप से आभारी है ।

रथयात्रा
 १६८७

}

विनीत
 बजरत्नदास

भूषणाग्रंथावली

शिवराज-भूषण

[मंगलाचरण]

(घनाक्षरी अथवा मनहरण)

बिकट अपार भव-पंथ के चले को म्रम, हरन करन बिजना
से ब्रह्म ध्याइए । इहि लोक-परलोक सुफल करन कोकनद से
चरन हिए आनि कै जुड़ाइए ॥ अलि-कुल-कलित कपोल, ध्यान
ललित, अनंद-रूप-मरित में 'भूपन' अन्हाइए । पाप-तरु भंजन
विघन-गढ़-गंजन जगत-मनरंजन द्विरदमुख गाइए ॥ १ ॥

(कृपय अथवा पदपद)

जै जयंति जै आदि सकनि जै कालि-कपर्दिनि ।
जै मधुकैटभ-कुलनि देवि जै महिष-विमर्दिनि ॥
जै चमंड जै चंड-मुंड भंडासुर खडिनि ।
जै सुरक्त जै रक्तबीज-बिडाल बिहंडिनि ॥
जै जै निसुंभ-सुंभदलनि भनि 'भूपन' जै जै मननि ।
सरजा समथ शिवराज कहँ देहि विजै जै जग-जननि ॥ २ ॥

(दोहा)

तरनि जगत-जलनिधि-तरनि जै जै आनंद-ओक ।
कोक-कोकनद-सोकहर, लोक-लोक आलोक ॥ ३ ॥

[राजवंश-वर्णन]

राजत है दिनराज को वंस अशनि-अवतंस ।
 जामें पुनि पुनि अवतरे कंसमथन-प्रभु-अंस ॥ ४ ॥
 महावीर ता वंस में भयो एक अवनीस ।
 लियो विरुद "सीसौदिया" दियो ईस को सीस ॥ ५ ॥
 ता कुल में नृपवृन्द सब उपजे बखत बुलंद ।
 भूमिपाल तिन में भयो बड़ा माल मकरंद ॥ ६ ॥
 सदा दान-किरवान में जाके आनन अंभु ।
 साहि निजाम मखा भयो दुग देवगिरि खंभु ॥ ७ ॥
 ताते सरजा विरुद सो सोभित सिंह-प्रमान ।
 रन-भू-सिला सु भौंसिला आयुप्रमान खुमान ॥ ८ ॥
 'भूपन' भनि ताके गयो भुव-भूपन नृप साहि ।
 रातो दिन संक्षित रहै साहि सबै जग माहि ॥ ९ ॥

(कवित्त—मनहरण)

एते हाथी दीन्हें माल मकरंद जू के नंद जेने गनि सकति
 बिरंच हू की न तिया । 'भूपन' भनत जाकी साहिबी सभा के
 देखे लागें सब और क्षितिपाल क्षिति में क्षिया ॥ साहस अपार
 हिंदुवान को अधार धीर, सकल सिसौदिया सपूत कुल को
 दिया । जाहिर जहान भयो साहिजू खुमान वीर साहिन को
 सरन सिपाहिन को तकिया ॥ १० ॥

(दोहा)

दूसरथ जू के राम भे. वसुदेव के गोपाल ।
 सोई प्रगटे साहि के श्रीभिवराज भुवाल ॥ ११ ॥
 उदित होत मिवराज के मुदित भए द्विजदेव ।
 कलियुग हठ्यो मिठ्यो सकल म्लेच्छन को अहमेव ॥ १२ ॥

(कवित्त-मनहरण)

जा दिन जनम लीन्हो भू पर भुमिल भूप ताहि दिन जीन्यो
अरि-उर के उक्ताह को । कृती कृत्रपतिन को जीन्यो भाग
अनायास जीन्यो नामकरन में करिन-प्रवाह को ॥ 'भूपन' भनत
बाल-लीला गढ़कोट जीन्यो साहि के सिवाजी करि चहुँ चक्र चाह
को । बीजापुर-गोलकंडा जीन्यो तरिकाई ही में ज्वानी आप
जीन्यो दिलीपति पातसाह को ॥ १३ ॥

(दोहा)

दच्छिन के सब दुग जिति दुग महार बिलास ।
सिव-सेवक सिव गढ़पती कियो रायगढ़ बास ॥ १४ ॥

[रायगढ़-वर्णन]

(मालती सवैया)

जापर साहि-तनै सिवराज सुरेस की ऐसि सभा सुभ साजे ।
यों कवि 'भूपन' जंपत है लखि संगति को अलकापति लाजे ।
जामधि तीनहु लोक की दीपति ऐसो बड़ा गढ़राज बिराजे ।
बारि पताल सी माची मही अमरावति की छवि ऊपर
छाजे ॥ १५ ॥

(हरिगीतिका कंद)

मनिमय महल सिवराज के इमि रायगढ़ में राजहीं ।
लखि जच्छ-किन्नर-असुर-सुर-गंधर्व होंमनि साजहीं ॥
उत्तंग मरकत मंदिरन मधि बहु मृदंग जु बाजहीं ।
घन-समै मानहु घुमरि करि घन घनपटल गलगाजहीं ॥ १६ ॥

मुकतान की भालरिन मिलि मनि-माल कृजा कृजहीं ।

संध्या-समै मानहुं नखत गन लाल अंबर रानहीं ॥

जहँ तहा ऊरध उठे हीरा किरन घन-समुदाय हैं ।

मानो गगन तंत्रू तन्यो ताके सपेत तनाय हैं ॥ १७ ॥

‘भूपन’ भनत जहँ परमि कै मनि पुहुपरागन की प्रभा ।

प्रभु-पीत पट की प्रगट पावत सिंधु मेघन की सभा ॥

मुख नागरिन के राजहीं कहूँ फटिक महलन संग में ।

विकसंत कोमल कमल मानहु अमल गंग-तरंग में ॥ १८ ॥

आनंद सों सुंदरिन के कहूँ बदन-इंदु उदात हैं ।

नभ-सरित के प्रफुलित कुमुद मुकुलित कमल-कुल होत हैं ॥

कहूँ बावरी-सर-कूप राजत बद्ध मनि-सोपान हैं ।

जहँ हंस मारस चक्रवाक बिहार करत मनान हैं ॥ १९ ॥

कितहूँ विमाल प्रवाल-जावन जटित अंगनि भूमि है ।

जहँ ललित बागनि द्रुमलता मिलि रहै झिलमिलि झूमि है ॥

चंपा चमेली चारु चंदन चारिहू दिसि देखिए ।

लवली-लवंग यलानि-केरे लाख्यों लागि लेखिए ॥ २० ॥

कहूँ केतकी-कदली-करौंदा-कुंद अरु करवीर हैं ।

कहूँ दाख-दाड़िम-सेब-कटहल-तूत अरु जंभीर हैं ॥

कितहूँ कदंब-कदंब कहूँ हिंगुल-ताल-तमाल हैं ।

पीयूष ते मीठे फले कितहूँ रसाल रसाल हैं ॥ २१ ॥

पुलाग कहूँ कहूँ नागकेसरि कतहूँ बकुल अमोक हैं ।

कहूँ ललित अगर-गुलाब-पाटल-पटन-बेल-शोक हैं ॥

कितहूँ नेवारी-माधवी-सिंगारहार कहूँ लसैं ।

जहँ भाँति भाँतिन रंग रंग बिहंग आनंद सों रसैं ॥ २२ ॥

(पद्यपद)

लसत बिहंगम बहु लघनित बहु भाँति बाग महँ ।
कोकिल-कीर-कपोत केलि कलकल करंत तहँ ॥
मंजुल महरि-मयूर चटुत चातक-चक्रोद-गन ।
पियत मधुर मकरंद करत झंकार भुंग घन ॥
'भूपन' सुवास फल फूलजुत ळहुँ ऋतु बपत बसंत जहँ ।
इमि राजदुग राजत रुचिर सुखदायक सिवराज कहँ ॥ २३ ॥

(दोहा)

तहँ नृप रजधानी करी जीति सकल तुरकान ।
सिव सरजा रुचि दान में कीन्हों सुजस जहान ॥ २४ ॥

[कविवंश-वर्णन]

देसन देसन ते गुनी आवत जाचन ताहि ।
तिनमें आयो एक कवि 'भूपन' कहियतु जाहि ॥ २५ ॥
दुत कनौज-कुल कस्यपी रतनाकर सुत धीर ।
वसत त्रिविक्रमपुर सदा तरनितनूजा-तीर ॥ २६ ॥
बीर बीरवर से जहाँ उपजे कवि अरु भूप ।
देव बिहारीश्वर जहाँ विश्वेश्वर तद्रूप ॥ २७ ॥
कुल-सुलंक चितकूटपति साहस-सील-समुद्र ।
कवि 'भूपन' पदवी दई हृदयराम-सुत रुद्र ॥ २८ ॥
सिव-चरित्र लखि यों भयो कवि 'भूपन' के चित्त ।
भाँति भाँति भूपननि सों भूपित करों कवित्त ॥ २९ ॥
सुकविन हूँ की कछु कृपा समुझि कविन को पंथ ।
भूपन भूपनमय करत 'शिवभूपन' सुभ ग्रंथ ॥ ३० ॥
भूपन सब भूपननि में उपमाहि उत्तम चाहि ।
याते उपमाहि आदि दै बरनत सकल निवाहि ॥ ३१ ॥

[ग्रन्थ प्रारंभः]

[उपमा]

(लक्षण-दाहा)

जहाँ दुहुन की देखिए पोसा बननि समान ।

उपमा भूपन ताहि को 'भूपन' कहत सुजान ॥ ३२ ॥

जा को वरन कीजिए सो उपमेय प्रमान ।

जाकी सरनार कीजिए ताहि कहत उपमान ॥ ३३ ॥

(उदाहरण—मनहरण देख-६)

भिलताहि मुख्य चक्रता को निरखि कीन्हों सरजा सुरेस
ज्यों द्रुवित व्रजराज को । 'भूपन' कुमिस गैरमिमिल खरे किए
को किए मलेच्छ मुराकृत करि के गराज को ॥ अरे ते गुसुलखाने
बीच ऐसे उमराय लें चले मनाय महाराज सिवराज को ।
दावदार निरखि रिखानो दीह दलराय जैसे गड़दार अड़दार
गजराज को ॥ ३४ ॥

(मालती सबैया)

सामता खाँ दुरजोधन से औ दुसासन से जसवंत
निहार्यो । दान से भाऊ, करन करन से और सबै दल से
दल भार्यो ॥ ताहि बिगोय सिवा सरजा भनि 'भूपन' औनि-
कता यों पकार्यो । पारथ के पुरुषारथ भारथ जैसे जगाय
जयद्रथ मार्यो ॥ ३५ ॥

[लुप्तोपमा]

(लक्षण—दाहा)

उपमा-वाचक पद, धरम, उपमेयो, उपमान ।

जामैं से पूर्णोपमा लुप्त घटत लौं मान ॥ ३६ ॥

(उदाहरण-धर्मलुप्ता, मातली सर्वैया)

पाधक-तुल्य अमीतन को भया, मतिन को भया धाम सुधा को ।
आनंद भो गहिरा ससुदे-कुपदवली-वारन को बहुधा को ॥
भूतल माहिँ बली सिधराज भा 'भूपन' भागत प्रभु मुधा को ।
बदन तेज यों चंदन कीरति सोधे सिंगार बधू बहुधा को ॥ ३७ ॥

(मनहरण)

आए दरबार बिलबाले कर्णदार किंचि ज्ञापना करनहारे नेक
हू न मिनके ! 'भूपन' बनत भौमिता के आय आगे राहें बाजे भए
उमराय तुलुक करन के ॥ साहिँ रखा जकि सिव साहिँ रखा
तकि और चाहिँ रखा चक दा योंनि अनवन के । श्रीपम के
भानु से खुमान को प्रताप देखे तारे मग तारे भए मूँदि
तुरकन के ॥ ३८ ॥

[अनन्वय]

(लक्षण-दाहा)

जहाँ करत उपमेय को उपमेयो उपमान ।

तहाँ अनन्वै कहत हैं 'भूपन' सकल गुजान ॥ ३९ ॥

(उदाहरण-मातली सर्वैया)

साहिँ-तनै मरजा तब द्वार प्रनिच्छन दान की दुंदुभि बाजे ।
'भूपन' भिच्छुक-भीरन को अति भोजहु ते बाहिँ भोजनि माजे ॥
राजन को मन, राजन ! को मनै ? साहिँन में न इती क्वि क्वाजे ।
आजु गरीबनेवाज मही पर तो सो तुही सिधराज बिराजे ॥ ४० ॥

[प्रथम प्रतीप]

(लक्षण-दाहा)

जहँ प्रसिद्ध उपमान को करि बरनत उपमेय ।

तहँ प्रतीप-उपमा कहत 'भूपन' कविता प्रेय ॥ ४१ ॥

(उदाहरण-मालती सधैया)

झाय रही जितही तितही अतिही कृबि झीरधि रंग करारी ।
 'भूपन' खुद सुधान के सोधनि मोधति सी धरि ओप उज्यारी ॥
 यों तम-तोमहि चाविके चंद चहँ दिमि चाँदनि चारु पसारी ।
 ज्यों अफजलहि मारि मही पर कीर्ति आसिवराज बगारी ॥ ४२ ॥

[द्वितीय प्रतीप]

(लक्षण-दाहा)

करत अनादर बन्ध के पाय और उपमेय ।
 ताहू कहत प्रतीप जे 'भूपन' कविता प्रेय ॥ ४३ ॥

(उदाहरण-दाहा)

शिव ! प्रनाप तव तरनि-सम, अरि-पानिप-हर मूल ।
 गरव करत केहि हेत है, बन्धानल तो तूल ॥ ४४ ॥

[तृतीय प्रतीप]

(लक्षण-दाहा)

आदर घटत अबन्ध के जहाँ बन्ध के जोर ।
 तृतीय प्रतीप बलानहीं तहँ कविकुलसिरमौर ॥ ४५ ॥

(उदाहरण-दाहा)

गरव करत कत चाँदनी हीरक झीर समान ।
 फैली इती समाज-गल कीरति मिथा खुमान ॥ ४६ ॥

[चतुर्थ प्रतीप]

(लक्षण-दाहा)

पाय बरन उपमान के जहाँ न आदर और ।
 कहत चतुर्थ प्रतीप हैं 'भूपन' कवि-सिरमौर ॥ ४७ ॥

(उदाहरण-मनहरण)

चंदन में नाग, मद भर्या इंद्र-नाग, विषभरा सेस नाग कहै
उपमा अचम को ? भौर ठहरान न, कपूर बहरात, मेघ सरद उड़ात
बात लागे दिसि दम को ॥ शंभु नीलग्रीव, भौर पंडरीक ही
बसत, सरजा सिवा जी मन 'भूपन' सरस को ? झीरधि में
पंक, कलानिधि में कलंक, गाते रूप एक टंक ए तहैं न तव
जस को ॥ ४८ ॥

[पंचम प्रतीप]

(लक्षण-देहा)

हीन होय उपमेय सों नष्ट होत उपमान ।

पंचम कहत प्रतीप तेहि 'भूपन' सुकवि सुजान ॥ ४९ ॥

(उदाहरण-मनहरण)

तो सम हो सेस मो तो बसन पताल लोक, पेरवत गज
सो तो इंद्र-लोक सुनिये । दुरे हंस मानसर, ताहि में कैलास-
धर, सुधा सुरवर सोऊ क्रेड़ि गयो दुनिये ॥ सूर दानो सिरताज
महाराज सिवराज रावरे सुजम सम आजु काहि गुनिये ? 'भूपन'
जहाँ लौं गनों तहाँ लौं भयंक हार्यौ लखिये कछु न केती बातें
चित चुनिये ॥ ५० ॥

(मालती सवैया)

कुंद कहा, पय-चुन्द कहा अरु चंद कहा सरजा जस आगे ?
'भूपन' भानु कृमानु कहाऽव खुमान-प्रनाप महीतल पागे ? राम
कहा, द्विज राम कहा, बलराज कहा रन में अनुरागे ? बाज कहा,
मृगराज कहा अनि साहस में सिवराज के आगे ? ॥ ५१ ॥

यों सिवराज को राज अडोल कियो सिव जोऽव कहा ध्रुव धू
है ? कामना दानि खुमान लखे न कछु सुररुख न देव-गऊ है ॥

‘भूपन’ भूपन में कुल-भूपन भौंसिला भूप धरे सब भू है। मेरु कछू न कछू दिगर्दति न कुंडलि काल कछू न कछू है ॥ १२ ॥

[उपमेयोपमा]

(लक्षण-दाहा)

जहाँ परस्पर होत है उपमेयो उपमान ।

‘भूपन’ उपमेयोपमा ताहि बखानत जान ॥ १३ ॥

(उदाहरण-मनहरण)

तेरो तेज, सरजा समव्य ! दिनकर सो है, दिनकर सो है तेरो तेज के निकर सो । भौंसिला भूवाल ! तेरो जभ हिमकर सो है हिमकर सो है तेरो जम के अकर सो ॥ ‘भूपन’ भनत तेरो हियो रतनाकर सो, रतनाकर हे तेरो हिय सुखकर सो । साहि के सपूत सिव नांह दान ! तेरो कर सुरतरु सो है, सुरतरु तेरो कर सो ॥ १४ ॥

[मालोपमा]

(लक्षण-दाहा)

जहाँ एक उपमेय के होत बहुत उपमान ।

ताहि कहत मालोपमा ‘भूपन’ सुकवि सुजान ॥ १५ ॥

(उदाहरण-मनहरण)

इंद्र जिमि जंम पर, बाहुव सुअंभ पर, रावन सदंभ पर रघुकुलराज है । पौन बाग्बिवाह पर, संभु रतिनाह पर, ज्यों सहस्रबाह पर राम द्विजराज है ॥ दाश द्रुम-दंड पर, चीता मृगभुंड पर, ‘भूपन’ वितुंड पर जैसे मृगराज है । तेज तम-अंस पर, कान्ह जिमि कंस पर ज्यों भनिच्छ-वंस पर सेर सिवराज है ॥ १६ ॥

[ललितोपमा]

(लक्षण-दाहा)

जहँ समता को दुहुन की लीलादिक पद होत ।
ताहिँ कहत ललितोपमा सकल कविन के गोत ॥ ४७ ॥
बिहसत, निदरत हँसत जहँ, द्वि अमुसरत बखानि ।
सत्र-मित्र इमि औरऊ लीलादिक पद जानि ॥ ४८ ॥

(उदाहरण-सनहरण)

साहि-तनै सरजा सिवा की सभा जामधि है मेरु-वारी सूर
की सभा को निदरति है । 'भूपन' भनत जाके एरु एक सिखर
ते केले धौं नदी-नद को रेत उतरति है । जोन्ह को हँसति जोति
हीरा-मनि-मंदिरन कंदरन में द्वि कुछ की उद्धरति है । ऐसे
ऊँचा दुरग महाबली को जामें नखनावली सों बहस दिपावली
धरति है ॥ ४९ ॥

[रूपक]

(लक्षण-दाहा)

जहाँ दुहुन का भेद नहिँ बरनत नृकवि सुजान ।
रूपक 'भूपन' ताहि को 'भूपन' करत बखान ॥ ५० ॥

(उदाहरण-रूपय)

कलिजग-जलधि अपार उद्ध अधरम्म उम्मिमय । लच्छनि
लच्छ मलिच्छ-कच्छ अरु मच्छ-मगर-चय । नृपति नदीनद-वृन्द होत
जाके मिलि नीरस । भनि 'भूपन' सब भुमि घेरि किन्निय सुअप
बस ॥ हिंदुवान-पुन्य-गाहक-वनिक तासु निबाहक साहि-सुव ।
बर बादबान किरवान धरि जस-जहाज सिवराज तुव ॥ ५१ ॥

साहिन मन समरथ, जासु नवरंग साहि सिरु । हृदय जासु
अव्वास साहि बहुबल बिलास थिरु ॥ एदिल साहि कुतुब जासु
जुग भुज 'भूपन' भनि । पाय स्लेच्छ उमराय, काय तुरकानि
आन गनि ॥ यह रूप आवनि अवतार धरि जेहि जालिम
जग दंडियव । सरजा सिव साहस खग गहि कलिजुग सोइ
खल खडियव ॥ ६२ ॥

(कवित्त मनहरण)

सिंह थरि जाने बिन जावली जंगल भठी हठी गज एदिल
पठाय करि भटक्यो । 'भूपन' भनत देखि भभरि भगाने सब
हिम्माति हिरे में धारि काहुयै न हटक्यो ॥ साहि के सिवा जी
गाजी सरजा समथ महा मदगल अफजलै पंजा बल पटक्यो ।
ता बिगिरि द्वे करि निकाम निज धाम कहँ आकुत महाउत सुआ-
कुस लै सटक्या ॥ ६३ ॥

[रूपक के भेद—न्यून तथा अधिक]

(लक्षण-दाहा)

घटि बढि जहँ बरनन करे करिके दुहुन अभेद ।
'भूपन' कवि औरौ कहत द्वे रूपक के भेद ॥ ६४ ॥

(उदाहरण न्यून—मनहरण)

साहि-तनै सिवराज 'भूपन' सुजस तव विगिर कलंक चंद
उर आनियतु है । पंचानन एक ही वदन गनि तोहि गजानन
गज-वदन-बिना बखानियतु है ॥ एक सीस ही सहससीस कला
करिवे को दुहँ दूग सों सहसदूग मानियतु है । दुहँ कर सों
सहसकर मानियतु तोहि दुहँ बाहु सों सहसबाहु जानियतु
है ॥ ६५ ॥

(उदाहरण अधिक)

जेतें हैं पहार भुव माहि' पारावार तिन सुनि के अपार कृपा
गहे सुख फेल है । ' भूपन ' भनत साहि-तनै सरजा के पास
आइवे को चढ़ी उर हौसनि की ऐल है ॥ किरवान बज्र सों
बिपच्छ करिवे के हर आनिकै कितेक आए सरन की गेल है ।
मगधा मही में तेजवान भिवराज क्षीर कोट करि सकल सपच्छ
किए सैल है ॥ ६६ ॥

[परिणाम]

(लक्षण-देहा)

जहँ अभेद करि दुहुन सों करत और से काम ।
भनि ' भूपन ' सब कहत हैं तासु नाम परिनाम ॥ ६७ ॥

(उदाहरण—मालती सबैया)

भौसिला भूप बली भुव को भुज भारी भुजंगम सों भरु लीनो ।
' भूपन ' तीखन तेज-तरङ्गि सों बैरिन को कियो पानिप हीना ॥
दारिद दौ करि-बारिद सों दलि त्यों धरनीतल मीतल कीनो ।
साहि-तनै कुल-चंद सिवा जस-चंद सों चंद कियो ब्रवि
छीनो ॥ ६८ ॥

(कवित्त मनहरण)

बीर बिजैपुर के उजीर-निमिचर गोलकुंडा-वारे घूघू तें उड़ाए
हैं जहान सों । मंद करी मुखरुचि चंद-चकना की, कियो ' भूपन '
भूपित द्विज चक्र खानपान सों ॥ तुरकान भलिन कुमुदिनी करी
है हिंदुवान-नलिनी खिलाये विविध विधान सों । चारु सिवा
नाम को प्रतापी सिवा साहि-सुव तापी सब भूमि यों कृपान
भासमान सों ॥ ६९ ॥

[उल्लेख]

(लक्षण-दाहा)

कैं बहुते कैं एक जहँ एक वस्तु को देखि ।

बहु विधि करि उल्लेख हैं सो उल्लेख उल्लेख ॥ ७० ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

एक कहैं कलपद्रुम है इमि पूरत है सब की चित चाहै । एक कहैं अघतार मनोज को यों तन में अति सुंदरता है । ' भूषन ' एक कहैं अहि-इंदु यों राज विराजत वाढ्यो महा है । एक कहैं नरसिंह है संगर, एक कहैं नर-सिंह सिधा है ॥ ७१ ॥

(मनहरण दंडक)

कवि कहै करन, करनजीत कमनैत, अरिन के उर माहिं कान्हा इमि छेव है । कहत धरेस सब, धराधर सेम ऐसो और धराधरन को मेद्यों अहमेव है ॥ ' भूषन ' मनत महाराज सिधराज तेरो राज-काज देखि कोऊ पावन न भेव है । कहरी यदिल, मौज लहरी कुतुब कहै, बहरी निजाम को जिनैया कहै देव है ॥ ७२ ॥

पैज प्रतिपाल, भूमिभार को हमाल, चहुँचक्र को अमाल, भयो दंडक जहान को । साहिन को साल भयो, ज्वाल को जवाल भयो, हर को कृपाल भयो हार के बिधान को ॥ बीर रस ख्याल सिधराज भुवपाल तुष हाथ को बिस्माल भयो ' भूषन ' बखान को ? तेरो करवाल भयो दक्खिन को ढाल, भयो हिंदु को दिवाल, भयो काल तुरकान को ॥ ७३ ॥

[स्मृति]

(लक्षण-दाहा)

सम सोभा लखि आन की सुधि आवति जेहि ठौर ।

स्मृति भूषन तेहि कहत हैं ' भूषन ' कवि-सिरमौर ॥ ७४ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

तुम सिवराज ब्रजराज-अवतार आजु तुम ही जगत-काज
पोषत भरत हो । तुम्हें छोड़ि याते काहि बिनती सुजाऊँ मैं तुम्हरे
गुन गाऊँ तुम ढीले क्यों परत हो ? ' भूपन ' भनत वहि कुल मैं
नयो गुनाह नाहक समुक्ति यह चित मैं धरत हो । और नाभनन
देखि करत सुदामा सुधि मोहिँ देखि काहे सुधि भृगु की करत
हो ॥ ७५ ॥

[भ्रम]

(लक्षण-दाहा)

आन बात को आन मैं होत जहाँ भ्रम आय ।

तातों भ्रम सब कहत हैं ' भूपन ' सुकवि बनाय ॥ ७६ ॥

(उदाहरण—मालती सवेया)

पीय पहारन पास न जाहु यों तीय बहादुर सों कहैं सोपे ।
कौन बचै नवाव तुम्हें भनि ' भूपन ' भौंसिला भूप के रोपे ?
बंदि सइस्तखँहूँ को कियो जमवंत से भाऊ करन से रोपे । सिंह
विधा के सुवीरन सों गो अमीर न बाचि गुनीजन रोपे ॥ ७७ ॥

[संदेह]

(लक्षण-दाहा)

कै यह कै वह यों जहाँ होत आनि संदेह ।

' भूपन ' सो संदेह है या मैं नहिँ संदेह ॥ ७८ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

आवन गुसुलखाने पेसे कठु त्योर ठाने जाने अवरंग जू के
आनन को लेवा है । रस खोट भए ते अगोट आगरे मैं सातौ

चौकी डाँकि आनि घर कीन्हीं हृद रेवा है ॥ 'भूषण' भनत वह
चहँ चक्क चाहि कियो पातसाहि चकता की क्रांती माहिं छेवा
है । जान्यो न परत ऐसे काम है करत कोऊ गंधर्व देवा है कि
सिद्ध है कि सेवा है ॥ ७६ ॥

[शुद्ध अपन्हति]

(लक्षण-दाहा)

आन बान आरोपिये साँची बान दुराय ।
शुद्धापन्हति कहत है 'भूषन' सुकवि बनाय ॥ ८० ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

चमकती चपला न फेरत फिरंगें भट, इन्द्र को न चाप रूप
वैष्णव समाज को । धाण धुरवा न क्राये धूरि के पटल, मेघ
गाजिवो न बाजिवो है दुंदुभि दराज को ॥ भौंसिला के डरन
डरानी रिपु-रानी कहैं, पिय भजौ, देखि उदै पावस के साज को ।
घन की घटा न गज-घटनि-सनाह-साज, 'भूषन' भनत आयो सेन
शिवराज को ॥ ८१ ॥

[हेत्वपन्हति]

(लक्षण-दाहा)

जहाँ जुगुति सेाँ आन को कहिये आन कृपाय ।
हेतु अपन्हति कहत हैं ताकहँ कवि समुदाय ॥ ८२ ॥

(उदाहरण-दाहा)

सिख सरजा के कर लसै सो न होय किरवान ।
भुज-भुजगेस-भुजंगिनी भखति पौन-अरि-पान ॥ ८३ ॥

(कवित्त मनहरण)

भाषत सकल सिव जी को करबाल पर 'भूषन' कहत यह
करि कै चिन्तार को । लीन्हो अवतार करतार के कहे तैं कलि-
म्लेच्छन-हरन उद्धरन भुव-भार को ॥ चंडी है धुमंडि अरि-चंडमुंड
चाबि करि पीवत रुधिर कछु लावत न बार को । निज भरतार-
भूत-भूतन की भूषि मेरि भूपित करत भूतनाथ भरतार
को ॥ ८४ ॥

[पर्यस्त अपन्हति]

(लक्षण-दोहा)

वस्तु गोय ताको धरम आन वस्तु में रोपि ।

पर्यस्तापन्हति कहत कवि 'भूषन' मति वोपि ॥ ८५ ॥

(उदाहरण—दोहा)

काल करत कलिकाल में नहिं तुरकन को काल ।

काल करत तुरकान को सिध-सरजा-करबाल ॥ ८६ ॥

(कवित्त मनहरण)

तेरे ही भुजन पर भूतल को भार कहिये को सेसनाग दिग-
नाग हिमाचल है । तेरो अतार जग-पासन-भरन हार कछु
करतार को न तामाधि अमल है ॥ साहिन में सरजा समथ
सिधराज कवि 'भूषन' कहत जीबो तेरोई सफल है । तेरो करबाल
करै म्लेच्छन को काल बिनु काज होत काल बदनाम धरातल
है ॥ ८७ ॥

[भ्रांत अपन्हति]

(लक्षण—दोहा)

संक आन को होत ही जहँ भ्रम कीजें दूरि ।

भ्रांतापन्हति कहत हैं तहँ 'भूषन' कवि भूरि ॥ ८८ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

साहि-तनै सरजा के भय सेां भगाने भूप मेरु में लुकाने ते
लहत जाय बात हैं । 'भूपन' तहाऊं मरहटपति के प्रताप पावत
न कल अनि कौतुक उदात हैं ॥ "सिव आयो, सिव आया" संकर
के आगमन सुनि के परान उयां लगत अरि गीत हैं । "सिव
सरजा न यह सिव है महेस" करि यों ही उपदेस जच्छ रच्छक
से होत हैं ॥ ८६ ॥

(मालती सवैया)

एक समै सजि के सब सैन मिकार को आलमगीर सिधाये ।
"आवत है सरजा सम्हरो" एक आर ते लोगन बोल जनाए ॥
'भूपन' मो भ्रम औरंग के सिव भौमिला भूप की धाक धुकाये ।
धायके "सिंह" कथो समुझाय करौलनि आय अचेत उठाये ॥ ८७ ॥

[छेक अपन्हुति]

(लक्षण—देहा)

जहाँ और को संक करि साँच छिपावत बात ।
छेकापन्हुति कहत हैं 'भूपन' कवि-अवदात ॥ ८१ ॥

(उदाहरण-देहा)

तिमिर-बंस-हर अरुन-कर आयो, मजनी भार ? ।
सिव सरजा, चुप रहि मन्त्री, सूरज-कुल-सिरमौर ॥ ८२ ॥
दुरगहि बल पंडन प्रबल सरजा जिति रन मोहि ।
औरंग कहै देवान सेां सपन सुनावत तोहि ॥ ८३ ॥
सुनि सु उजीगन यों कथो "सरजा, सिव महाराज ?" ।
'भूपन' कहि चक सकुचि "नहिँ, सिकार मृगराज" ॥ ८४ ॥

[कैतव अपन्हति]

(लक्षण-दाहा)

जहँ कैतव, कल, व्याज मिसि, इन सों होत दुराव ।
कैतवपन्हति ताहि सों 'भूपन' कहि सति भाव ॥ ६५ ॥

(उदाहरण—दंडक मनहरण)

साहिन के सिच्छक, सिपाहिन के पातसाह, संगर में सिह
कैसे जिनके सुभाव हैं । 'भूपन' भनत सिव सरजा की धाक ते वै
कांपत रहत चित्त गहत न चाव हैं ॥ अफजल की अगति, सासता
की अपगति, बहुलोल बिपति में डरे उमराव हैं । पक्का मतों
करि कै मलिच्छ मन सब छेड़ि मक्का ही के मिस उतरत
दरियाव हैं ॥ ६६ ॥

साहितनै सरजा खुमान सलहेरि पास कीन्हों कुरुखेत
खीझि मीर अचलन सों । 'भूपन' भनत बलि करी है अरीन धर
धरनी पै डारि नभ प्रान दै बलन सों ॥ अमर के नाम के बहाने
गो अमरपुर चंदावत लारि सिवराज के दानन सों । कालिका-
प्रसाद के बहाने लखवायो महि बाबू उमराव राव पसु के कलन
सों ॥ ६७ ॥

[उत्प्रेक्षा]

(लक्षण—दाहा)

आन बात को आन में जहँ संभावन होय ।
वस्तु, हेतु, फल युत कहन उत्प्रेक्षा है सोय ॥ ६८ ॥

(उदाहरण वस्तूप्रेक्षा—मालती सवैया)

दानव आयो दगा करि जावली दीह भयारे महामद भार्यो ।
'भूपन' बाहुबली सरजा तेहि भेंटि के निरसंक पधार्यो ॥ बीकू

के घाय गिरे अफजल्लहि ऊपर ही भिवराज निहारयो । दाबि यों बैठो नरिंद अरिंदहि मानो मयंद गयंद पट्टारयो ॥ १९ ॥

साहि-तनै सिव साहि निमा में निसाँक लियो गढ़मिंह सोहानौ । राठिवरों को संहार भयो लरिकै सरदार गिरयो उदमानौ ॥ 'भूपन' यों यमसान भो भूतल घेरन लंथिन मानों मसानौ । ऊँचे सुकूज कूटा उचटो प्रगटो परभा परभात की मानौ ॥ २०० ॥

(कवित्त मनहरण)

दुरजन-दार भजि भजि बेसम्हार चढ़ीं उत्तर पहार डरि सिवजी नरिंद ते । 'भूपन' भनत बिन भूपन बसन, साथे भूखन पियासन हैं नाहन का निंदते ॥ बालक अयाने बाट बाँच ही बिलाने कुम्हलाने मुख कामल अमल अरविंद ते । दृगजल कज्जल कलित बढ़यो कढ़यो मानो दूजो सोत तरनि-तनू का कलिंद ते ॥ १०१ ॥

(दाहा)

महाराज सिवराज तव सुघर धवल भुव किति ।

कृवि कूटान सों कुवति मी कृति अंगन दिग भिति ॥ १०२ ॥

(हेतूप्रेक्षा-कवित्त मनहरण)

लूट्यो खानदौराँ जेरावर सफजंग अरु लूट्यो कार तलव खाँ मनहुँ अमाल है । 'भूपन' भनत लूट्यो पूना में सडस्त खान गढ़न में लूट्यो त्याँ गढ़ोइन को जाल है ॥ हेरि हेरि कूटि सलहेरि बाँच सरदार घेरि घेरि लूट्यो सब कटक कराल है । मानो हय हाथो उमराव करि साथी अवरंग डरि सिवाजी पै भेजत रिसाल है ॥ १०३ ॥

(फलोप्रेक्षा-मनहरण दंडक)

जाहि पाम जान सो तौ राखि ना सकत याते तेरे पास अचल सुप्रीति नाधियतु है । 'भूपन' भनत सिवराज तव किति

सम और की न कित्ति कहिये को कांथियतु है ॥ इंद्र को अनुज
तैं उपेंद्र-अवतार माने तेरो बाहुबल लै सलाह साधियतु है ।
पाय तर आय निज निडर बसायवे को कोट बांधियतु माने पाग
बांधियतु है ॥ १०४ ॥

(दोहा)

दुवन-सदन सब के बदन निज पिव आठो याम ।
निज बचिये को अपन जनु तुरको हर को नास ॥ १०५ ॥

[गम्योत्प्रेक्षा]

(लक्षण—दोहा)

माना इत्यादिक वचन आवत नहि जेहि ठौर ।
उत्प्रेक्षा गम गुप्त सो ' भूपन ' कहत अमौर ॥ १०६ ॥

(उदाहरण—मजहरण)

देखत उँचाई उदरन पाग सुधो राह बांस हू में चढ़ै ते जे
साहस-निकेत हैं । भिवाजी हुकुम तेरो पाय पैदलन सलहेरि
परनालो ते वै जीते जनु जेत हैं ॥ सावन भादों की भारी कुह
की अँधारी चढ़ि दुग पर जात मावतीदल सचेव हैं । ' भूपन '
भनत ताकी बात में बिचारी तेरे परताए रवि की उज्यारा गढ़
लेत हैं ॥ १०७ ॥

(दोहा)

और गढ़ोई नदीनद सिव गढ़पति दरयाव ।
दौरि दौरि चहुँ ओर ते मिलत आनि यहि भाव ॥ १०८ ॥

[रूपकानिशयोक्ति]

(लक्षण—दोहा)

ज्ञान करत उपमेय को जहँ केवल उपमान ।
रूपकानिशय-उक्ति सो ' भूपन ' कहत सुज्ञान ॥ १०९ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

बामव से विमरत विक्रम की कहा चली, विक्रम लखत
वीर बखत-बुलंद के । जागे तज-वृन्द मिवाजी नरिंद भसनंद
मालमकरंद-कुलचंद-गहिनंद के ॥ 'भूपन' भनत देम देम बैरि-
नारिन में होत अचरज घर घर दुख दंद के । कनकलतानि इंदु
इंदु माहि अरविंद, भरे अरविंदन ते बंद मकरंद के ॥ ११० ॥

[भेदकातिशयोक्ति]

(लक्षण—दोहा)

जेहि थर आनहि भाँति की बरनन बात कछूक ।

भेदकातिसय-उक्ति सो 'भूपन' कहन अचूक ॥ १११ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

श्रीनगर, नयपान्त जुमिला के छितिपाल भेजत रिमाल
चौरगढ़ कुही बाज की । मेवार, दुँढार, मारवाड़ औ बुँदेलखंड
भारखंड बाँधो-धनी चाकरी इलाज की ॥ 'भूपन' जे पूरव
पछाँह नरनाह ते थे ताकत पनाह दिलोपति सिरताज की ।
जगत के जेतवार जीत्यो अवंगजेव ग्यारी राति भूतल निहारी
सिधराज की ॥ ११२ ॥

[अक्रमातिशयोक्ति]

(लक्षण—दोहा)

जहाँ हेतु अरु काज मिलि होत एक ही साथ ।

अक्रमातिसय-उक्ति सो कहि 'भूपन' कविनाथ ॥ ११३ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

उद्धत अपार तब दुँदुभी धुकार साथ लंग्रै पारावार बाल
बृन्द रिपुगन के । तेरे चतुरंग के तुरङ्गन के रँगरेजे साथ ही उड़ात

रजपुंज हैं परन के ॥ दच्छिन के साथ सिधराज ! तेरे हाथ चढ़ें
धनुष के साथ गढ़ कोट दुरजन के । 'भूपन' असीसे, तोहिं
करत कसीसें पुनि बानन के साथ कूटें प्रान तुरकन के ॥ ११४ ॥

[चंचलातिशयोक्ति]

(लक्षण-दाहा)

जहाँ हेतु चरचाहि में काज होत तनकाल ।
चंचलातिसय-उक्ति सो 'भूपन' कहत रमाल ॥ ११५ ॥

(उदाहरण—दाहा)

आयो आयो सुनत ही सिव सरजा तुव नाँव ।
बैरि-नारि-दूग जलन सों बूढ़ि जान अरि गाँव ॥ ११६ ॥

(कवित्त मनहरण)

गढ़नेर गढ़ चाँदा भागनेर बीजापुर-नृपन की नारी रोय
हाथन मलति हैं । करनाट-हवस-फिरंगहृ विलायत बलख रुम-अरि
तिय कृतियाँ दलति हैं ॥ 'भूपन' भनत साहि-ननै सिधराज एते मान
तब धाक आगे दिसा उबलति हैं । तेरी चमू चलिवे की चरचा
चले ते चक्रवर्तिन की चतुरंग-चमू बिचलति हैं ॥ ११७ ॥

[अत्यन्तातिशयोक्ति]

(लक्षण-दाहा)

जहाँ हेतु ते प्रथम ही प्रगट होत है काज ।
अत्यन्तातिसयोक्ति सो कहि 'भूपन' कविराज ॥ ११८ ॥

(उदाहरण कवित्त मनहरण)

मंगन मनोरथ के प्रथमहि दाता तोहिं कामधेनु कामतरु
सो गनाइयतु है । याते तेरे गुन सब गाय को सकत कवि, बुद्धि

अनुसार कछु नऊ गाइयतु है । 'भूपन' भनत साहि-तनै सिव-
राज निज बखत बढ़ाय करि तोहि ध्याइयतु है । दीनता को
डारि औ अधीनता बिडारि दीह दारिद को मारि तेरे द्वार
आइयतु है ॥ ११९ ॥

(दोहा)

कवि तरुवर सिव पुजस रस सींचि अवरज मूल ।
सुफल होत है प्रथम ही पीछे प्रगटत फूल ॥ १२० ॥

[सामान्य-विशेष]

(लक्षण-दोहा)

कहिबे जहँ सामान्य है कहै जु नहाँ विशेष ।
सो सामान्य-विशेष है बरनत सुकवि अशेष ॥ १२१ ॥

(उदाहरण—दोहा)

और नृपति 'भूपन' कहै करें न सुगमौ काज ।
साहि-तनै सिव सुजस तो करे कठिनऊ आज ॥ १२२ ॥

(मालती—सवैया)

जीति लई बसुधा सिगरी घमसान घमंड कै बीरन हू की ।
'भूपन' भौंसिला झीनि लई जगती उमराव-अमीरन हू की ॥
साहितनै सिवराज को धाकनि कूटि गई धृति धीरन हू की ।
मीरन के उर पीर बढ़ी यों जु भूलि गई सुधि पोरन हू की ॥ १२३ ॥

[तुल्ययोगिता]

(लक्षण - दोहा)

तुल्ययोगिता तहँ धरम जहँ बरन्यन को एक ।
कहँ अबरन्यन को कहत 'भूपन' बरनि विवेक ॥ १२४ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

चढ़त तुरंग चतुरंग साजि सिवराज चढ़त प्रताप दिन
दिन अति जंग में । 'भूपन' चढ़त भरदहन के चित्त चाव खग
खुलि चढ़त है अरिन के अंग में ॥ भौमिला के हाथ गढ़
कोट हैं चढ़त अरि जोट हैं चढ़त एक मेरुगिरि शृंग में ।
तुरकान-गन व्यामयान हैं चढ़त विनु मान है चढ़त बदरंग
अवरंग में ॥ १२५ ॥

(दोहा)

सिख सरजा भारी भुजन भुव भर धर्यौ सभाग ।
'भूपन' अब निहचिंत हैं सेमनाग दिगनाग ॥ १२६ ॥

(द्वितीय लक्षण-दोहा)

हित अनहित को एक सो जहँ बरनत व्यवहार ।
तुल्ययोगिता और सो भूपन ग्रंथ विचार ॥ १२७ ॥

(उदाहरण—कविज मनहरण)

गुनन सों इनहूँ को बाँधि लाइयतु पुनि गुनन सों उनहूँ को
बाँधि लाइयतु है । पाय गहि इनहूँ को रोज ध्याइयतु अरु पाय
गहि उनहूँ को रोज ध्याइयतु है ॥ 'भूपन' भनत महाराज सिवराज
रस-रोस तो हिये में एक भाँति पाइयतु है । दोहाई कहे ते कवि
लोग ज्याइयतु अरु दोहाई कहे ते अरि लोग ज्याइयतु है ॥ १२८ ॥

[दीपक]

(लक्षण-दोहा)

बर्न्य अबर्न्यन को धरम जहँ बरनत हैं एक ।
दीपक ताँको कहत हैं 'भूपन' सुकवि विवेक ॥ १२९ ॥

(उदाहरण—मालती सवेया)

कामिनी कंत में, जामिनी चंद में, दामिनी पावस-मेघ-घटा में । कीर्ति दान में, सूरति ज्ञान में, प्रीति बड़ी सनमान महा में ॥ 'भूपन' भूपन में लक्ष्मी, नलिनी नव पृथ्वीदेव प्रभा में । जाहिर चारिहु आर जहान तसै हिन्दुवान खुमान सिवा में ॥ १३० ॥

[दीपकावृत्ति]

(लक्षण-दोहा)

दीपक पद के अर्थ तहँ फिरि फिरि करत बखान ।
आवृत्ति दीपक तहँ कहत 'भूपन' मुकवि मुजान ॥ १३१ ॥

(उदाहरण—दोहा)

मिथ सरजा तब दान के करि के सकत बखान ।
बहत नदोगन दान-जल उमड़त नद गजदान ॥ १३२ ॥

(मालती—सवेया)

चक्रवर्ती चक्रता-चतुरंगिनि चारिउ चापि लई दिसि
चंका । भूप दरीन दुरे भनि 'भूपन' एक अनेकन बारिधि नंका ॥
औरंगसाहि में साहि के नंद लोरा सिव साहि बजाय कै
डंका । सिंह की सिंह चपेट सहै गजराज सहै गजराज के
धंका ॥ १३३ ॥

(मनहरण—दंडक)

अटल रहे हैं दिगंतन के भूप धरि रेंयति के रूप निज देस
पेस करि कै । राना रघौ अटल बहाना करि चाकरी के बाना
तजि 'भूपन' भनत गुन भरि कै । हाड़ा रायठौर कछवाहे
गौर और रहे अटल चक्रता के चमाऊ धरि डरि कै । अटल
सिवाजी रघौ दिल्ली के निदरि धीर धरि पेड़ धरि तंग धरि गढ़
धरि कै ॥ १३४ ॥

[प्रतिवस्तूपमा]

(लक्षण-दाहा)

वाक्यन को जुग होत जहँ एकै अरथ समान ।
जुदा जुदा करि भाषिए प्रतिवस्तूपम जान ॥ १३५ ॥

(उदाहरण—लीलावती कृंद)

मद्-जल धरत द्विरद्-बल राजत, बहु-जल-धरन जलद् कृषि
साजै । पुहुमि-धरन फनिनाथ लसत अति, तेज-धरन ग्रीष्म-रवि
काजै ॥ खरग धरन सोभा तहँ राजत, रुचि 'भूपन' गुन धरन
समाजै । दिल्ली-दलन दक्षिण-दिशि-थम्भन, पेंड-धरन सिवराज
बिराजै ॥ १३६ ॥

[दृष्टांत]

(लक्षण-दाहा)

जुग वाक्यन को अरथ जहँ प्रतिविविध सो होत ।
तहाँ कहत दृष्टांत हैं 'भूपन' सुमति उदात ॥ १३७ ॥

(उदाहरण-दाहा)

शिव औरंगहि जिति सकै और न राजा राव ।
हथिमत्य पर सिंह बिनु आन न प्राप्त प्राव ॥ १३८ ॥
चाहत निरगुन सगुन को ज्ञानवंत गुनधोर ।
यही भांति निरगुन गुनिहि सिवा नेवाजत बीर ॥ १३९ ॥

(मालती—सवेया)

देत तुरी-गन गीत सुने बिनु देत करीगन गीत सुनाए ।
'भूपन' भावत भूप न आन जहान खुमान की कीरति गाए ॥
मंगन को भुवपाल घने पै निहाल करे सिवराज रिभाए । आन
अतै बरसै सरसै उमड़ै नदिया अतु पावस पाए ॥ १४० ॥

[निदर्शना]

(लक्षण-देहा)

सदृश वाक्य जुग अरथ को करिण एक आरोप ।

‘भूपन’ ताहि निदर्शना कहन बुद्धि दें ओप ॥ १४१ ॥

(उदाहरण—मालती मवेया)

मच्छद्दु मच्छद्दु में काल नृसिंह में बावन में भनि ‘भूपन’ जो है ।
जो द्विजराम में जो रघुराम में जोब कहां बलरामहु को है ॥ बौद्ध
में जो अरु जो कलकी महं विक्रम होवे को आगे सुना है । साहस
भूम-अधार सोई अब श्रीसरजा सिधराज में सो है ॥ १४२ ॥

(कवित्त—मनहरण)

कीरति-सहित जो प्रताप सरजा में वर मारतंड मध्यतेज
चाँदनी सो जानी में । सोहत उदारता औ सीलता खुमान में सो
कंचन में मृदुता सुगंधता बग्यानी में ॥ ‘भूपन’ कहत सब हिंदुन
को भाग फिरे चढ़े तं कुमति चकता हू का निसानी में । सोहत
सुवेम दान कीरति सिवा में सोई निरखी अनूप रुचि मोतिन
के पानी में ॥ १४३ ॥

(देहा)

औरन को जो जनम है, सो बाको यक रोज ।

औरन को जो राज सो, सिध सरजा की मौज ॥ १४४ ॥

साहिंन सो रन माँडिबो कीबो सुकबि निहाल ।

सिध सरजा को खयाल है औरन को जंजाल ॥ १४५ ॥

[व्यतिरेक]

(लक्षण-देहा)

सम द्विविधान दुहन में, जहँ बरनत बहि एक ।

‘भूपन’ कवि कोविद सर्व, ताहि कहत व्यतिरेक ॥ १४६ ॥

(उदाहरण-कृपय)

त्रिभुवन में परमिद्ध एक अरि-बल वह खंडिय ।
 यहि अनेक अरि-बल विहंडि रन-मंडल मंडिय ॥
 'भूपन' वह ऋतु एक पुद्गलि पाजिपहि बढावत ।
 यह छद्द ऋतु निसि दिन अपार पानिप सरमावत ॥
 भिवराज साहि सुव सन्ध नित हय गय लखन संचरइ ।
 यकइ गयंद यकइ तुरंग किमि मुरपनि सरवरि करइ ॥ १४७ ॥

(कवित्त मनहरण)

दारुन दुगुन दुरजोधन ते अघरंग 'भूपन' भनत जग राख्यो
 कुल मढ़ि कै । धरम धरम, बल भीम, पैज अरजुन, नकुल अकिल,
 सहदेव तेज चढ़ि कै ॥ साहि के सिवाजी गाजी, कर्यो दिली
 माहि चंड पांडवनहु ते पुरुषारथ मु बढ़ि कै । मूने लाखमौन
 ते कहे वै पाँच राति, ते जु घोस लाख चौकी ते अकेलो आयो
 कढ़ि कै ॥ १४८ ॥

[सहोक्ति]

(लक्षण-दाहा)

बस्तुन को भासन जाँ, जन-रंजन सह भाष ।
 ताहि सहोक्ति बखानहीं, जे 'भूपन' कविराव ॥ १४९ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

कूट्यो है हुतास आम खाम एक संग कूट्यो हरम-सरम एक
 संग बिनु ढंग ही । नैनन ते नीर धार कूट्यो एक संग कूट्यो
 सुख-रुचि मुख-रुचि त्यांही बिन रंग ही ॥ 'भूपन' बगवानें
 सिवराज मरदाने तेरी धाक बिललाने न गहन बल अंग ही ।
 दाखन को सूवा पाय दिली के अमीर तजें उत्तर की आस
 जीव-आम एक संग ही ॥ १५० ॥

[विनोक्ति]

(लक्षण-दाहा)

बिना कवृ जहँ वरनि कैं हीनों कैं नीक ।
ताकों कहत विनोक्ति है कवि 'भूपन' मति ठीक ॥ १५१ ॥

(उदाहरण-दाहा)

सोभमान जग पर किए सरजा सिवा खुमान ।
साहिन सो बिनु डर अगड़ बिन गुमान को दान ॥ १५२ ॥

(मालती सवैया)

को कविराज-बिभूपन होत बिना कवि साहितनै को कहाए ?
को कविराज सभाजित होत सभा सरजा के बिना गुन गाए ?
को कविराज भुवालन भावन भौंसिला कैं मन में बिनु भाए ?
को कविराज चढ़ै गत बाजि सिवाजि नि मौज मही बिनु पाए ? ॥ १५३ ॥

(कवित्त मनहरण)

बिना लाभ को बिचेक बिना भय जुद्ध टेक साहिन सेों सदा
साहितनै सिरताज के । बिना ही कपट प्रीति बिना ही कलेस
जीति बिना ही अनीति रीति लाज के जहाज के ॥ सुकवि-समाज
बिन अपजस-काज भनि 'भूपन' भुमिल भूप गरिवनेवाज के । बिना
ही बुराई अोज बिना काज घना फौज बिना अभिमान मौज राजे
सिवराज के ॥ १५४ ॥

कीरति को ताजी करो बाजि चढ़ि लूटि कीन्हीं भई सब
सेना बिनु बाजी बिजेंपुर की । 'भूपन' मनत भौंसिला भुवाल
धाक ही सेों धीर धरबी न फौज कुतुब के धुर की ॥ सिंह

उदैभान बिन अमर सुजान बिन मान बिन कोन्ही साहिबी त्यों
दिलीमुर की । साहि-सुब महाबाहु सिवाजी-सलाह बिन कौन
पातसाह की न पातसाही मुरकी ॥ १५५ ॥

[समासोक्ति]

(लक्षण-देहा)

बरनन कीजे आन को ज्ञान आन को होय ।
समासोक्ति भूपन कइत कवि केविद सब कोय ॥ १५६ ॥

(उदाहरण-देहा)

बड़ा डील लखि पील को सबन तउयो बन थान ।
धनि सरजा तू जगत में ताका हर्यौ गुमान ॥ १५७ ॥
तुही साँव द्विजराज है तेरी कला प्रमान ।
तो पर सिव किरपा करो जानत सकत जहान ॥ १५८ ॥

(कवित्त मनहरण)

उत्तर पहार बिघनोल खंडहर भारखंडहु प्रचार चारु केली
है बिरद की । गौर गुजरान अरु पूरव पछाँह टार जंतु जंगलीन
का बसति मारि रद की ॥ 'भूपन' जो करत न जाने बिनु घोर
सोर भूलि गयो आपनी ऊँचाई लखे कद की । खाइया प्रबल
मदगल गजराज एक सरजा सो वर के बड़ाई निज मद की ॥ १५९ ॥

[परिकर तथा परिकरांकुर]

(लक्षण-देहा)

साभिप्राय विशेषननि 'भूपन' परिकर मान ।
साभिप्राय विशेष्य ते परिकर अंकुर जान ॥ १६० ॥

(उदाहरण परिकर-कावत्त मनहरण)

बचैगा न मप्रहाने बालाल खाँ अयाने 'भूपन' बखाने दिल
आनि मेरा बरजा । तुझ ते सवाई तेरा भाई मलहेरि पास केद
किया साथ का न कोई बोर गरजा ॥ साहिन के साहि उसी
औरंग के लीन्हे गढ़ जिसका तू ब्याकर औ जिसकी है परजा ।
साहि का ललन दिली दल का दलन अफजल का मलन
सिवराज आया सरजा ॥ १६१ ॥

जाहिर-जहान जाके धनद-समान पेखियतु पासवान यों
खुमान चित चाय है । 'भूपन' भनत देखे भूप न रहत सब आप ही
सों जात दुख-दारिद विलाय है ॥ खीमे ते खलक माहि
खलभल डारन है गीमे ते पलक माहि कीन्हे रंक राय है ।
जंग जुरि अरिन के अंग का अनंग कीबो दीबो सिव साहब के
सहज सुभाय है ॥ १६२ ॥

(दोहा)

सूर-सिरोमनि सूर-कुल सिव सरजा मकरंद ।
'भूपन' क्या औरंग जिते कुल मलिच्छ कुल चंद ॥ १६३ ॥

(परिकरांकुर-दोहा)

'भूपन' भनि सबही तबहि जीयो हा जुरि जंग ।
क्यों जीते सिवराज सों अब अथक अवरंग ? ॥ १६४ ॥

[श्लेष]

(लक्षणा-दोहा)

एक बचन में होत जहँ बड़ अर्थन को ज्ञान ।
श्लेस कहत हैं ताहि को 'भूपन' सुकवि सुजान ॥ १६५ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

सीता संग सोभित सुलच्छन महाय जाके भू पर भरत नाम
भाई नीति चारु है । 'भूषन' भनन कुल सूर कुल-भूषन हैं
दासरथी सब जाके भुज भुष भारु है ॥ अरि लंक तोर जोर जाके
संग वानर हैं सिंधुर हैं बांधे जाके दल को न पारु है । तेगहि
कै भेंटै जोन राकस मरद जाने सरजा सिवाजी राम ही को
अवतारु है ॥ १६६ ॥

देखत सरूप को सिहात न मिलन काज जग जीतिवे की जामें
रीति क्लृप्त बल की । जाके पास आवै ताहि निधन करति वेगि
'भूषन' भनत जाकी संगति न फल की ॥ कीरति कामिनी राच्यो
सरजा सिवा की एक बस कै सकै न बस-करनी सकल की ।
चंचल सरस एक काहू पै न रहै दारी गनिका-समान सूदेदारी
दिली-दल की ॥ १६७ ॥

[अप्रस्तुतप्रशंसा]

(लक्षण-दोहा)

प्रस्तुति लीन्हें होत जहँ, अप्रस्तुत परसंस ।

अप्रस्तुति परसंस सो कहत सुकवि अवतंस ॥ १६८ ॥

(उदाहरण-दोहा)

हिंदुनि सों तुरकिनि कहैं तुम्हें सदा संतोष ।

नाहिन तुम्हरे पतिन पर सिव सरजा कर रोष ॥ १६९ ॥

अरि-तिय मिलिनि सों कहैं बन बन जाय इकंत ।

सिव सरजा सों बैर नहिं सुखी तिहारे कंन ॥ १७० ॥

(मालती सवैया)

काहू पै जात न 'भूषन' जे गढ़पाल कि मौज निहाल रहे हैं ।
आवत हैं जु गुनी जन दक्षिण भोंसिला के गुन गीत लहे हैं ॥

राजन राव सवै उमराव खुमान कि धाक धुके यों कहे हैं । संक
नहीं, सरजा सिवराज सेां आजु दुनी में गुनी निरभै हैं ॥ १७१ ॥

[पर्यायोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

बचनन की रचना जहाँ वर्णनीय पर जानि ।

परजायोक्ति कहत हैं 'भूपन' ताहि बखानि ॥ १७२ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

महाराज सिवराज तेरे बैर देखियतु घन बन हैं रहे हरम
हबसीन के । 'भूपन' भनन तेरे बैर रामनगर जवारि परबाह बहे
रुधिर नदीन के ॥ सरजा समथ्य बीर तेरे बैर बीजापुर बैरी-
बैयरनि कर चीन्ह न चुरीन के । तेरे रोस देखियत आगरे दिली
के बीच सिंदुर के बंद मुख इंदु जमनीन के ॥ १७३ ॥

[व्याजस्तुति]

(लक्षण-दोहा)

सुस्तुति में निंदा कहै निंदा में स्तुति होय ।

व्याजस्तुति ताको कहत कवि 'भूपन' सब कोय ॥ १७४ ॥

(उदाहरण-कवित्त मनहरण)

पीरी पीरी हुन्नै तुम देत हो मँगाय हमें सुवरन हम सेां
परखि करि लेत हो । एक पलही में लाख रुखन सेां लेत लोग
तुम राजा हैं कै लाख दीवें को मचेत हो ॥ 'भूपन' भनन महाराज
सिवराज बड़े दानी दुनी ऊपर कहाए केहि हेत हो ? रीफि हँसि
हाथी हमें सब कोऊ देत कहा रीफि हँसि हाथी एक तुमहियौ
देत हो ? ॥ १७५ ॥

तू तो रातो दिन जग जागत रहन वेऊ जागत रहत रातो दिन
वन रत हैं । 'भूपन' मनत तू विराजे रज भरो वेऊ रज भरे
देहिन दरी में बिचरत हैं ॥ तूतौ सूर गन को बिदारि बिहरत
सूर-मंडलै बिदारि वेऊ सुरलोचन रत हैं । काहे ते सिवाजी गाजी
तेरेई सुजस हात तोसों अरिबर सरिबर सी करत हैं ॥ १७६ ॥

[आक्षेप]

(लक्षण-दाहा)

पहिले कहिये बात कछु, पुनि ताको प्रतिपेध ।
ताहि कहत आक्षेप हैं 'भूपन' मुकवि सुमेध ॥ १७७ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

जाय भिरौ न भिरे बचिहौ भनि 'भूपन' भौसिला भूप सिवा
सों । जाय दरीन दुरौ दरिअौ तजिके दरियाव लँघौ लघुता सों ॥
सीकन काज वजीरन को कहे वाल यों पदिल साहि सभा सों ।
कूटि गयो तौ गयो परनालो सलाह कि राह गहौ सरजा
सों ॥ १७८ ॥

(द्वितीय—लक्षण-दाहा)

जेहि निपेध आभास ही भनि 'भूपन' सो और ।
कहत सकल आक्षेप हैं जे कविकुल-सरमौर ॥ १७९ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

पूरब के उत्तर के प्रबल पड़ाहँ हू के सब बादसाहन के गढ़
कोट हरते । 'भूपन' कहैं यों अवरंग सों वजीर जीति लीवे को
पुरतगाल सागर उतरते ॥ सरजा सिवा पर पठावत मुह्मीम
काज हजरत हम मरिखे को नाहिन हैं डरते । चाकर हैं उजुर कियो
न जाय नेक पै कछू दिन उबरते तौ घने काज करते ॥ १८० ॥

[विरोध—द्वितीय विपम]

(लक्षण-दाहा)

द्रव्य क्रिया गुण में जहाँ उपजत काज-विरोध ।

ताको कहत विरोध हैं 'भूपन' सुकवि सुबोध ॥ १८१ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

श्रीसरजा सिध तो जस सेत में हात हैं बैरिन के मुँह कारे ।
'भूपन' तेरे अरुन प्रताप सपेद लखे कुनवा नृप सारे ॥ साहि-
तनै तव कोप कृसानु ते बैरि गरे सब पानिष वारे । एक अचंभ्व
हात बड़ा तिन ओठ गहे अरि जात न जारे ॥ १८२ ॥

[विरोधाभास]

(लक्षण-दाहा)

जहँ विरोध सो जानिये, साँच विरोध न होय ।

तहाँ विरोधाभास कहि, बरनत हैं सब कोय ॥ १८३ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

दच्छिन नायक एक तुही, भुव-भामिनि को अनुकूल है भावै ।
दीनदयाल न तो सो दुनी पर म्लेच्छ के दीनहि मारि मिटावै ॥
श्रीसिवराज भनै कवि 'भूपन' तेरे सरूप को कोउ न पावै ।
सूर सुवंस में सूर-सिरोमनि है करि तू कुलचंद कहावै ॥ १८४ ॥

[विभावना]

(लक्षण-दाहा)

भयो काज बिनु हेतुही, बरनत हैं जेहि ठौर ।

तहँ विभावना होत है, कवि 'भूपन' सिरमौर ॥ १८५ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

बीर बड़े बड़े मार पठान खरो राजपूतन को गन भारो ।
‘भूपन’ आय तहाँ सिवराज लयो हरि औरंगजेब को गारो ॥
दीन्हों कुज्वाब दिलीपति को अरु कीन्हों वजीरन को मुँह कारो ।
नायो न माथहि दक्खिननाथ न साथ में फौज न हाथ
हथ्यारो ॥ १८६ ॥

(दोहा)

साहितने सिवराज की सहज ऐव यह पेन ।
अनरीके दारिद हरें, अनखीके अरि सैन ॥ १८७ ॥

[और दो विभावना]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ हेतु पूरन नहीं, उपजत है पर काज ।
के अहेतु ते और यों द्वे विभावना साज ॥ १८८ ॥

(उदा०—अपूर्ण कारण से कार्य की उत्पत्ति—कवित्त मनहरण)

दक्षिण को दावि करि बंटा है सइस्त खान पूना महिं दुना
करि जोर करवार को । हिंदुवान-खंभ गढ़पति दलथंभ भनि
‘भूपन’ भरीया कियो सुजय अपार को ॥ मनसबदार चौकीदारन
गँजाय महलन में मचाय महाभारत के भार को । तो मो को
सिवाजी जेहि दो मो आदमी सों जीयो जंग सरदार सौ हजार
असवार को ॥ १८९ ॥

(अहेतु से कार्य की उत्पत्ति)

ता दिन अखिल खलभलै खल खलक हैं जा दिन सिवाजी
गाजी नेक करखत हैं । सुनत नगारन अगार तजि अरिन की
दारगन भाजत न बार परखत हैं ॥ कूटे बार बार कूटे बारन ते

लाल देखि 'भूपन' सुकवि बगनत हरखत हैं । क्यों न उतपात होहिं
बेरिन के झंडन में कारे घन उमड़ि अंगारे बरखत हैं ॥ १६० ॥

[और विभावना]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ प्रगट 'भूपन' भनत हेतु काज ते होय ।
सो विभावना औरऊ कहत सयाने लाय ॥ १६१ ॥

(उदाहरण-दोहा)

अचरज 'भूपन' मन बढ़यो. श्रीसिधराज खुमान ।
तब कृपान-धुव-धूम ते. भयो प्रताप कृमान ॥ १६२ ॥

(कवित्त मनहरण)

साहि-ननै सिध ! तेरो सुनत पुनीत नाम धाम धाम सब ही
को पातक कटत है । तेरो जस काज आज सरजा निहारि कवि
मन भोज विक्रम कथा ते उचटत है ॥ 'भूपन' भनत तेरो दान-
संकल्प-जल अचरज सकल मही में लपटत है । और नदी नदन
ते कोकनद होत तेरो कर-कोकनद नदी नद प्रगटत है ॥ १६३ ॥

[विशेषोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ हेतु समरथ भयहु प्रगट होत नहिं काज ।
तहाँ विपेसोक्ति कहत 'भूपन' कवि सिरताज ॥ १६४ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

दै दस पाँच रुपैयन के जग कोऊ नरेम उदार कहायो ।
'भूपन' कोऊ गरीबन सों भिरि भीमहुँ ते बलवंत गनायो । कोटि
दान सिधा, सरजा के सिपाहिन साहिन के बिच लायो ॥ दौलति
इंद्र समान बढ़ी पै खुमान के नेक गुमान न आयो ॥ १६५ ॥

[असंभव]

(लक्षण-दोहा)

अनहूवे की बात कछु प्रगट भई सी जानि ।

तहाँ असंभव बरनिए सोई नाम बखानि ॥ १६६ ॥

(उदाहरण-दोहा)

औरँग यों पङ्क्तितात में करता जतन अनेक ।

सिवा लेइगो दुरग सब को जानै निमि एक ॥ १६७ ॥

(कवित्त मनहरण)

जसन के रौज यों जलूस गहि बँटा जोऽव इंद्र आवै सोऊ लागै
औरँग की परजा । 'भूपन' भनत तहाँ सरजा सिवाजी गाजी
तिनको तुजुक देखि नेकहू न तरजा ॥ ठान्यो न सताम भान्यो
साहि को इलाम धूम धाम कै न मान्यो राम सिंहहू को बरजा ।
जासों वर करि भूप बचै न दिगन्त ताके दंत तारि तखत तरे ते
आयो सरजा ॥ १६८ ॥

[असंगति, प्रथम]

(लक्षण-दोहा)

हेतु अनत ही होय जहँ काज अनत ही होय ।

ताहि असंगति कहत हैं 'भूपन' सुमति समोय ॥ १६९ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

महाराज सिधराज चढ़त तुरंग पर ग्रीवा जात नै करि गनीम
अतिबल की । 'भूपन' चलत सरजा की सैन भूमि पर छाती
दरकत है खरी अखिल खल की ॥ कियो दौरि घाघ उमगावन
अमीरन पै गई कटि नाक मिंगरेई दिली-दल की । सूरत जराई
कियो दाह पातसाह उर स्याही जाय सब पान-साही मुख
भलकी ॥ २०० ॥

[असंगति, द्वितीय]

(लक्षण-दाहा)

आन ठौर करनीय सो करै और ही ठौर ।

ताहि असंगति और कवि 'भूपन' कहत सगौर ॥ २०१ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

भूपति सिवाजी तेरी धाक सां सिपाहिन के राजा पात-
साहिन के मन ते अहं गली । भौंसिला अभंग तू तौ जुगता
जहाँ जंग तेरी एक फते हात मानो सदा संग ली ॥ साहि के
सपुत पुहुमी के पुरहत कवि 'भूपन' भनत तेरी खरगऊ दंगली ।
सत्रुन की सुकुमारी थहरानी सुंदर औ सत्रु के अगारन में राखे
जंतु जंगली ॥ २०२ ॥

[असंगति, तृतीय]

(लक्षण-दाहा)

करन लगे औरै कछु करै औरई काज ॥

तहाँ असंगति होत है कहि 'भूपन' कविराज ॥ २०३ ॥

(उदाहरण-मालती सवैया)

साहि-तनै सरजा सिव के गुन नेकहु भाषि सक्यो न प्रवीनो ।
उद्यत हात कछु करिबे को करै कछु बीर महा रस भीनो ॥ हाति
गयो चकते सुख देन को गोसलखाने गयो दुख दीनो । जाय
दिली दरगाह सुसाह को 'भूपन' बैरि बनाय ही लीनो ॥ २०४ ॥

[विषम]

(लक्षण-दाहा)

कहाँ बात यह कहँ वहै, यों जहँ करत बखान ।

तहाँ विषम भूपन कहत 'भूपन' सुकवि सुजान ॥ २०५ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

जाबलि बार सिंगारपुरी औ जवारि को राम के नैरि को
गाजि । 'भूपन' भौसिला भूपति ते सब दूरि किए करि कीरति
ताजी ॥ बैर कियो सिवाजी सेां खवास खां डौंड़िये सैन बिजेपूर
बाजी । बापुरा एदिल साहि कहाँ कहाँ दिल्ली को दामनगीर
सिवाजी ॥ २०६ ॥

लै परनालो सिवा सरजा करनाटक लौं सब देस बिगूँचे ।
बैरिन के भगे बालक वृन्द कहै कबि 'भूपन' दूरि पहुँचे ॥ नाघत
नाघत घोर घने वन हानि परे यों कटे मनो कूँचे । राजकुमार
कहाँ सुकुमार कहाँ बिकरार पहार वे ऊँचे ? ॥ २०७ ॥

[सम]

(लक्षण-दाहा)

जहाँ दुहूँ अनुरूप कां करिए उचित बखान ।

सम भूपन तामें कहत 'भूपन' सकल सुजान ॥ २०८ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

पंजहजारिन बीच खड़ा किया मैं उसका कुङ्कु भेद न पाया ।
'भूपन' यों कहि औरंगजेब उजीरन सेां बेहिसाब रिसाया ॥ कम्मर
की न कटारी दई इसलाम ने गोमलखाजा बचाया । जेअ सिवा
करता अनरथ भली भई हथ्य हथ्यार न आया ॥ २०९ ॥

(दाहा)

कठु न भयो कंता गयो, हार्यो सकल सिपाह ।

भली करे सिवराज सेां, औरंग करे सलाह ॥ २१० ॥

[विचित्र]

(लक्षण-दाहा)

जहाँ करत हैं जतन फल, चित्त चाहि बिपरीत ।

'भूषण' ताहि विचित्र कहि, बरनत सुकवि विनीत ॥ २११ ॥

(उदाहरण-दाहा)

तेँ जयसिंहहिं गढ़ दिये, सिव सरजा जस-हेत ।

लीन्हें कैयो बरस में, बार न लागी देत ॥ २१२ ॥

(कवित्त मनहरण)

वीर कल्यान दे परेभा आदि कोट साहि एदिल गँवाय
है नवाय निज सीस का । 'भूपन' भनत भागनगरी कुतुब साह
दै करि गँवायो रामगिरि से गिरीस का ॥ भौंसिला भुवाल साहि-
तनेँ गढ़पाल दिन दाउ ना लगाए गढ़ लेत पँचतीस का । सरजा
सिवाजी जयसाह मिरजा का लीने सौ गुनी बड़ाई गढ़ दीन्हे हैं
दिलीस का ॥ २१३ ॥

[प्रहरण]

(लक्षण-दाहा)

जहँ मन वांछित अरथ तेँ प्राप्ति कछु अधिकाय ।

तहाँ प्रहरण कहत हैं 'भूपन' जे कविराय ॥ २१४ ॥

(उदाहरण-मनहरण दंडक)

साहितनेँ सरजा की कीर्ति में चारों ओर चाँदनी बितान
छिति-छोर छाड़यतु है । 'भूपन' भनत ऐसो भूप भौंसिला
है जाका द्वार भिच्छुकन में मदाई भाइयतु है ॥ महादानि
सिवाजी खुमान या जहान पर दान के प्रमान जाके यों गनाइ-
यतु है । रजत की हौस किए हेम पाइयतु जासों हयन की हौस
किए हाथी पाइयतु है ॥ २१५ ॥

[विपादन]

(लक्षण-दाहा)

जहँ चितचाहे काज तेँ उपजत काज बिरुद्ध ।

ताहि विपादन कहत हैं 'भूपन' बुद्धि बिसुद्ध ॥ २१६ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

दारहि दारि मुरादहि मारि कै संगर साह सुजै बिचलायो । कै
कर मैं सब दिल्लि की दौलति औरहु देस घने अपनायो ॥ बेर
कियो सरजा सिव सों यह नौरंग के न भयो मन भायो । फौज
पठाई हुती गढ़ लेन को गाँठिहु के गढ़ कोट गँवायो ॥ २१७ ॥

(दोहा)

महाराज सिवराज तब बेरी तजि रम रुद्र ।
बचिबे को सागर तिरे बड़े सोक-समुद्र ॥ २१८ ॥

[अधिक]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ बड़े आधार ते बरनत बहि आश्रय ।
ताहि अधिक 'भूपन' कहत जानि सुग्रंथ प्रमेय ॥ २१९ ॥

(उदाहरण—दोहा)

सिव सरजा तब हाथ को नहिँ बखान करि जात ।
जाको बासी सुजस सब त्रिभुवन में न समात ॥ २२० ॥

(कवित्त मनहरण)

सहज सलील सील जलद से नील डील पव्यय से पील देत
नाहिँ अकुलात है । ' भूपन ' भनत महाराज सिवराज देत कंचन
को ढेर जो सुमेरु सो लग्यात है ॥ सरजा सघाई कामों करि
कबिताई तब हाथ की बड़ाई को बखान करि जात है ? जाको
जस टंक सातो दीप नव खंड महि मंडल की कहा ब्रह्मंड ना
समात है ॥ २२१ ॥

[अन्योन्य]

(लक्षण-दोहा)

अन्योन्या उपकार जहँ यह बरनन ठहराय ।
ताहि अन्योन्या कहत हैं अलंकार कविराय ॥ २२२ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

तो कर सों द्विति क्वाजत दान है दान हू सों अति तो कर
 क्वाजे । तेही गुनी की बड़ाई सजे अरु तेरी बड़ाई गुनी सब साजे ॥
 ' भूपन ' ताहि सों राज बिराजत राज सों तू सिवराज बिराजे ।
 तो बल सों गढ़ कोट गजें अरु तू गढ़ कोटन के बल गाजे ॥ २२३ ॥

[विशेष]

(लक्षण-दाहा)

बरनत हैं आश्रय को, जहं बिनही आधार ।
 ताहि विशेष बखानहीं, ' भूपन ' कवि-सरदार ॥ २२४ ॥

(उदाहरण—दाहा)

सिव सरजा सों जंग जुरि, चंदावत रजघंत ।
 राव अमर गो अमरपुर, समर रही रजतंत ॥ २२५ ॥

(कवित्त मनहरण)

सिवाजी खुमान सलहेरि में दिलीस-दल कीन्हों कतलाम
 करवाल गहि कर में । सुभट सराहे चंदावत कट्वाहे मुगलौ
 पठान ढाहे फरकत परे फर में । ' भूपन ' भनत भोंसिला के भट
 उदभट जाति घर आए धाक फेती घर घर में । मारु के करेया
 अरि अमरपुरे मे तऊ अजों मारु मारु सोर हांत है समर में
 ॥ २२६ ॥

[व्याघात]

(लक्षण-दाहा)

और काज करना जहाँ, कसै औरई काज ।
 ताहि कहत व्याघात हैं, ' भूपन ' कवि-सिरताज ॥ २२७ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

ब्रह्म रचै पुरुषोत्तम पोसत संकर सृष्टि सँहारन हारे । तू हरि
को अवतार सिवा नृप काज सँवारे सबे हरि वारे ॥ ' भूषन '
यों अवनी यवनी कहैं कोऊ कहै सरजा सेों ह्वारे । तू सबको
प्रतिपालनहार विचारे भतार न मारु हमारे ॥ २२८ ॥

(कवित्त मनहरण)

कसत में बार बार वैसेई बलंद होत वैसेई सरस रूप समर
भरत है । ' भूषन ' भनत महाराज सिव राज मनि, सघन सदाई
जस फूलन धरत है ॥ बरछी कृपान गोली तीर केते मान जोरावर
गोला बान तिनहु को निदरत है । तेरो करवाल भयो जगत को
ढाल, अरु सोई हाल म्लेच्छन के काल को करत है ॥ २२९ ॥

[कारणमाला, गुम्फ]

(लक्षण-देहा)

पूरव पूरव हेतु कै, उत्तर उत्तर हेतु ।

या विधि धारा बरनिष गुम्फ कहावत नेतु ॥ २३० ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

शंकर की किरपा सरजा पर जोर बढ़ी कवि ' भूषन ' गाई ।
ता किरपा सेों सुबुद्धि बढ़ी भुव भौमिला साहि-तनै की सवाई ॥
राज-सुबुद्धि सेों दान बढ़यो अरु दान सेों पुन्य-समूह सदाई । पुन्य
सेों बाढ़यो सिवाजी खुमान खुमान सेों बाढ़ी जहान-भलाई ॥ २३१ ॥

(देहा)

सुजस दान अरु दान धन, धन उपजे किरवान ।

सो जग में जाहिर करी, सरजा सिवा खुमान ॥ २३२ ॥

[एकावली]

(लक्षण-दाहा)

प्रथम वरनि जहँ छोड़िण, जहाँ अरथ की पाँति ।

वरनत एकावलि अहै कवि 'भूषन' यहि भाँति ॥ २३३ ॥

(उदाहरण—हरिगीतिका ऋंद)

तिहुँ भुवन में 'भूषन' भनै नरलोक पुन्य सुसाज में । नरलोक में तीरथ लसै महि तीरथों की समाज में ॥ महि में बड़ी महिमा भली महिमें महाराज लाज में । रज-लाज राजत आजु है महाराज श्रीसिवराज में ॥ २३४ ॥

[मालादीपक एवं सार]

(लक्षण-दाहा)

दीपक एकावलि मिले, मालादीपक होय ।

उत्तर उत्तर उतकरप, सार कहत हैं सोय ॥ २३५ ॥

(उदाहरण, माला दीपक—कवित्त मनहरण)

मन कवि 'भूषन' को सिध की भगति जीत्यो सिध की भगति जीत्यो साधु-जन-सेवा ने । साधु-जन जीते या कठिन कलिकाल कलिकाल महावीर महाराज महिमेवा ने ॥ जगत में जीते महावीर महाराजन ते महाराज बाधन हू पातसाह लेवा ने । पातसाह बाधनौ दिली के पातसाह दिल्लीपति पातसाहै जीत्यो हिंदूपति सेवा ने ॥ २३६ ॥

(उदा० सार, मालती मयैया)

आदि बड़ी रचना है विरंचि की जामें रह्यो रचि जीव जड़ो है । ता रचना महँ जीव बड़ो अति काहे ते ता उर ज्ञान गड़ो है । जीवन में नर लोग बड़ें कवि 'भूषन' भाषत पैज अड़ो है । है नर लोग में राज बड़ा सब राजन में सिवराज बड़ा है ॥ २३७ ॥

[यथासंख्य]

(लक्षण-दाहा)

कम से कम तिनके अर्थ, कम से कम बहुरि मिलाय ।

यथासंख्य ताके कहें 'भूपन' जे कविराय ॥ २३८ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

जेई चहौ तेई गहौ सरजा सिधाजी देस संके दल दुषन के
जे वै बड़े उर के । 'भूपन' मनन भौमिला सेन अब सनमुख कोऊ
ना लरैया है धरैया धार भुर के ॥ अफजल खान, रुस्तमै-
जमान, फते खान गूटे कूटे लूटे जूटे ए उजीर बिजैपुर के । अमर
सुजान मोहकम बहलाल खान गवाँड़ें क्वाँड़ें डाँड़ें उमराव
दिलीसुर के ॥ २३९ ॥

[पर्याय]

(लक्षण-दाहा)

एक अनेकन में रहै, एकहि में कि अनेक ।

ताहि कहत पर्याय हैं, 'भूपन' सुकवि विवेक ॥ २४० ॥

(उदाहरण - दाहा)

जीति रही अवरंग में, सर्व कृत्रपति क्वाँड़ि ।

तजि ताहूँ को अब रही शिव सरजा कर माँड़ि ॥ २४१ ॥

(कवित्त मनहरण)

कोट गढ़ दै के माल मुलुक में बीजापुरी गोलकुंडा-धारी
पीछे ही को सरकतु है । 'भूपन' मनन भौमिला-भुवाल-भुजबल
रेवा ही के पार अवरंग हरकतु है । पेसकसे भेजत इरान
फिरंगान पति उनहूँ के उर याकों धाक धरकतु है । साहितनै
सिवाजी खुमान या जहान पर कौन पातसाह के न हिए खर-
कतु है ? ॥ २४२ ॥

अगर के भूप भूम उठत जहाँई तहाँ उठत बगूरे अब अति
ही अमाप हैं । जहाँई कलावँत अलापैं मधुर स्वर तहाँ भूत प्रेत
अब करत बिलाप हैं ॥ 'भूषन' सिवाजी सरजा के बैर वैरिन के
डेरन में परे मनो काहु के सराप हैं । बाजत रहे जिन महलन में
मृदंग तहाँ गाजत मतंग सिंग बाघ दीह दाप हैं ॥२४३॥

[परिवृत्ति]

(लक्षण-दाहा)

एक बात को दै जहाँ आन बात को लेत ।

ताहि कहत परिवृत्ति है 'भूषन' सुकवि सचेत ॥ २४४ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

दक्खिन-धरन धीर-धरन खुमान गढ़ लेत गढ़-धरन सों धरम
दुषारु दै । साहि नरनाह को सपूत महाबाहु लेत मुलुक
महान क्रीनि साहन को मारु दै ॥ संगर में सरजा सिवाजी
अरि सैनन को सारु हरि लेत हिंदुवान-सिर सारु दै । 'भूषन'
भुँसिल जय जस को पहारु लेत हरजू को हारु हरगन को
अहारु दै ॥२४५॥

[परिसंख्या]

(लक्षण-दाहा)

अनत बरजि कछु बस्तु जहँ धरनत एकहि ठौर ।

तेहि परिसंख्या कहत हैं 'भूषन' कवि दिलदौर ॥ २४६ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

अति मतघारे जहाँ दुरदै निहारियत तुरगन ही में चंचलाई
परकीति है । 'भूषन' अनत जहाँ पर लगैं बानन में कोक पच्छि-
नहि माहिँ बितुरन रीति है । गुनिगन चार जहाँ एक चित्त

ही के, लोक बंधें जहाँ एक सरजा की गुन प्रीति है ।
कंप कदली में बारि बुंद बदली में सिवराज अदली के राज
में यों राजनीति है ॥ २४७ ॥

[विकल्प]

(लक्षण-दोहा)

कै वह कै यह कोजिये जहँ कहनावति होय ।
ताहि विकल्प बखानहीं 'भूपन' कवि सब कोय ॥ २४८ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

मोरंग जाहु कि जाहु कुमाऊँ सिरीनगरे कि कबित
बनाए । बांधव जाहु कि जाहु अमेरि कि जोधपुरे कि चितौरहि
धाए ॥ जाहु कुतुब कि एदिल पै कि दिलीमहु पै किन
जाहु बोलाए । 'भूपन' गाय फिरो महि में बनिहै चित चाह
सिवाहि रिक्षाए ॥ २४९ ॥

(मालती सवैया)

देसन देसन नारि नरेसन 'भूपन' यों सिख देहि दया सों ।
मंगन हूँ करि, दंत गहो तिन, कंत तुम्हें हैं अनंत महा सों ॥ कोट
गहौ कि गहौ बन ओट कि फौज की जोट सजो प्रभुता सों । और
करौ किन कोटिक राह सलाह बिना बचिहौ न सिवा सों ॥ २५० ॥

[समाधि]

(लक्षण-दोहा)

और हेतु मिलि कै जहाँ होत सुगम अति काज ।
ताहि समाधि बखानहीं 'भूपन' जे कविराज ॥ २५१ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

बैर कियो सिव चाहत हो तब लौं अरि बाहो कटार
कटैठो । योंहीं मलिच्छहि छाँड़ै नहीं सरजा मन तापर रोस में

पैटो ॥ 'भूपन' क्यों अफजलन वचें अठपाव कै सिंह को पाँव
उमैटो । बीजू के घाय भुक्याई धरक है तो लागि धाय धराधर
बैटो ॥ २५२ ॥

[समुच्चय]

(लक्षण-दोहा)

एक बारही जहँ भयो बटु काजन को बंध ।
ताहि समुच्चय कहन हैं 'भूपन' जे मतिबंध ॥ २५३ ॥
(उदाहरण—मालती सवैया)

माँगि पठायो मिवा ककु देस वजीर अजानन बोल गहे ना ।
दौरि लियो सरजा परनालो यों 'भूपन' जो दिन दाय लगे ना ॥
धाक सेां खाक बिजेपुर भो मुख आयगो खान खवास के फेना ।
भै भरकी करकी धरकी दरकी दिल एदिल साहि कि सेना ॥ २५४ ॥

[द्वितीय समुच्चय]

(लक्षण-दोहा)

वस्तु अनेकन को जहाँ बरनत एकहि ठौर ।
दुतिय समुच्चय ताहि को कहि 'भूपन' कविमौर ॥ २५५ ॥
(उदाहरण—मालती सवैया)

सुन्दरता गुरुता प्रभुता भनि 'भूपन' होत है आदर जा में ।
सज्जनता औ दयालुता दीनता कामलता भलके परजा में ॥ दान
कृपानहु को करिवो करिवो अमें दीनन को बर जा में । साहन सेां
रन-टेक बिबेक इतं गुन एक मिवा सरजा में ॥ २५६ ॥

[प्रत्यनीक]

(लक्षण—दोहा)

जहँ जोरावर सबु के पत्नी पै कर जोर ।
प्रत्यनीक तासों कहें 'भूपन' बुद्धि अमोर ॥ २५७ ॥

(उदाहरण—अलसा मचैया)

लाज धरौ सिधजू सो लरौ सब सैषद सेख पठान पठाय कै ।
‘भूपन’ ह्याँ गढ़ कोटन हारे उहाँ तुम क्यों मठ तोरे रिसाय कै ? ॥
हिंदुन के पति सों न बिमान सतावन हिंदु गरीबन पाय कै । लोजै
कलंक न दिल्लि के वालम आलम आ नमगीर कहाय कै ॥ २५८ ॥

(कवित्त मनहरण)

गौर गरबीले अरबीले राठवर गयो तोहगढ़ सिंहगढ़ हिम्मति
हरप ते । कोट के कँगूरन में गोतंदाज तीरंदाज राखे हैं लगाय
गोली तीरन बरपते ॥ कै कै सावधान किरवान कसि कम्मरन
सुभट अमान चहुँ आरन करपते । ‘भूपन’ मनत तहाँ सरजा सिवा
तैं चढ़ा राति के सहारे ते अराति अबरप ते ॥ २५९ ॥

[अर्थापत्ति]

(लक्षण-दाहा)

“वह कीन्हो तो यह कहा” यों कहनावति हाँय ।

अर्थापत्ति बखानहीं तहाँ सयाने लोय ॥ २६० ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

सयन में साहन को सुन्दरी सिगवारें ऐमे भरजा सों बेर जनि
करो महाबली है । पेशकसैं भेजत बितायनी पुरतगाल सुनिकै
सहमि जात करनाट थला है ॥ ‘भूपन’ मनत गढ़कोट माल मुलुक
दै सिवा सों सलाह राखिए तो बात बली है । जाहि देत दंड
सब डरिकै अखंड सोई दिला दलभली तो निहारी कहा बली
है ? ॥ २६१ ॥

[काव्यलिंग]

(लक्षण-दाहा)

है दिहाइवे जोग जो ताका करत दिहाव ।

काव्यलिंग तासों कहैं भूपन जे कबिराव ॥ २६२ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

साइति लै लीजिए बिलाइति को सर कीजै बलख बिलायति
को बंदि अरि डावरे । 'भूपन' भनत कीजै उत्तरी भुवाल
बस पूरव के लीजिए रसाल गज झावरे ॥ दक्खिन के नाथ के
सिपाहिन सों वर करि अवरंग साहिजू कहाइए न वावरे ।
कैसे सिवराज मानु देत अवरंगे गढ़ गाढ़े गढ़पती गढ़ लीन्हें
और रावरे ॥ २६३ ॥

[अर्थान्तरन्यास]

(लक्षण-दाहा)

कह्यो अरथ जहँही लियो और अरथ उल्लेख ।

सो अर्थान्तरन्यास है कहि सामान्य विमेष ॥ २६४ ॥

(उदाहरण—सामान्य भेद-कवित्त मनहरण)

बिना चतुरंग संग बानरन लैंक बाँधि बारिधि को लंक रघु-
नन्दन जराई है । पारथ अकेले द्रान भीषम से लाख भट जीति
लीन्ही नगरी विराट में बड़ाई है । 'भूपन' भनत है गुसुलखाने में
खुमान अवरंग-साहिबी हथ्याय हरि लाई है । तौ कहा अचंभो
महराज सिवराज सदा बीरन के हिम्मत हथ्यार होत आई
है ॥ २६५ ॥

(विशेष भेद—मालती सवैया)

साहि-तनै सरजा समरथ करी करनी धरनी पर नीकी ।
भूलिगे भोज से विक्रम से औ भई बलि वेनु की कीरति फीकी ॥
'भूपन' भिच्छुक भूप भए भलि भीख लै केवल भौंसिला ही की ।
नैसुक रीझि धनेस करै, लख पेसियै रीति सदा सिवजी
की ॥ २६६ ॥

[प्रौढोक्ति]

(लक्षण-दाहा)

जहँ उतकरप अहेत को बरनत हैं करि हेत ।
प्रौढाकृति तासों कहत 'भूपन' कवि बिरदैत ॥ २६७ ॥

(उदाहरण-कवित्त मनहरण)

मानसर-बासी हंस-बंस न समान हांत, चंदन सों घस्यो घन-
सारऊ घरीक है । नारद की सारद की हांसी में कहाँ सो आभ
सरद की सुरसरी कौन पंडरीक है ॥ 'भूपन' मनत क्ययो कीरधि
में थाह लेत फेन लपटानो पेरारत को करी कहै ? । कयलास-ईस
ईस-सीस-रजनीस वहाँ अवनीस सिवा के न जस को सरीक
है ॥ २६८ ॥

[संभावना]

(लक्षण-दाहा)

“जु यों होय तौ होय इमि” जहँ संभावन होय ।
ताहि कहत संभावना कवि 'भूपन' सब कोय ॥ २६९ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

लोमस की ऐसी आयु होय कौन हू उपाय तापर कवच जो
करनवारो धरिण । ताहू पर हूजिए सहसबाहू ताहू पर सहस
गुनो साहस जो भीमहू ते करिण ॥ 'भूपन' कहैं यों अवरंगजू सों
उमराव नाहक कहौ तौ जाय दक्षिण में मरिण । चलै न कछु
इलाज भेजियत वेही काज पेसो हाय माज तौ मिवा सों जाय
लरिण ॥ २७० ॥

[मिथ्याव्यवसित]

(लक्षण-दाहा)

भूठ अरथ की सिद्धि को भूठो बरनत आन ।

मिथ्याव्यवसित कहत हैं 'भूपन' सुकवि सुजान ॥ २७१ ॥

(उदाहरण—दाहा)

पग रन में चल यों लसै उयों अंगद पग पेन ।

धुव सो भुव सो मेरु सो सिध सरजा को वैन ॥ २७२ ॥

(कवित्त मनहरण)

मेरु-सम छोटो पन, सागर सो छोटो मन, धनद को धन पेसो
 छोटो जग जाहि को । सूरज सो सीरो तेज, चांदनी सी कारी
 कित्ति, अमिय सो कटु लागै दरसन साहि को ॥ कुलिस सो कोमल
 कृपान अरि भंजिबै को 'भूपन' मनन भारी भूप भौसिलाहि को ।
 भुव सम चल पद सदा सहि-मंडल में, धुव सो चपल भुव-बल
 सिध साहि को ॥ २७३ ॥

[उल्लास]

(लक्षण-दाहा)

एकहि के गुन-दोष ते, औरे को गुन-दास ।

बरनत हैं उल्लास सो सकल सुकवि मतिपोस ॥ २७४ ॥

(उदाहरण, गुण ते दोष-मालती सबैया)

काज मही सिवराज बली हिंदुवान बड़ाइबै को उर ऊटै ।
 'भूपन' भू निरम्लेच्छ करी चहै, म्लेच्छन मारिबै को रन जूटै ॥
 हिंदु बचाय बचाय यही अग्रेसर चंदावत लौं कोइ दूटै । चंद
 अलोक ते लोक खुखो यहि कोक अभागे को सोक न दूटै ॥ २७५ ॥

(दोष से गुण-मनहरण दंडक)

देस दहपट्ट कीने, लूटि कै खजाने लीने, बचै न गढ़ाई काहु
 गढ़ सिरताज के । तोरादार सकल तिहारे मनसबदार डांड़ै

जिनके सुभाय जंग दै पिजाज के । 'भूपन' भनत बादशाह को यों
लोग सब बचन सिखावत सलाह की इलाज के । डावरे की बुद्धि
है के बावरे न कीजै बैर रावरे के बैर होत काज सिवराज
के ॥ २७६ ॥

(गुण से गुण दोहा)

नृप-सभान में आपनी होन बढ़ाई काज ।
साहितनै सिवराज के करत कवित कविराज ॥ २७७ ॥

(दोष से दोष दोहा)

सिव सरजा के बैर को यह फल आलमगीर ।
कूटे तरे गढ़ सबै कूटे गए वजोर ॥ २७८ ॥

(मनहरण दंडक)

दौलति दिली को पाय औ कहाय आलमगीर बख्श अकब्वर
के बिरद बिसारे तैं । 'भूपन' भनत लरि लरि सरजा सों जंग निपट
अभंग गढ़ कोट सब हारे तैं ॥ सुधर्यो न एकौ साज भेजि भेजि
बे ही काज बड़े बड़े बे इलाज उमराव मारे तैं । मेरे कहे मेर करु,
सिवाजी सों बैर करि गैर करि नैर निज नाहक उजारे तैं ॥ २७९ ॥

[अवज्ञा]

(लक्षण-दोहा)

औरै के गुन दोहा ते होत न जहुँ गुन दोस ।
तहाँ अवज्ञा होत है भनि 'भूपन' मतिपोस ॥ २८० ॥

(उदाहरण—मालती मयैया)

औरन के अनबादे कहा अरु बादे कहा नहि होत चहा है ।
औरन के अनरीझे कहा अरु रीझे कहा न मिटावत हा है ॥
'भूपन' श्री सिवराजहि माँगिए एक दुनी बिच दानि महा है ।
मंगन औरन के दरबार गए तौ कहा न गए तौ कहा है ? ॥ २८१ ॥

[अनुज्ञा]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ सरस गुन देखि कै करे दोस की होस ।

तहाँ अनुज्ञा होत है 'भूषन' कवि यहि रौस ॥ २८२ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

जाहिर जहान सुनि दान के बखान आहु महादानि साहि-
तनै गरिबनेषाज के । 'भूषन' जवाहिर जलूस जरबाफ जोति देखि
देखि सरजा की सुकवि समाज के ॥ तप करि करि कमलापति
सों मांगत यों लोग सब करि करि मनोरथ ऐसे साज के । बैपारी
जहाज के न राजा भारी राज के भिखारी हमें कीजै महाराज
सिधराज के ॥ २८३ ॥

[लेश]

(लक्षण-दोहा)

जहँ बरनत गुन दोष कै कहै दोष गुन रूप ।

'भूषन' ताको लेस कहि गावत सुकवि अनूप ॥ २८४ ॥

(उदाहरण—दोहा)

उदैभानु राठौर बर धरि धीरज, गढ़, पेंड ।

प्रगटे फल ताको लह्यौ परिगो सुर-पुर-पेंड ॥ २८५ ॥

कोऊ बचत न सामुहें सरजा सों रन साजि ।

भली करी पिय ! समर ते जिय लै आप भाजि ॥ २८६ ॥

[तद्गुण]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ आपनो रंग तजि गहै और को रंग ।

ताको तद्गुन कहत हैं 'भूषन' बुद्धि उतंग ॥ २८७ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

पंपा मानसर आदि अगन तलाब लागे जेहि के परन में
अकथ युत गथ के । 'भूषन' यों साज्यों रायगढ़ सिवराज रहे देव
चक चाहि कै बनाए राजपथ के ॥ बिन अवलंब कलिकानि
आसमान में हैं होत बिसराम जहाँ इंदु औ उदय के । महत उत्तंग
मनि-जोतिन के संग आनि कैयो रंग चकहा गहत रवि-रथ
के ॥ २८८ ॥

[पूर्वरूप]

(लक्षण-दोहा)

प्रथम रूप मिटि जात जहँ फिरि वैसोई होय ।

'भूषन' पूरब रूप सो कहत सयाने लोय ॥२८९॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

ब्रह्म के आनन ते निकसे ते अत्यंत पुनीत तिहूँ पुर मानी ।
राम युधिष्ठिर के बरने बलमीकिहु व्यास के अंग सोहानी ॥
'भूषन' यों कलि के कविराजन राजन के गुन पाय नसानी ॥
पुन्य चरित्र सिवा सरजें सर न्हाय पवित्र भई पुनि बानी ॥२९०॥

यों सिर पै ऊहरावत छार हैं जाते उठें असमान बगूरे ।
'भूषन' भूधरऊ धरकें जिनकें धुनि धक्कन यों बल रूरे ॥ ते सरजा
सिवराज दिए कविराजन को गजराज गरूरे । सुंडन सों पहिले
जिन सोखि कै फेरि महामद सों नद पूरे ॥२९१॥

श्रीसरजा सलहेरि के जूझ घने उमरावन के घर घाले ।
कुंभ चँदावत सैद पठान कबंधन धावत भूधर हाले ॥ 'भूषन' यों
सिवराज कि धाक भए पियरे अरुने रँग वाले । लोहै कटे लपटे
अति लोहु भए मुँह मीरन के पुनि लाले ॥२९२॥

यों कवि 'भूषन' भाषत है यक तौ पहिले कलिकाल कि सैली ।
तापर हिंदुन की सब राह सुनौरंग साह करी अति मैली ॥
साहि तनै सिव के डर सों तुरकौ गहि बारिधि की गति पैली ।
वेद पुरानन की चरचा अरु अ द्विज देवन की फिरि फैली ॥२६३॥

[अतदगुण]

(लक्षण-दोहा)

जहँ संगति ते और को गुन कछुक नहि लेत ।
ताहि अतदगुन कहत हैं 'भूषन' सुकवि सचेत ॥२६४॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

दीनदयालु दुनी-प्रतिपालक जे करता निरम्लेच्छ मही के ।
'भूषन' भूधर उद्धरिबो सुने और जिते गुन ते सब जी के ।
या कलि में अवतार लियो तऊ तेई सुभाय सिवाजी बली के ।
आय धर्या हरि ते नर रूप पै काज करे सिगरे हरि ही के ॥ २६५ ॥

(कवित्त मनहरण)

सिवाजी खुमान तेरो अंग अहं मान अहं मानम लों बदलत
कुरुख उझाह ते । 'भूषन' मनन क्यों न जाहिर जहान होय
प्यार पाय तो से ही दिखत नरनाह ते ॥ परनाप फेटा रहो
सुजस लपेटो रहो वरनत खरो नर पानिप अथाह ते । रंग रंग
रिपुन के रक्त सों रँगो रहै रातो दिन रातो पै न रातो हात
स्याह ते ॥२६६॥

(दोहा)

सिव सरजा की जगत में राजत कीरति नौल ।
अरि-तिय अंजन द्रुग हरै तऊ धौल की धौल ॥२६७॥

[अनुगुन]

(लक्षण-दोहा)

जहाँ और के संग ते बहै आपनो रंग ।

ता कहँ अनुगुन कहत हैं 'भूपन' बुद्धि उतंग ॥२६८॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

साहि-तनै सरजा मिवा के मनमुख आय कोऊ बलि जाय
न गनीम भुजबल में । 'भूपन' मनन भौसिला की दिल दौर
सुनि धाक ही भरत मलेच्छ औरंग के दल में ॥ रातो दिन रोवत
रहत यवनी हैं मोक परोई रहत दिली आगरे सकल में । कज्जल
कलित आँसुवान के उमंग संग दूना होत रोज रंग जमुना के
जल में ॥ २६९ ॥

[मीलिन]

(लक्षण-दोहा)

सदृस वस्तु में मिलि जहाँ भेद न नेक लखाय ।

ताको मीलित कहत हैं 'भूपन' जे कबिराय ॥३००॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

इंद्र निज हेरत फिरत गज-इंद्र अरु इंद्र को अनुज हेरे
दुग्धनदीस को । 'भूपन' मनन सुरसरिता को हंस हेरे, बिधि
हेरे हंस को, चकोर रजनीस को ॥ साहि-तनै विवराज करनी
करी है तैं जु होत है अचंभो देव कोटि यों तैंतीस को । पावत
न हेरे तेरे जस में हिराने निज गिरि को गिरीस हरेँ गिरिजा
गिरीस को ॥ ३०१ ॥

[उन्मीलित]

(लक्षण-दोहा)

सदृस वस्तु में मिलत पुनि जानत कौनेहु हेत ।
उनमीलित तासों कहत 'भूषन' सुकवि सचेत ॥३०२॥

(उदाहरण-दोहा)

सिध सरजा तव सुजस में मिले धौल ढ़वि तूल ।
बोल बास ते जानिए हंस चमेली फूत ॥ ३०३ ॥

[सामान्य]

(लक्षण-दोहा)

भिन्न रूप जहँ सदृस ते भेद न जान्यो जाय ।
ताहि कहत सामान्य हैं 'भूषन' कवि समुदाय ॥३०४॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

पावस की यक राति भली सु महावली सिंह सिवा गमके
ते । स्लेच्छ हजारन ही कटि गे दस ही मरहट्टन के भ्रमके ते ॥
'भूषन' हालि उठे गढ़ भूमि पठान-कबंधन के धमके ते । मीरन
के अवसान गये मिलि धोपनि सों चपला चमके ते ॥३०५॥

[विशेषक]

(लक्षण-दोहा)

भिन्न रूप सादृश्य में लहिण कछू बिसेख ।
ताहि बिशेषक कहत हैं 'भूषन' सुमति उलेख ॥३०६॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

अहमदनगर के थान किरवान लै कै जब नवसेरी खान
ते खुमान भिर्या बल ते । प्यादन सों प्यादे पखरैतन सों
पखरैत बखतरवारे बखतरवारे हल ते ॥ 'भूषन' भनत एते

मान घमसान भयो जान्यो न परत कौन आयो कौन दल ते ।
सम बेप ताके, तहाँ सरजा सिवा के नाँके वीर जाने हाँके देत,
मीर जाने चलते ॥३०७॥

[पिहित]

(लक्षण-दोहा)

परके मन की जानि गति ताको देत जनाय ।
कछु किया करि, कहत हैं पिहित ताहि कबिराय ॥३०८॥

(उदाहरण-दोहा)

गैर मिसिल ठाढ़ा मिवा अंतरजामी नाम ।
प्रकट करी रिस साह को सरजा करि न सलाम ॥३०९॥
आनि मिल्यो अरि यों गढ़ो चखन चकत्ता चाव ।
साहि तनै सरजा सिवा दिया मुच्छ पर ताव ॥३१०॥

[प्रश्नोत्तर]

(लक्षण-दोहा)

काऊ बूझै बात कछु कोऊ उत्तर देत ।
प्रश्नोत्तर ताको कहत 'भूपन' सुकवि सचेत ॥ ३११ ॥

(उदाहरण—मालती सवैया)

लोगन सो भनि 'भूपन' यों कहै खान खवास कहा सिख
दैहौ । आवत देसन लेत सिवा सरजे मिलिहौ भिरिहौ कि भगे
हौ ॥ एदिल की सभा बोलि उठी यों सलाह करौ सब कहाँ भजि
जेहौ । लीन्हो कहा लरिके अफजल्ल कहा लरिके तुमहू अब
लैहौ ? ॥ ३१२ ॥

(दोहा)

को दाता को रन चढ़े, को जग-पालनहार ? ।
कवि 'भूपन' उत्तर दियो सिव नृप हरि-अवतार ॥ ३१३ ॥

[व्याजोक्ति]

(लक्षण-दाहा)

आन हेतु सों आपनो जहाँ त्रिपावै रूप ।

व्याज-उकुति तासों कहत 'भूपन' सुकवि अनूप ॥ ३१४ ॥

(उदाहरण—मातली सवैया)

साहिन के उमराव जितेक सिवा मरजा सब लूटि लए हैं ।
 'भूपन' ते बिन दौलति है के फकार है देस बिदेस गए हैं ॥ लोग
 कहै इमि दच्छिन जेय सिमोदिया रावरे हाल ठए हैं । देत रिसाय
 के उत्तर यों हमहीं दुनियाँ ते उदास भए हैं ॥ ३१५ ॥

(दाहा)

सिवा-बेर औरंग-बदन लगी रहै नित आहि ।

कवि 'भूपन' बूझे सदा कहै देत दुख साहि ॥ ३१६ ॥

[लोकोक्ति एवं छेकोक्ति]

(लक्षण-दाहा)

कहनावति जो लोक की लोक उकुति सो जानि ।

जहाँ कहत उपमान है छेक-उकुति तेहि मानि ॥ ३१७ ॥

(उदाहरण—लोकोक्ति, दाहा)

सिध मरजा की सुधि करौ भली न कीन्ही पीव ।

सूवा है दच्छिन बले धरे जात कित जीव ? ॥ ३१८ ॥

(छेकोक्ति, दाहा)

जे सोहात सिवराज को ते कवित्त रसमूल ।

जे परमेश्वर पै चढ़ें तेई आछे फूल ॥ ३१९ ॥

(किरीटी सवैया)

औरंग जो चढ़ि दखिन आवै तो हाँते सिधावै सोऊ बिनु
 कपूर । दीनो मुहीम को भार बहादुर छागे सहै क्यों गयंद को

भापर ? ॥ सासता खाँ सँग वे हठि हारे जे साहब सातएँ ठीक
भुवपर । ये अब सूबहु आवैं सिवा पर “काल्हि के जोगी कलौंदि
को खपर” ॥ ३२० ॥

[वक्रोक्ति]

(लक्षण-दाहा)

जहाँ श्लेष सों काकु सों अरथ लगावै और ।
वक्र-उकुलि ताको कहत ‘भूपन’ कवि स्मिरमौर ॥ ३२१ ॥

(उदा० श्लेष से वक्रोक्ति—कवित्त मनहरण)

साहि-तनै तेरे बैर बैरिन को कौतुक सों वृक्षत फिरत कहौ
काहे रहे तचि हौ ? । सरजा के दर हम आए इतै भाजि तब
सिंह सों डराय याहू ठौर ते उकचिहौ ॥ ‘भूपन’ भनत वै कहैं
कि हम सिव कहैं तुम चतुराई सों कहत बात रचि हौ । सिव
जापै रूठें तौ निपट कठिनाई तुम बैर त्रिपुरारि के त्रिलोक मैं न
बचिहौ ॥ ३२२ ॥

(काकु से वक्रोक्ति—कवित्त मनहरण)

सासता खाँ दम्भिन को प्रथम पड़ाये तेहि वेटा के समेत
हाथ जाय के गंवाये है । ‘भूपन’ भनत जौलौं भेजौ उत औरै
तिन वे ही काज बरजोर कटक कटाये है ॥ जोंई सूवेदार जान
सिवाजी सो हारि तामों अवरंग साहि इमि कहैं मन भाये है ।
मुलुक लुटाये तौ लुटाये, कहा भयो ? तन आपनो बचाये
महाकाज करि आये है ॥ ३२३ ॥

(दाहा)

करि मुहीम आये कहत हजरत मनमव दैन ।
सिध सरजा सो जंग जुरि पेहैं बचिकै है न ॥ ३२४ ॥

[स्वभावोक्ति]

(लक्षण-दोहा)

साँचा तैसा बरनिए जैसा जाति स्वभाव ।

ताहि सुभावोक्ति कहत 'भूपन' जे कबिराव ॥ ३२५ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

दान समै द्विज देखि मेरह कुवेरह की संपति लुटायवे को
 हियो ललकत है । साहि के सपूत सिव साहि के बदन पर सिव
 की कथान मैं सनेह झलकत है ॥ 'भूपन' जहान हिंदुवान के
 उबारिवे को तुरकान मारिवे को वीर बलकत है । साहिन सों
 लरिवे की चरचा चलत आनि सरजा के दूगन उड़ाह
 झलकत है ॥ ३२६ ॥

काहू के कहै सुने ते जाही ओर चाहैं ताही ओर इकटक
 घरी चारिक चहत हैं । कहै ते कहत बात, कहै ते पियत खात,
 'भूपन' भनत ऊँची साँसन जहत हैं ॥ पौढ़े हैं तौ पौढ़े, बैठे बैठे,
 खरे खरे, हम को हैं ? कहा करत ? यों ज्ञान न गहत हैं । साहि के
 सपूत सिव साहि तव बैर इमि साहि सब रातों दिन सोचत
 रहत हैं ॥ ३२७ ॥

उमड़ि कुड़ाल में खवास खान आए भनि 'भूपन' त्यों धाप
 सिवराज पूरे मन के । सुनि मरदाने बाजे हय हिह्नाने धोर
 मूँछें तरराने मुख वीर धीर जन के ॥ एकै कहैं मार मार
 सम्हारि समर एकै म्लेच्छ गिरे मार बीच बेसम्हार तन के ।
 कुंडन के ऊपर कड़ाके उठै ठौर ठौर जीरन के ऊपर खड़ाके
 खड़गन के ॥ ३२८ ॥

आगे आगे तरुन तरायले चलत चले तिनके अमोद मंद
 मंद मोद सकसै । अड़दार बड़े गड़दारन के हाँके सुनि अड़े
 गैर गैर माहि रोस रस अकसै ॥ तुंडनाय सुनि गरजत गुंजरत

भौर 'भूपन' भनत तेऊ महा मद कृकसै । कीरति के काज
महाराज भिवराज सब पेसे गजराज कविराजन को बकसै ॥३२६॥

[भाविक]

(लक्षण-दाहा)

भयो हानहारो अरथ बरनत जहँ परतच्छ ।
ताको भाविक कहत हैं 'भूपन' कवि मति स्वच्छ ॥३३०॥

(उदाहरण— कवित्त मनहरण)

अजों भूतनाथ मंडमाल लेत हरपत भूतन अहार लेत
अजहँ उछाह है । 'भूपन' भनत अजों काटे करवातन के कारे
कंजरन परे कठिन कराह है ॥ मिह भिवराज सलहेरि के
समीप ऐसा कान्हों कतलाम दिल्ली-दल को सिपाह है । नदी
रन मंडल रहेलन-रुधिर अजों अजों रविमंडल रहेलन की
राह है ॥ ३३१ ॥

गजघटा उमड़ी महा घनघटा सी घोर भूतल सकल मदजल
सों पटत है । बेला झाँड़ि उझलत सानो मिथु बारि मन मुदित
महेस मग नाचत कहत है ॥ 'भूपन' बहत भोंसिला भुवाल
को यों तेज जेनो सब बारही तरनि में बहत हैं । सिवाजी
खुमान दल दौरत जहान पर आनि तुरकान पर प्रलै प्रगटत
है ॥ ३३२ ॥

[भाविक छवि]

(लक्षण-दाहा)

जहँ दूर स्थित वस्तु को देखत बरनत कोय ।
भूपन 'भूपन' राज भनि भाविक छवि सो होय ॥ ३३३ ॥

(उदाहरण—मालती सबैया)

सूवन साजि पठावत है नित फौज लखे मरहट्टन केरी ।
 औरैंग आपनि दुग्ग-जमाति बिलोकत तेरियै फौज दरेरी ॥
 साहि तनै सिव साहि भई भनि 'भूपन' यों तुव धाक घनेरी ।
 रातहु दोस दिलोस तकै तुव सैन कि सूरति सूरति घेरी ॥ ३३४ ॥

[उदात्त]

(लक्षण-दाहा)

अनि संपति बरनन जहाँ तासों कहत उदात ।
 कै आनै सु लखाइये बड़ी आन का बात ॥ ३३५ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

द्वारन मतंग दीसैं आँगन तूरंग हीसैं बंदीजन बारन
 असीसैं जमरन हैं । 'भूपन' बखानै जरवाफ के सम्याने ताने
 झालरन मोतिन के झुंड झलरत हैं ॥ महाराज सिवा के नेवाजे
 कबिराज पेसे साजि कै समाज तेहि ठौर बिहरत हैं । लाल करें
 प्रात तहाँ नीलमनि करें रात याही भाँति सरजा की चरचा
 करत हैं ॥ ३३६ ॥

जाहु जनि आगे खता खाहु मति यारो गढ़नाह के
 डरन कहैं खान यों बखान कै । 'भूपन' खुमान यह सो है जेहि
 पूना माहिं लाखन में सासता खाँ डार्या बिन मान कै ॥
 हिंदुवान द्रुपदी की ईजति वचैव काज झपटि विराटपुर बाहर
 प्रमान कै । वहै है सिवा जी जेहि भीम हूँ अकेले मार्या अफजल
 कीचक को कीच घमसान कै ॥ ३३७ ॥

(दाहा)

या पूना में मति टिकौ खान बहादुर आय ।
 हाँई साइत खान को दीन्हि सिवा सजाय ॥ ३३८ ॥

[अस्युक्ति]

(लक्षण-दाहा)

जहाँ सुरतादिकन की अति अधिकारी होय ।

ताहि कहत अति उक्ति हैं 'भूषन' जे कविलोय ॥ ३३६ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

साहि तनै सिवराज ऐसे दंत गजराज जिन्हें पाय होत
कविराज बें फिकिरि हैं । भूतत भलमलात भूलै जरबान की
जकरे जँजीर जोर करत किरि हैं ॥ 'भूषन' भँवर भननात घननात
घंट पग भननात मनो घन रहे घिरि हैं । जिनकी गरज
सुने दिग्गज बे आब होत मद ही के आब गड़काव होत गिरि
हैं ॥ ३४० ॥

आजु यहि समै महाराज सिवराज तुही जगदेव जनक
जजाति अम्बरीक सो । 'भूषन' भनत तेरे दान-जल जलधि में
गुनिन को दारिद गयो बहि खरीक सो ॥ चंद-कर किंजलक
चाँदनी पराग उड़वृन्द मकरंद बंद पुंज के सरीक सो । कंद
सम कयलास नाक गंग नाल तेरे जस पुंडरीक को अकास
चंचरीक सो ॥ ३४१ ॥

(दाहा)

महाराज सिवराज के जेते सहज सुभाय ।

औरन को अति उक्ति से 'भूषन' कहत बनाय ॥ ३४२ ॥

[निरुक्ति]

(लक्षण-दाहा)

नामन को निज बुद्धि से कहुए अरथ बनाय ।

ताको कहत 'निरुक्ति' हैं भूषन जे कविराय ॥ ३४३ ॥

(उदाहरण-दाहा)

कविगन को दारिद्र-द्विग्द याही दल्यो अमान ।
 याते श्रीसिवराज को सरजा कहत जहान ॥ ३४४ ॥
 हरयो रूप इन मदन को याते भो मिथ नाम ।
 लियो विरद सरजा सचन अरि गज दलि संग्राम ॥ ३४५ ॥

(कवित्त मनहरण)

आजु सिधराज महाराज एक तुहा सरनागत जनन को
 दिवेया अर्भेदान को । फेली महिमंडल बड़ाई चहुँआर ताते
 कहिण कहाँ लों ऐसे बड़े परिमान को ? ॥ निपट गँभीर कोऊ
 लाघि न सकत बार जोधन को रन देत जैसे भाऊ-खान को ।
 दिल दगियाव क्यों न कहैं कविराव ताहि ता में बहिरात आनि
 पानिप जहान को ॥ ३४६ ॥

[हेतु]

(लक्षण दाहा)

“या निमित्त यहई भयो” यों जहँ बरनन होय ।
 ‘भूपन’ हेतु बखानहीं कवि कोविद सब कोय ॥ ३४७ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

दारुन दइत हरनाकुस बिदारिवे को भयो नरसिंह रूप
 तेज बिकरार है । ‘भूपन’ भनत त्योही राघव के मारिवे को
 रामचन्द्र भयो रघुकुल-सरदार है ॥ कंस के कुटिल बल बंसन
 बिध्रंसिवे को भयो जदुराय वासुदेव को कुमार है । पृथ्वी-
 पुरहूत साहि के सपूत सिधराज म्लेच्छन के मारिवे को तेरो
 अवतार है ॥ ३४८ ॥

[अनुमान]

(लक्षण-दाहा)

जहाँ काज ते हेतु कै जहाँ हेतु ते काज ।

जानि परत, अनुमान तहँ कहि 'भूपन' कबिराज ॥३४६॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

चित्त अनचैन आँसू उमगत नैन देखि बीबी कहैं वैन मियाँ
कहियत काहि नै ? । 'भूपन' भनत वृक्षे आए दरवार तें कँपत
बार बार क्यों सम्हार तन नाहिने ? ॥ सीनो धकधकत पसीनो
आयो देह सब हीनो भयो रूप न चितौत बाएँ दाहिने । सिवा
जी की संक मानि गए हौ सुखाय तुम्हें जानियत दक्खिन को
सूबा करो साहि नै ॥ ३४० ॥

अम्मा सी दिन की भई संभा सी सकल दिसि गगन
लगन रही गरद झ्वाय है । चीलह-गीध-चायस-समूह घोर रोर
करैं ठौर ठौर चारों ओर तम मड़राय है । 'भूपन' अँदेस देस
देस के नरेस गन आपुस में कहत यों गरव गँवाय है । बड़ी
बड़वा को जितवार चढ़ैया के दल सरजा मिवा के जानियत
इत आय है ॥ ३४१ ॥

[अथ शब्दालंकार]

(दाहा)

जे अरथालंकार ते 'भूपन' कहे उदार ।

अब शब्दालंकार ये कहत सुमनि अनुसार ॥ ३४२ ॥

[छेक एवं लाट अनुप्रास]

(लक्षण-दाहा)

स्वर-समेत अच्च्वर-पदनि आवत मद्रस प्रकास ।

भिन्न अभिन्न पदन सों छेक लाट अनुप्रास ॥ ३४३ ॥

(उदाहरण अमृतध्वनि छंद)

दिल्लिय दलन दबाय करि सिव सरजा निरसंक ।
 लूटि लियो सूरति सहर बंककरि अति डंक ॥
 बंककरि अति डंककरि अस संकक्कुलि खल ।
 सोचच्चकित भरोचच्चलिय विमोचच्चखजल ।
 तट्टट्टमन कट्टट्टिक सोह रट्टट्टिल्लिय ।
 सह्हिमि दिमि भदह्विभइ रह्हिल्लिय ॥ ३५४ ॥
 गत बल खानदलेल हुष खान बहादुर मुद्ध ।
 सिव सरजा सलहेरि दिग कुद्धद्धरि किय युद्ध ॥
 कुद्धद्धरि किय युद्धद्धरि अरि अद्धद्धरि करि ।
 मुंडद्धरि तहँ डुंडद्धकरत हंडद्ध भरि ॥
 खेदिहर वर छेदिहय करि भेदद्धि दल ।
 जंगगति सुनि रंगगति अवरंगगत बल ॥ ३५५ ॥
 लिय धरि मोहकम सिंह कहँ अरु किसोर नृपकुम्म ।
 श्रोसरजा संग्राम किय भुम्मिम्मधि करि धुम्म ।
 भुम्मिम्मधि किय धुम्मिम्मडि रिपु जुम्मिम्मलिकरि ।
 जंगगरजि उतंगगरव मतंगगन हरि ॥
 लखखलन रन दखखलनि अलखखिखति भरि ।
 भोलललहि जस नोलललरि बहलोलल्लिय धरि ॥ ३५६ ॥
 लिय जिति दिल्ली मुलुक सब सिव सरजा जुरि जंग ।
 भनि 'भूपन' भूपति भजे भंगगरव तिलंग ॥
 भंगगरव तिलंगगयउ कलिंगगलि अति ।
 दुंददवि दुहु दंददलनि बुलंददहसति ॥
 लच्छच्छिन करि म्लेच्छच्छय किय रच्छच्छवि छिति ।
 हललललि नरपलललरि परनललल्लिय जिति ॥ ३५७ ॥

(छप्पय)

मुंड कटत कहँ हंड नटत कहँ सुंड पटत घन । गिद्ध लसत

कहुँ सिद्ध हँसत सुख बृद्धि रसत मन ॥ भूत फिरत करि बूत
भिरत सुर-दूत घिरत तहँ । चंडि नचत गन मंडि रचत धुनि
डंडि मचत जहँ । इमि ठानि घोर घमसान अति 'भूषन' तज
कियो अटल । सिधराज साहि-सुख खग-बल दलि अडोल
बहलोल-दल ॥ ३५८ ॥

कुद्ध फिरत, अति जुद्ध जुगत, नहिँ रुद्ध मुरत भट । खग
बजत अरि बग तजत सिर पग सजत चट ॥ दुक्कि फिरत
मद झुक्कि भिरत करि कुक्कि गिरत गनि । रंक रकत हरसंग
झकत चतुरंग थकत भनि ॥ इमि करि संगर अति ही बिषम
'भूषन' सुजस कियो अचल । सिधराज साहि-सुख खग बल दलि
अडोल बहलोल-दल ॥ ३५९ ॥

(कवित्त मनहरण)

बानर बरार बाघ बेहर बिलार बिग बगरे बराह जानघरन
के जोम हैं । 'भूषन' भनत भारे भालुक भयानक हैं भीतर भघन
भरे लीलगऊ लोम हैं ॥ पेंड़ायल गज गन गेंड़ा गररात गनि
गेहन में गोहन गरुर गहे गोम हैं । सिधाजी की धाक मिले खल-
कुल खाक, बसे खलन के खेरन खबीसन के खोम हैं ॥ ३६० ॥

तुरमतो तहखाने तीतर गुसुतखाने सूकर सिलहखाने कूकर
करीस हैं । हिरन हरमखाने स्याही हैं सुतुरखाने पाढ़े पीलखाने
औ करंजखाने कीस हैं ॥ 'भूषन' सिधाजी गाजी खग सां खपाए
खल, खाने खाने खलन के घेरें भये खीस हैं । खड़गी खजाने
खरगोस खिलघतखाने खीसें खोलें खसखाने खाँसत खबीस
हैं ॥ ३६१ ॥

(दोहा)

औरन के जाँचे कहा नहि जाँच्यो सिधराज ? ।

औरन के जाँचे कहा जाँ जाँच्यो सिधराज ? ॥ ३६२ ॥

[यमक अनुप्रास]

(लक्षण-दाहा)

भिन्न अरथ फिरि फिरि जहाँ आई अरुद्धर-चुन्द ।

आवत हैं, सो जमक करि बरनत बुद्धि-बुलंद ॥ ३६३ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

प्रनाचारी मुनि के अमीरन की गति लई भागिबे को मीरन
समीरन की गति है । मारया जुगि जंग जन्मवंत जसवंत जाके
संग केत रजपूत रजपूत पाति है ॥ 'भूपन' भनै यों कुलभूपन
भुमिन्न सिधराज ! तेहि दीन्हा सिध राज बरकति है । नौहू खंड
दीप भूत भूतल के दीप आजु समै के दिलीप दिलीपति को
सिदति है ॥ ३६४ ॥

[पुनरुक्तिवदाभास]

(लक्षण-दाहा)

भासति है पुनरुक्ति सी नहिं निदान पुनरुक्ति ।

वदाभास-पुनरुक्ति सो 'भूपन' बरनत युक्ति ॥ ३६५ ॥

(उदाहरण—कवित्त मनहरण)

अरिन के दल सैन संग रमै समुहाने ठूक ठूक सकल कै डारे
घमसान में । बार बार रुरो महानद परबाह पूरो बहत है हाथिन
के मदजल दान में ॥ 'भूपन' भनत महाबाहु भौसिला भुवाल
सूर रवि कैसो तेज तीखन कृपान में । मालमकरंद जू के नंद
कलानिधि तेरो मरजा सिवाजी जस जगत जहान में ॥ ३६६ ॥

[चित्र]

(लक्षण-दाहा)

लिखे सुने अचरज बहै रचना होय विचित्र ।

कामधेनु आदिक घने 'भूपन' बरनत चित्र ॥ ३६७ ॥

(उदाहरण, कामधेनु चित्र-माधवी सवैया)

ध्रुव जो गुरता तिनको गुरु भूपन दानि बड़ा गिरजा पिब है ।
 ह्रुव जो हरता रिन को तरु भूपन दानि बड़ा मिरजा त्रिव है ॥
 भुव जो भरता दिन को नरु भूपन दानि बड़ा सरजा सिव है ।
 तुव जो करता इनको अरु भूपन दानि बड़ा वर जा निव है ३६८

[संकर]

(लक्षण-दोहा)

‘भूपन’ एक कवित्त में भूपन हात अनेक ।
 संकर ताको कहत हैं जिन्हें कवित्त की टंक ॥ ३६९ ॥

(उदाहरण—मनहरण दंडक)

ऐसे बाजिराज देत महाराज सिधराज ‘भुपन’ जे बाज की
 समाजें निदरत हैं । पौन पाय हीन, दूग घघट में लीन, मीन
 जल में चिल्लान, क्यों बराबरी करत हैं ॥ सबते चलाक चित
 तेऊ कुलि आलम के रहैं उर अंतर में धीर न धरत हैं । जिन
 चढ़ि आगे को चलाइयतु तीर, तीर एक भरि तऊ तीर पीछे
 ही परत हैं ॥ ३७० ॥

[अलंकार-नामावली]

(गीतिका छंद)

उपमा अनन्यै कहि बहुगि उपमा प्रतीप प्रतीप । उपमेय-
 उपमा है बहुरि मालोपमा कवि दीप ॥ ललितोपमा रूपक बहुरि
 परिनाम पुनि उल्लेख । सुमिरन भ्रमौ संदेह सुद्धापन्दित्यौ सुभ
 वेख ॥ ३७१ ॥

हेतुअपन्हुत्यौ बहुरि परजस्तपन्हुति जान । सुभ्रांतपूर्ण
अपन्हुत्यौ छेकाअपन्हुति मान ॥ बर कैतवापन्हुति गनौ उतप्रेक्ष
बहुरि बखानि । पुनि रूपकातिसयोक्ति भेदक-अतिसयोक्ति
सुजानि ॥ ३७२ ॥

अरु अकमातिसयोक्ति चंचल-अतिसयोक्तिहि लेखि । अत्यंत-
अतिसे उक्ति पुनि सामान्य चारु बिसेखि ॥ तुलियोगिता
दीपक अवृत्ति प्रतिबस्तुपम दृष्टांत । सुनिदर्सना व्यतिरेक और
सहोक्ति बरनत शांत ॥ ३७३ ॥

सुविनोक्ति भूपन समासोक्तिहु परिकरौ अरु बंस । परि-
कर सुश्रंकर श्लेष त्याँ अप्रस्तुतौपरसंस ॥ परयायउक्ति गना-
इए व्याजस्तुतिहु आक्षेप । बहुरो विरोध विरोधभास विभावना
सुख खेप ॥ ३७४ ॥

सुविशेषउक्ति असंभवौ बहुरे असंगति लेखि । पुनि विषम
सम सुबिचित्र प्रहसन अरु विषादन पेखि ॥ कहि अधिक
अन्योन्यहु बिसेष व्यघात भूपन चारु । अरु गुफ एकावली मालादी-
पकहु पुनि मारु ॥ ३७५ ॥

पुनि यथासंख्य बखानिए परजाय अरु परिवृत्ति । परि-
संख्य कहत विकल्प हैं जिनके सुमति संपत्ति ॥ बहुर्या समाधि
संमुच्चयो पुनि प्रत्यनीक बखानि । पुनि कहत अर्थापत्ति कविजन
काव्यलिगहि जानि ॥ ३७६ ॥

अरु अर्थअंतरन्यास भूपन प्रौढ़उक्ति गनाय । संभावना
मिथ्याध्यवसितऽरु यो उलासहि गाय ॥ अवज्ञा अनुज्ञा लेस
तदगुन पूर्वरूप उलेखि । अनुगुन अतद्गुन मिलित उन्मीलितहि
पुनि अवरेखि ॥ ३७७ ॥

सामान्य और विशेष पिहितौ प्रश्न उत्तर जानि । पुनि व्याज-
उक्तिऽरु लोकउक्ति सु छेकउक्ति बखानि ॥ बक्रांति जान सुभाव

उक्तिहु भाविकौ निरधारि । भाविकद्विहु सुउदात्त कहि
अत्युक्ति बहुरि बिचारि ॥ ३७८ ॥

बरने निरुक्तिहु हेतु पुनि अनुमान कहि अनुप्रास । 'भूपन'
भनत पुनि जमक गनि पुनरुक्तिवदआभास ॥ युत चित्र संकर
एक सत भूपन कहे अरु पाँच । लखि चारु ग्रंथन निज
मतां युत सुकवि मानहु साँच ॥ ३७९ ॥

(दोहा)

सुभ सत्रह सै तीस पर सुचि बदि तेरस भान ।
'भूपन' सिध-भूपन कियो पढ़ियौ सल सुजान ॥ ३८० ॥

(आशीर्वाद—मनहरण दंडक)

एक प्रभुता कै धाम, सजे तीनों वेद काम, रहैं पंच आनन
पड़ानन सरबदा । सातौ बार आठौ याम जाचक नेघार्ज नव
अवतार थिर राजै कृपन हरि गदा । सिधराज 'भूपन' अटल
रहै तौलों जौलों त्रिदस भुवन सब गंग औ नरमदा । साहितने
साहसिक भौंसिला सुरजवंस दासरथि-राज तौलों सरजा थिर
सदा ॥ ३८१ ॥

(दोहा)

पुहुमि पानि रवि ससि पवन जय लों रहै प्रकास ।
सिध सरजा तब लों जियौ 'भूपन' सुजस प्रकास ॥ ३८२ ॥

इति श्रीकविभूषणविरचिते शिवराजभूषणे
अलंकार-वर्णनं समाप्तम् ।

॥ शुभमस्तु ॥

श्री शिवा बावनी

(छप्पय)

कौन करे बस वस्तु कौन यहि लोक बड़ा अति ? को साहस
को सिंधु कौन रज-लाज धरे मति ? को चकवा को सुखद बसे
को सकल सुमन महि ? अष्ट सिद्धि नव निद्धि देत माँगे को सो
कहि ? जग वृक्षत उत्तर देत इमि कवि 'भूपन' कवि-कुल-मन्त्रिष ।
दक्षिण-नरेस सरजा सुभट साहिनंद मकरंद सिष ॥ १ ॥

(कवित्त मनहरण)

साजि चतुरंग वीर रंग में तुरंग चढ़ि सरजा सिवाजी
जंग जीतन चलत है । 'भूपन' भनत नाद बिहद नगारन के, नदी
नद मद गैवरन के रतत है ॥ पेल फेल खेल-भेल खलक
में गेल गेल गजन की ठेल पेल खेल उसलत है । तारा सो
तरनि धूरि थारा में लगत, ज़िमि थारा पर पारा पारावार यों
हलत है ॥ २ ॥

बाने फहराने बहराने घंटा गजन के नाहीं ठहराने राव
राने देस देस के । नग बहराने ग्राम नगर पराने सुनि बाजत
निमाने सिवराज जू नरेस के ॥ हाथिन के हौदा उकसाने,
कंम कंजर के मौन के भजाने जलि छूटे लट केस के । दल
के दरारे हिते कमठ करारे फूटे केरा केसे पात बिहराने फन
सेस के ॥ ३ ॥

प्रेतिनी पिमाचरु निमाचर निमाचरिहु मिलि मिलि आपुस
में गावन बधाई है । भैंरो भूत प्रेत भूरि भूधर भयंकर से जुथ
जुथ जोगिनी जमानि जुरि आई है । किलकि किलकि के कुतूहल

(१) पाठां०—बाजत निसाने दानसाहजू नरेस के । ककुभ के कुंजर
कसमसाने 'गंग' भनै भौन के भजाने अलि छूटे लट केस के ।

करति काली, डिम डिम डमरु दिगंबर बजाई है । सिवा पूँछें
सिध सेाँ समाज आजु कहाँ चली, काहू पै सिवा नरेस भृगुटी
चढ़ाई है ॥ ४ ॥

बदल न हाहि दल दच्छिन घमंड माहि घटा ह न होहि
दल सिवार्जी हँकारी के । दामिनी दमक नाहि खुले खग वीरन
के, वीर-सिर द्वाप लखु ताँजा असवारी के ॥ देखि देखि मुगलों
की हरमें भवन त्याग उभकि उभकि उठे बहत बयारी के । दिल्ली
मति-भूली कहै बात घनघोर घोर वाजत नगारे जे सितारे-गढ़-
धारी के ॥ ५ ॥

बाजि गजराज सिवराज सैन साजत ही दिल्ली दिलगीर दसा
दीरघ दुखन की । तनियाँ न तिलक सुथनियाँ पगनियाँ न घामै
घुमरात छेड़ि सेजियाँ सुखन की ॥ 'भूपन' भनत पतिबाँह
बहियाँ न तेऊ ब्रहियाँ ब्रवीली ताकि रहियाँ रखन की । बानियाँ
बिथुरि जिमि आलियाँ नलिन पर लालियाँ मलिन मुगलानियाँ
मुखन की ॥ ६ ॥

कत्ता की कराकनि चकत्ता के कटक काटि कान्ही सिन-
राज वीर अकह कहानियाँ । 'भूपन' भनत तिहुँ लोक में तिहारी
धाक दिल्ली औ बिलाइत सकल बिललानियाँ ॥ आगरे अगा-
रन हँ फाँदती कगारन ऊँचे बाँधती न बारन मुखन कुम्हिलानियाँ ।
कीबी कहें कहा औ गरीबी गहं भागी जाहि बीबी गहं सूथनी सु
नीबी गहं रानियाँ ॥ ७ ॥

ऊँचे घोर मंदर के अंदर रहन वारी ऊँचे घोर मंदर
के अंदर रहाती हैं । कंद मूल भोग करें कंद मूल भोग
करें, तीन बेर खातीं सो तौ तीन बेर खाती हैं ॥ भूपन सिथिल
अंग भूपन सिथिल अंग बिजन डुलातीं तेऽब बिजन डुलाती हैं ।

‘भूपन’ भनत सिवराज बीर तेरे आस नगन जड़ातीं ते वै नगन जड़ाती हैं ॥ ८ ॥

उतरि पलंग ते न दियो है धरा पै पग तेऊ सगबग निसि दिन चली जाती हैं । अति अकुलातीं मुरझातीं ना छिपातीं गात बात ना सोहाती बोल अति अनखाती हैं ॥ ‘भूपन’ भनत सिंह साहि के सपूत सिधा तेरी धाक सुने अरि-नारी बिललाती हैं ॥ कोऊ करें घाती कोऊ रोती पीटि छाती घरे तीनि बेर खातीं ते वै तीनि बेर खाती हैं ॥ ९ ॥

अदर ते निकसीं न मंदिर को देख्यो द्वार बिन रथ पथ ते उधारे पाँव जाती हैं । हवा हू न लागती ते हवा ते बिहाल भई लाखन की भीर में सम्हारती न छाती हैं ॥ ‘भूपन’ भनत सिवराज तेरी धाक सुनि हयादारी चीर फारि मन झुँझलाती हैं । ऐसी परी नरम हरम बादसाहन की नासपाती खाती ते बनासपाती खाती हैं ॥ १० ॥

अतर गुताव रस चौधा घनसार सब सहज सुवास की सुरति बिमराती है । पल भरि पलंग ते भूमि न धरति पाँव भूली खानपान फिरें बन बिललाती हैं ॥ ‘भूपन’ भनत सिवराज तेरी धाक सुनि दारा हार-बार न सम्हारें अकुलाती हैं । ऐसी परी नरम हरम बादसाहन की नासपाती खाती ते बनासपाती खाती हैं ॥ ११ ॥

सोये को अधार किसमिस जिनको अहार चारि को सो अंक लंक चंद सरमाती हैं । ऐसी अरि-नारी सिवराज बीर तेरे

(८) पाठा०—घोर के स्थान पर धौल । ‘मूल’ तथा ‘खाना ते वै’ के स्थान पर ‘पान’ और ‘खानवारी’ है । तीसरी पंक्ति यों है—मैननारी सी प्रमान मैन नागी सी प्रमान । चौथी पंक्ति इस प्रकार है—कहैं कवि ‘इन्दु’ महाराज आज बैरि नारि ।

(९) पाठा०—जोन्ह में न जातीं वे ही धूपें चलि जातीं पुनि कोऊ करै घाती कोऊ रोती पीटि छाती हैं ।

वास पायन में डाले परे कंद मूल खाती हैं ॥ ग्रीष्म तपनि पती
तपती न सुनी कान कंज कैसी कली बिनु पानी मुरझाती हैं ।
तेरि तारि आठ्ठे से पिछौरा मों निचोरि, मुख कहैं "अब कहाँ
पानी मुकतों में पाती हैं ?" ॥ १२ ॥

साहि सिरताज औ सिपाहिन में पातसाह अचल सुसिंधु
के से जिनके सुभाव हैं । 'भूपन' भनत परी जख रन सेवा धारू
काँपत रहत न गहत चित चाव हैं ॥ अथह बिमल जल कालिंदी
के तट केते परे जुद्ध बिपति के मारे उमराव हैं ॥ नाव भरि
बेगम उतारें बाँदी डोंगा भरि साहि मक्का मिस उतरत दरि-
याव हैं ॥ १३ ॥

कैयक हजार जहाँ गुर्ज-वरदार ठाढ़े करि कै हुस्यार नीति
पकरि समाज की । राजा जमवंत को बुलाय कै निकट राख्यो तेऊ
लखैं नीरे जिन्हें लाज स्वामि-काज की ॥ 'भूपन' तबहुँ ठठकत
ही गुसुलखाने सिंह लों झपट गुनि साहि महाराज की । हटक
हथ्यार फड़ बाँधि उमरावन की कीन्ही तब नौरंग ने भेंट सिव-
राज की ॥ १४ ॥

सबन के ऊपर ही ठाढ़ो रडिबे के जोग ताहि खरो कियो
जाय जारन के नियरे । जानि गैर मिमिल गुमीले गुमा धारि
उर कीन्ही ना सलाम न बचन बोले सियरे ॥ 'भूपन' भनत
महावीर बलकन लाग्यो सारी पातसाही के उड़ाये गये जियरे ।
तमक ते लाल मुख सिवा के निरखि भयो स्याह मुख नौरंग
सिपाह मुख पियरे ॥ १५ ॥

राना भो केतकी और बेला सब राजा भए ठौर ठौर रस
लेत नित यह काज है । सिंगरे अमीर भए कंद मकरंद भरे

(१३) शिवराज-भूषण का ६६ वाँ पद यहाँ कुछ पाठांतर के साथ
दिया हुआ है ।

भ्रमत भ्रमर जैसे फूलन का साज है ॥ 'भूपन' भनत सिवराज
वीर तेही देस देसन में राखी सब दच्छिन की लाज है । त्यागे
सदा पदपद-पद अनुमानि यह अलि नवरंगजेव चम्पा
सिवराज है ॥ १६ ॥

कूर्म कमल कमधुज है कदमफूल गौर है गुलाब राना
कैतकी विराज हैं । पाँडरि पंचार जुही सोहत है चंद्रावत सरस
बुंदला सो चमेला साजबाज है ॥ 'भूपन' भनत मुचकुंद बड़गूजर
हैं बनेलें बसंत सब कुसुम-समाज है । लेइ रस एतन को बैठि न
सकत अहे अलि नवरंगजेव चंपा सिवराज है ॥ १७ ॥

देवल गिरावत फिरावत निमान अला ऐसे हूवे राव-राने
सखी गए लबकी । गौरा गनपति आप औरंग को देख ताप आप
के मकान सब मारि गये दबकी ॥ पीरा पयगंवरा दिगंवरा दिखाई
देत सिद्ध को सिध्दाई गई रही बात सब की । कासिहु ते कला
जाती मथुरा मसीद होती सिवाजी न होता तौ सुनति हात
सब की ॥ १८ ॥

साँच को न माने देवी देवता न जाने अरु ऐसी उर आनै में
कहत बात जब की । और पातसाहन के हुती चाह हिंदुन की
अकबर साहिजहाँ कहैं साँख तब की ॥ बब्बर के तब्बर हुमायूँ
हह बाँधि गये दो में एक करी ना कुरान वेद ढब की । कासिहु
की कला जाती मथुरा मसीद होती सिवाजी न होता तौ सुनति
हात सब की ॥ १९ ॥

कुंभरुन असुर औतारी अवरंगजेव कीन्ही कल मथुरा
दोहाई फेरी सब की । खोदि डारे देवी देव सहर मुहल्ला
बाँके लाखन तुरुक कीन्हे कूटि गई तबकी ॥ 'भूपन' भनत
भाग्यो कासीपति विश्वनाथ और कौन गिनती में भूली गति
भव की । चारौ बर्न धर्म छोड़ि कलमा नेवाज पढ़ि सिवा जी न
होता तौ सुनति हात सब की ॥ २० ॥

दावा पातसाहन सेां कीन्हो सिवराज बीर जेर कीन्हो देस हृद बाँध्यों दरबारे से । हठी मरहठी तामें राख्यो ना मवास कोऊ झीने हथियार डेलें बन बनजारे से ॥ आमिप अहारी माँसहारी दे दे तारी नाचै खाँड़ि तोड़ किरचें उड़ाये सब तारे से । पील सम डील जहाँ गिरि से गिरन लागे मुंड मतवारे गिरें भुंड मतवारे से ॥ २१ ॥

छूटत कमान और तीर गोली बानन के मुसकिल होत मुरचान ह की आँट में । ताही समै सिवराज हुकुम के हला कियो दावा बाँधि पर्यो हला बीर भट जोट में ॥ 'भूपन' भनत तेरी हिम्मति कहाँ लौं कहाँ किम्मति इहाँ लगि है जाकी भट भोट में । ताव दे दे मँऊन कँगूरन पै पाँव दे दे अरि-मुख घाव दे दे कूद परें कोट में ॥ २२ ॥

उते पातसाह जूके गज्जन के छट छूटे उमड़ि घुमड़ि मतवारे घन भारे हैं । इतै सिवराज जूके छूटे सिंहराज औ बिदारे कुंभ करिन के चिक्कन कारे हैं ॥ फौजें सेख सैयद मुगल औ पठानन की मिलि इखलास काहू मीर न सम्हारे हैं । हृद हिंदुवान की बिहृद तरवारि राखि कैयो बार दिल्ली के गुमान फारि डारे हैं ॥ २३ ॥

जीव्यो सिवराज सलहेरि को समर सुनि सुनि असुरन के सुसीने धरकत हैं । देवलोका नागलोका नगलोका गावें जस अजहूँ लों परे खग दांत खरकत हैं ॥ कटक कटक काटि कीट से उड़ाये कैते 'भूपन' भनत मुख मोरि मरकत हैं । रनभूमि लेटे अधकटे फरलेटे परे रुधिर लपेटे पठनेटे फरकत हैं ॥ २४ ॥

(मालती सवैया)

केतिक देस दल्यो दल के बल दच्छिन चंगुल चाँपि कै चारुयो । रूप-गुमान हर्यो गुजरात को सूरत को रस चूसि कै

नाख्यो ॥ पंजन पेलि मलिच्छ मले सब सोई बख्यो जेहि दीन
है भाख्यो । सो रँग है सिवराज बली जेहि नौरँग में रँग एक
न राख्यो ॥ २५ ॥

सूब निरानंद व्हादरखान मे लोगन वृक्षत व्योत बखानो । दुग
सर्व सिवराज लिये धरि चारु बिचारु हिये यह आनो ॥ 'भूपन'
बालि उठे सिंगरे हुतो पृना में साइतखान के थानो । जाहिर
है जग में जसवंत लियो गढ़सिंह में गोदर बानो ॥ २६ ॥

(कवित्त मनहरण)

जोरि करि जेहैं जुमिला हू के नरेस पर तोरि अरि खंड खंड
सुभट समाज पै । 'भूपन' असाम रूम बलख बुखारे जेहैं चीन
सिलहट तरि जलधि जहाज पै ॥ सब उमरावन की हठ कूरताई
देखो कहैं नवरंगजेब साहि मिरताज पै । भीख मागि खैंहैं
बिनु मनसब जेहैं पै न जेहैं हजरत महाबली सिवराज पै ॥ २७ ॥

चंदराव चूर करि आवली जपत कीन्ही मारे सब भूप औ
सँहारे पुर धाय कै । 'भूपन' भनत तुरकान दलथंभ काटि
अफजल मारि डारे तबल बजाय कै ॥ एदिल सौं बेदिल हरम
कहैं बार बार अब कहा सोवो सुख सिंहहि जगाय कै । भेजना
है भेजो सा रिसालें सिवराज जू की बाजी करनालें परनालें
पर आय कै ॥ २८ ॥

(मालती सवैया)

साजि चमू जनि चाहु सिवा पर सोवत जाय न सिंह
जगावो । तासों न जंग जुरौ न भुजंग महाविष के मुख में कर
नावो ॥ 'भूपन' भापत बैरिबधू जनि एदिल औरंग लौं दुख
पावो । तासु सलाह की राह तजौ मति नाह दिवाल की
राह न धावो ॥ २९ ॥

छप्पय

विज्ञपुर विद्वर सूर सर धनुष न संघर्हि । मंगल विनु मल्लारि
नारि धम्मिल्ल न वंघर्हि ॥ गिरत गम्भ कोट्टे गरम्भ विज्जी विजा-
उर । चातकुंड दत्तकुंड गोलकुंड संका उर ॥ 'भूपन' प्रताप
सिवराज तव इमि दच्छिन दिसि संघर्हि । मधुराधरेस धरुधरुत
सो द्रविड निविड उर दवि डरहि ॥ ३० ॥

(कवित्त मनहरण)

अफजल खान को जिन्हों ने मयदान मारा बीजापुर गोलकुंडा
मारा जिन आज है । 'भूपन' भनत फरासीस त्यों फिरंगी मारि
हबसी तुरक डारे उलटि जहाज है ॥ देखन में रुसतम खाँ को
जिन खाक किया सालति सुरति आजु मुनी जो अवाज है ।
चौंकि चौंकि चकता कहत चहुँघा ते यारो लेत रहौ खबरि
कहाँ लों सिवराज है ॥ ३१ ॥

फिरंगाने फिरि औ हदसनि हबमाने 'भूपन' भनत कोऊ
सोवत न घरी है । बीजापुर-विपति विडरि मुनि भाज्या सब
दिल्ली दरगाह बीच परी खरभरी है ॥ राजन के राज सब साहिन
के सिरताज आज सिवराज पातमाही चित धरी है । बलख
बुखारे कसमीर लों परी पुकार धाम धाम धूमधाम रूम
साम परी है ॥ ३२ ॥

गरुड़ को दावा सदा नाग के समूह पर, दावा नाग-जूह
पर सिंह सिरताज को । दावा पुरहन को पहारन के कूल पर,
पच्छिन के गोल पर दावा सदा बाज को ॥ 'भूपन' अखंड
नखंड महिमंडल में तम पर दावा रवि-किरन-समाज को ॥
पूरब पञ्चाह देस दच्छिन ते उत्तर लों जहाँ पादसाही नहाँ
दावा सिवराज को ॥ ३३ ॥

दारा की न दौर यह, रारि नहीं खजुवे की, बाँधिबो नहीं
है किधौं मीर सहवाल को । मठ विश्वनाथ को न बास ग्राम

गोकुल को देवी को न देहरा न मंदिर गोपाल को ॥ गाढ़े गढ़ लीन्हे अरु बैरी कतलाम कीन्हें ठौर ठौर हासिल उगाहत है साल को । वृद्धि है दिल्ली सो सम्हारे क्यों न दिल्लीपति धक्का आनि लाग्यो सिवराज महाकाल को ॥ ३४ ॥

गढ़न गँजाय गढ़धरन सजाय करि झाँड़ि केते धरम दुवार दै भिखारी से । साहि के सपूत पूत बीर सिवराज सिंह केते गढ़धारी किये बन बनचारी से ॥ 'भूपन' बगवानै केते दीन्हें बंदीखाने सेख सैयद हजारी गहे रैयति बजारी से । महता से मुगल महाजन से महाराज डाँड़ि लीन्हें पकरि पठान पटवारी से ॥ ३५ ॥

सक जिमि सैल पर, अर्क तम फैल पर, बिघन की रेल पर लंवादर लेखिये । राम दसकंध पर, भीम जरासंध पर, 'भूपन' ज्यों सिंधु पर कुंभज बिसेखिये ॥ हर ज्यों अनंग पर, गरुड़ भुजंग पर, कौरव के अंग पर पार्थ ज्यों पेखिये । बाज ज्यों बिहंग पर, सिंह ज्यों मतंग पर, म्लेच्छ चतुरंग पर सिवराज देखिये ॥ ३६ ॥

बारिधि के कुंभभव, घन-बन दावानल, तरुन-तिमिर हू के किरन-समाज है । कंस के कन्हैया, कामधेनु हू के कंटकाल, कैटभ के कालिका, बिहंगम के बाज है ॥ 'भूपन' भनत जग जालिम के सच्चीपति, पन्नग के कुल के प्रबल पच्छिराज है । रावन के राम, कार्तवीज के परसुराम, दिल्लीपति दिग्गज के सेर सिवराज है ॥ ३७ ॥

दरबार दौरि करि नगर उजारि डारि कटक कटायो कोटि दुजन दरब की । जाहिर जहान जंग जालिम है जोरावर चलै न कछूक अथ एक राजा रब की ॥ सिवराज तेरे त्रास दिल्ली भयो भुषकंप थर थर काँपत बिलायति अरब की । हालत

दहन्ति जात कावुत कंधार वीर राष करि काढ़े समसेर ज्यों
करब की ॥ ३८ ॥

‘सेवा की बड़ाई औ हमारी लघुताई क्यों कहत बार बार’
कहि पातसाह गरजा । ‘सुनिये खुमान हरि तुलक गुमान
महि देवन जँवाये’ कवि ‘भूपन’ यों अगजा ॥ तुम चाको पाय
कै जरूर रन क्षेत्रो वह रावरे वजीर क्षेत्रि दंत करि परजा ।
मालुम तिहारो हात याहि में निबैरो रनु कायर सो कायर
औ सरजा सो सगजा ॥ ३९ ॥

कोट गढ़ ढाहियतु एकै पातसाहन के एकै पातसाहन के
देस दाहियतु है । ‘भूपन’ भनत महाराज सिवराज एकै साहन
की फौज पर खग बाहियतु है ॥ क्यों न हाहिं बैरिन की बोरी
सुनि बैर बधू दौरनि तिहारे कहा क्यों निबाहियतु है । रावरे
नगारे सुने बैरवारे नगरन नैनवारे नदन निवारे चाहि
यतु है ॥ ४० ॥

चकित चकता चोंकि चोंकि उटै बार बार दिली दहसति
चित चाह खरकत है । बिलखि बदन बिलम्बात बिजेपुर
पति फिरत फिरंगिन की नारी फरकति है । थर थर काँपत
कुतुबसाहि गोलकंडा हहरि हवस भूप भीर भरकति है ।
राजा सिवराज के नगरन की धाक सुनि केत पातसाहन
की छाती दरकति है ॥ ४१ ॥

मोरंग कुमाउँ औ पलाऊ बाँधे एक पत कहाँ लों गनाऊँ
जेऽव भूपन के गो ॥ हैं । ‘भूपन’ भनत गिरि विकट निवासी
लोग, बाबनी बवंजा नव कोटि धुंध जोत हैं ॥ कावुत कंधार
खुरासान जेर कीन्हो जिन मुगत पठान मेख मैदहू रोन हैं ।
अब लगि जानत हे बड़े हात पातसाह सिवराज प्रगटे ते
राजा बड़े हात हैं ॥ ४२ ॥

दुग्ग पर दुग्ग जीते सरजा सिवाजी गाजी डग्ग नाचे
डग्ग पर रुंड मुंड फरके । 'भूपन' भनत बाजे जीति का नगारे
भारे सारे करनाटी भूप सिंहल को सरके ॥ मारे सुनि सुभट
पनारे घारे उदभट नारे लगे फिरन सितारे गढ़धर के । बीजा-
पुर वीरन के गोलकुंडा धीरन के, दिल्ली उर मीरन के दाड़िम
से दरके ॥ ४३ ॥

मालवा उजैन भनि 'भूपन' भेलाम पेन सह्र सिरोज लों
पराघने परत हैं । गांडवाने तिलंगाने फिरंगाने करनाट
रुहिलाने रुहिलन हिये हहरत हैं ॥ साहि के सपूत सिधराज
तेरी धाक सुनि गढ़पति वीर तेऊ धीरन धरत हैं । बीजापुर
गोलकुंडा आगरा दिली के कोट बाजे बाजे रोज दरवाजे उघ-
रत हैं ॥ ४४ ॥

मारि करि पातसाही खाकसाही कीन्ही जिन जेर कीन्ही
जेर सों ले हृद सब मारे की । खिसि गई सेखी फिसि गई
सूरताई सब हिसि गई हिम्मत हजारों लोग सारे की ॥
बाजत दमामे लाखों धौसा आगे घहरात गरजत मेघ ज्यों
बरात चढ़े भारे की । दूल्हो सिवाजी भयो दन्दिनी दमामे घारे
दिल्ली दुलहिनि भई सह्र सितारे की ॥ ४५ ॥

डाही के रखैयन की डाही सी रहति छाती बाही मर-
जाद जस हृद हिंदुवाने की । काढ़ि गई रैयति के मन की कसक
सब मिटि गई ठसक तमाम तुरुकाने की । 'भूपन' भनत दिल्ली-
पति दिल धकधका सुनि सुनि धाक सिधराज मरदाने की । मोटी
भई चंडी बिनु चोटी के चबाय सीस खोटी भई संपति चकता
के घराने की ॥ ४६ ॥

(४६) पाठां०—कहत 'निवाज' दिल्लीपति दिल धकधकै धाक सुनि
राजा छत्रसाल मरदाने की ।

जिन फन फुतकार उड़त पहार भार कूरम कठिन जनु
कमल बिदलि गो । बिषजाल ज्वालामुखी लवलीन होत जिन
भारन बिकारि मद दिग्गज उगलि गो ॥ कीन्हों जेहि पान
पयपान सो जहान कुल कोल हू उकलि जल सिंधु खलभलि
गो । खग खगराज महाराज सिवराज जू को अखिल भुजंग
मुगलदल निगलि गो ॥ ४७ ॥

राखी हिंदुआनी हिंदुआन को निलक राख्यो अस्मृति पुरान
राखे वेद बिधि सुनी मैं । राखी रजपूती राजधानी राखी राजन
की धरा में धरम राख्यो राख्यो गुन गुनी मैं ॥ 'भूपन' सुकवि
जीति हह मरहट्टन को देस देस कीरति बखानी तब सुनी मैं ।
साहि के सपूत सिवराज समसेर तेरी दिल्ली दल दाबि कै दिवाल
राखी दुनी मैं ॥ ४८ ॥

साहि के सपूत रनसिंह सिवराज वीर वाही समसेर सिर
सत्रुन पै कटि कै । काटे वे कटक कटकन के निकट भू में हम सो
न जात कह्यो सेम सम पढ़ि कै ॥ पारावार ताहि को न पावन है
पार कोऊ सोनित समुद्र यहि भांति रह्यो बढि कै । नाँदिया की
पूँछ गहि पौरि के कपाली बचे काली बची माँस के पहारन पै
चढ़ि कै ॥ ४९ ॥

साहि के सपूत सिवराज वीर तेरे डर अडग अपार महा
दिग्गज सो डोलिया । बंदर बिलायत सो उर अकुलाने अरु संकित
सदाय रहे बेस बहलोलिया ॥ 'भूपन' भनत कौल करत कुतुबशाह
चारे चहुँ ओर इच्छा एदिल सा भोलिया । दाहि दाहि दिल कीने
दुखदाई दाग ताते आहि आहि करत औरंगशाह औलिया ॥ ५० ॥

वेद राखे बिदित पुरान राखे सार युत रामनाम राख्यो अति
रसना सुघर मैं । हिंदुन की चोटी रोटी राखी है सिपाहिन की
काँधें मैं जनेऊ राख्यो माला राखी गर मैं ॥ मीड़ि राखे मुगल

मरांडि राखे पातसाह वैरी पीसि राखे बरदान राख्यो कर मैं ।
राजन की हह राखी तेग बल सिवराज देष राखे देवल स्वधर्म
राख्यो घर मैं ॥ ४१ ॥

मपत नगेस चारों ककुभ गजेस कोल कच्छप दिनेस धरै
धरनि अखंड को । पापी घालै धरम, सुपथ चालै मारतंड,
करतार प्रतिपालै प्रानिन के चंड को ॥ 'भूपन' भनत सदा सरजा
सिवाजी गाजी मजेच्छन को मारै करि कीरति घमंड को । जग
काज धारे निहचिंत करि डारे सब भार देत आसिप तिहारे
भुजदंड को ॥ ४२ ॥

छत्रशाल दशक

(दोहा)

इक हाड़ा बूँदी-धनी मरद महेवा-वाल ।

सालत नौरंगजेब को ये दोनों छत्रशाल ॥ १ ॥

वै देखो छत्र पता ये देखो छत्रशाल ।

वै दिल्ली की ढाल ये दिल्ली-ढाहन-वाल ॥ २ ॥

भुज भुजगेस की वै संगिनी भुजंगिनी सी खेदि खेदि खार्ती
दीह दारुन दलन के । बाबतर पाखरिन बीच धँसि जाति मीन
पैरि पार जात परवाह उयो जलन के ॥ रैया राय चंपति को
छत्रशाल महाराज 'भूपन' सकत को बखानि यों बलन के ।
पच्छी पर छीने ऐसे परे पर छीने बीर तेरी बरछी ने बर छीने हैं
खलन के ॥ ३ ॥

रैया राय चंपति को चढ़ो छत्रशालमिह 'भूपन' भनत सम-
सेर जोम जमकै । भादों की घटा सी उठीं गरदै गगन घेरे सेलै
समसेरे कोरे दामिनी सी दमकै ॥ ग्यान उमरावन के आन राजा
रावन के सुनि सुनि उर लागै घन कैसी घमकै । वैहर बगारन
की अरि के अगारन की नाँवती पगारन नगारन की
घमकै ॥ ४ ॥

अख गहि छत्रशाल खीझ्यो खेत बैतये के उत ते पठाननहू
कीन्हीं झुकि झपटै । हिम्मत बड़ी के गवड़ी के खिलवारन
लौं देत सै हजारन हजार बार चपटै ॥ 'भूपन' भनत काली
हुलसी असीनन को सीसन को ईस की जमाति जोर जपटै ।
समद लों समद की सेना त्यों बुँदेलन की सेलै समसेरे भई
बाइव की लपटै ॥ ५ ॥

हैबर हरट्ट साजि गैबर गरट्ट सम पैदर के ठट्ट फौज जुरी
 तुरकाने की । 'भूपन' भनत राय चंपति को कुत्रसाल रोण्यो
 रन ख्याल है के ढाल हिंदुवाने की ॥ कैयक हजार एक बार
 बैरी मारि डारे रंजक दगनि मानो अग्नि रिमाने की । सैद
 अफगन सेन मगर सुतन लागी कपिल सराप लौं तराप
 तोपखाने की ॥ ६ ॥

चाक चक चमू के अचाक चक चहूँ और चाक सी
 फिरति धाक चंपति के लाल की । 'भूपन' भनत पातसाही मारि
 जेर कीन्हें काहू उमराव ना करेरी करवाल की ॥ सुनि सुनि
 रीति बिरदैत के वरूपन की शपन उथपन की बानि कुत्रसाल
 की । जंग जीतिलेवा ते वे है के दामदेवा भूप सेवा लागे करन
 महेश महिपाल की ॥ ७ ॥

राजत अखंड तेज क्रांतत सुजस बड़ो गाजत गयंद दिग्गजन
 हिय साल को । जाहि के प्रताप सों मलीन आफताप होत ताप
 तजि दुजन करत बहु ख्याल को ॥ साज सजि गज तुरी पैदर
 कतार दीन्हें 'भूपन' भनत ऐसो दीन प्रतिपाल को । और राव
 राजा एक मन में न ल्याऊँ अब साहू को सराहौँ के सराहौँ
 कुत्रसाल को ॥ ८ ॥

सांगन सों पेलि पेलि खगन सों खेलि खेलि समद सा
 जीता जो समद लौं बखाना है । भूपन बुँदेलामनि चंपत सपूत
 धन्य जाकी धाक बचा एक मरद भियाना है ॥ जंगल के बल से
 उदंगल प्रबल लूटा महमद अमी खों का कटक खजाना है । बीर
 रसमत्ता जाते काँपत चकता यारो कत्ता ऐसा बाँधिए जो कत्ता
 बाँधि जाना है ॥ ९ ॥

देस दहबट्टि आये आगरे दिल्ली के मेंडे बरगी बहरि मानौ दल
 जिमि देवा को । 'भूपन' भनत कुत्रसाल क्षितिपाल मनि ताके ते कियो

बिहाल जंग जीति लेवा को ॥ खंड खंड सारे यों अखंड महि मंडल
में मंडौ ते वुंदेलखंड मंडल महेवा को । दक्षिण के नाह को कटक
रोक्यो महाबाहु ज्यों सहस्रबाहु ने प्रवाह रोक्यो रेवा को ॥ १० ॥

बड़ी औड़ी उमड़ी नदी सी फौज ठेकी जहाँ मेंड़ बेड़ी कुत्रसाल
मेरु से खरे रहे । चंपति के चक्रवे मचायो घमासान बेरी मलियै
मसान आनि सौंहें जे अरे रहे ॥ 'भूपन' भनत भकरुंड रहे रुंड
मुंड भव के भुसुंड तुंड लोहू से भरे रहे । कीन्हों जस पाठ हर
पठनेटे ठाट पर काठ लों निहारे कोस साठ लों डरे रहे ॥ ११ ॥

स्फुट पद

[कवित्त मनहरण]

जानि पति बागवान मुगल पठान सेख,
 बेल सम फिरत रहत दिन रात हैं ।
 ताते हैं अनेक कोई सामने चलत कोई,
 पीठ दै चलत मुख नहीं सरमात हैं ॥
 'भूपन' भनत जुरे जहाँ जहाँ जुद्ध भूमि,
 सरजा सिवा के जस बाग न समात हैं ।
 रहँट की घड़ी जैसे औरंग के उमराव,
 पानिप दिल्ली तें लाइ ढारि ढारि जात हैं ॥ १ ॥

तेग बरदार स्याह पंखा बरदार स्याह,
 निखिल नकाब स्याह बोलत बिराह को ।
 पान पोकदानी स्याह सेनापति मुख स्याह,
 जहाँ तहाँ ठाढ़े गिनें 'भूपन' सिपाह को ॥
 स्याह भये सारी पातसाही के अमीर खान,
 काहू को न रह्यो जाम समर उमाह को ।
 सिंह सिवराज दल मुगल बिनास करि,
 घास ज्यों पजार्यो आमखास पातसाह को ॥ २ ॥

सिंधु के अगस्त और बाँस-वन-दावानल,
 तिमिर पै तरनि की किरन-समाज हो ।
 कंस के कन्हैया और चूहा के बिड़ाल पुनि,
 कैटभ की कालिका बिहंगम के बाज हो ॥
 'भूपन' भनत सब असुर के इन्द्र पुनि,
 पन्नग के कुल के प्रबल पच्छिराज हो ।
 रावन के राम सहसबाहु के परसुराम,
 दिल्ली-पति दिग्गज के सिंह सिवराज हो* ॥ ३ ॥

* शिवा बावनी के १७ वें छंद से कुछ ही पाठभेद है ।

बाप ते बिसाल भूमि जील्यो दस दिसिन तें,
 महि में प्रताप कीनों भारी भूप भान सों ।
 पेसो भयो माहि के सपूत सिधराज वीर,
 तेसो भयो हात है न ह्वै है कौऊ आन सों ॥
 एदिल कुतुबसाहु औरंग के मारिवै को,
 'भूपन' भनत को है सरजा खुमान सों ।
 तीनपुर त्रिपुर के मारे शिष तीन बान,
 तीन पातसाही हनी एक किरवान सों ॥ ४ ॥
 तेरी धाक ही ते नित हबसी फिरंगी औ,
 बिलायती बिलन्दे करें बारिधि-बिहरनौ ।
 'भूपन' भनत बीजापुर भागनेर दिल्ली,
 तेरे बैर भयौ उमरावन कौ मरनौ ॥
 बीच बीच उहाँ केते जोर से मुलुक लूटे,
 कहाँ लगि साहस सिवाजी तेरी बरनौ ।
 आठ दिगपाल त्रास आठ दिसि जीतिवै को,
 आठ पातसाहन सों आठो जाम लगनौ ॥ ५ ॥
 भूप सिवराज कोप करी रनमंडल में,
 खग गहि क्यूँ चकता के दरबारे में ।
 काटे भट बिकट औ गजन के सुंड काटे,
 पाटे उरभूमि काटे दुवन सितारे में ॥
 'भूपन' भनत चैन उपजे शिवा के चित्त,
 चौंसठ नचाई जवै रेवा के किनारे में ।
 आँतन की ताँत बाजी खाल की मृदंग बाजी,
 खोपरी की ताल पसुपाल के अखारे में ॥ ६ ॥
 दौरि चढ़ि ऊँट फरियाद चहुँ खूँट कियो,
 सूरत को कूट सिधा लूट धन लै गयो ।

कहि ऐसे आप आमखास मधि साहन को,
 कौन ठौर जायें दाग छाती बीच दै गयो ॥
 सुनि सोइ साह कहे यारो उमराओ जाओ,
 सो गुनाह राव एती बेर बीच कै गयो ।
 'भूपन' भनत मुगलान सबै चौथ दीनी,
 हिन्द में हुकुम साहिनंद जी को ह्वै गयो ॥ ७ ॥
 मारे दल मुगल तिहारी तलवार आज,
 उकलि विकलि म्यान बामी तें निकासती ।
 तेरी तलवार लागे दूसरी न माँगे कोऊ,
 काटि के करेजा स्रोन पीवत बिनासती ॥
 साहि के सपूत महाराज सिधराज बीर,
 तेरी तरवार स्याह नागिन ते जासती ।
 ऊँट हय पैदल सवारन के भुँड काटि,
 हाथिन के मुण्ड तरवूज लों तरासती ॥ ८ ॥
 तेरी स्वारी माँझ महाराज सिधराज बली,
 केतें गढ़पतिन के पंजर मचकि गे ।
 केते बीर मारि के बिडारे किरघानन तें,
 केतें गिद्ध खाय केतें अंघिका अचकि गे ॥
 'भूपन' भनत रुण्ड मुण्डन की माल करि,
 चार पाँव नाँदिया के भार ते भचकि गे ।
 दूटिगो पहार विकराल भुव मंडल के,
 सेस के सहस फन कच्छप कचकि गे ॥ ९ ॥
 तखत तखत पर तपत प्रताप पुनि,
 नृपति नृपति पर सुनी है अवाज की ।
 दंड सातौ दीप नवखंडन अदंड पर,
 नगर नगर पर छावनी समाज की ॥

उद्धि उद्धि पर दावनी खुमान जू की,
 थल थल ऊपर सुवानी कविराज की ।
 नग नग ऊपर निसान भरि जगमगे,
 पग पग ऊपर दुहाई सिवराज की ॥१०॥
 बारह हजार असवार जारि दलदार,
 ऐसे अफजल खान आये सुरसाल है ।
 सरजा खुमान मरदान सिवराज वीर,
 गंजन गनीम आये गाढ़े गढ़पाल है ॥
 'भूपन' मनत दोऊ दल मिलि गये वीर,
 भारत से भारी भये जुद्ध विकराल है ।
 पार जावली के बीच गढ़ परताप तलै,
 खान भये सोनित से अजों धरा लाल है ॥११॥
 कत्ता के कसैया महावीर सिवराज तेरी,
 रुम के चकत्ता तक संका सरसात है ।
 कासमीर काबुल कलिंग कलकत्ता अरु,
 कुल करनाटक की हिम्मत हिरात है ॥
 बिकट बिराट बंग व्याकुल बलख वीर,
 बारहो बिलायत सकल बिललात है ।
 तेरी धाक भुँधरि धरा में अरु धाम धाम,
 अंधाधुन्ध आँधी सी हमेश हहरात है ॥१२॥
 तेरी त्रास बैरी बधू पीवत न पानी कोऊ,
 पीवत अघाय धाय उठे अकुलाई है ।
 कोऊ रही बाल कोऊ कामिनी रसाल से तो,
 भई बेहवाल भागी फिर बनराई है ॥
 साहि के सपूत खुद आलम खुमान सुनो,
 'भूपन' मनत तेरी कीरति बनाई है ।

दिल्ली को तखत तजि नींद ग्वान पान तजि,
 सिवा सिवा बकत से सारी पातसाई है ॥१३॥
 बंद कीने बलख सेा वैर कीने खुरासान,
 कीनी हवमान पर पातमाही पलही ।
 बेदर कल्यान घमसान केँ छिनाय लीने,
 जाहिर जहान उपग्वान ये ही चलही ॥
 जंग करि जोर सों निज़ाम साहि जेर कीनी,
 रन में नमाय हैं बुँदल छलबल ही ।
 ताके सब देस लूटि शाह जी केँ सिवराज,
 कूटी फौज अजौँ मुगलन हाथ मलहीं ॥१४॥
 कूरम, कबंध, हाड़ा, तूँवर, बघेला बीर,
 प्रबल बुँदला हूते जेने दलमनी सों ।
 देवल गिरन लागे मूर्गति ले बिप्र भागे,
 नेकहू न जागे सोई रहो रजधनी सों ॥
 सबने पुकार करी सुरन मनाइवै को,
 सुर ने पुकार भारी कीनी विश्वधनी सों ।
 धरम रसानल को डूवन उबारयो सिवा,
 मारि तुरकान घोर बल्लम की अनी सों ॥१५॥
 बैठतीं दुकान लै केँ रानी रजवारन की,
 तहाँ आइ बादशाह राह देखे सबकी ।
 बेटिन को यार और यार है लुगाइन को,
 राहन के मार दावादार गये दबकी ॥
 ऐसी कीनी बात तौऊ कोऊ ए न कीनी घात,
 भई है नदानी वंस छितिस में कबकी ।
 दच्छिन के नाथ ऐसी देखि धरे मूर्खों हाथ,
 सिवाजी न होतो तो सुनत होती सबकी ॥१६॥

देह देह देह फिर पाइये न पेसी देह,
 जौन तौन जाँ न जानै कौन जौन आइवो ।
 जेते मनमानिक हैं तेते मनमानि कहैं,
 धराई में धरे ते तौ धराई में धराइवो ॥
 एक भूख राख भूख राखै मत भूपन की,
 याहि भूख राख भूष 'भूपन' बनाइवो ।
 गगन के गौन जम न गिनन दैहैं नग,
 नगन चलैगो साथ नग न चलाइवो ॥१७॥
 जोर रूसियान को है तेग खुरासान की है,
 नीति इंगलाँड चीन हुन्नर महादरी ।
 हिम्मत अमान मरदान हिन्दुवान हू की,
 रूम अभिमान हवसान हद कादरी ॥
 नेकी अरवान सान अदब इरान व्योही,
 क्रोध है तुरान ज्यों फरांस फंद आदरी ।
 'भूषन' भनत इमि देखिये महीनन पै,
 बीर सिरताज सिधराज की बहादरी ॥ १८ ॥
 आपस की फूटहो ते सारे हिन्दुवान दूटे,
 दूट्यो कुल रावन अनीति अति करते ।
 पैठियो पताल बलि बज्रधर-ईरपा तैं,
 दूट्यो हिरनाक्ष अभिमान चित्त धरते ॥
 दूट्यो शिशुपाल बासुदेव जू सों बैर करि,
 दूट्यो है महिष दैत्य अधम विचरते ।
 राम कर कुषन ते दूट्यो ज्यों महेज चाप,
 दूटी पातसाही सिधराज संग लरते ॥ १९ ॥
 साजि दल महज सितारा महाराज चलै,
 बाजत नगारा पढ़ै धाराधर साथ से ।

राइ उमराइ राना देसदेसपति भागे,
 तजि तजि गढ़न गढ़ाई दसमाथ से ॥
 पैग पैग होत भारी डावांडोल भूमि गोल,
 पैग पैग होत दिग्ग मैगल अनाथ से ।
 उलटत पलटत गिरत झुकत उभकत,
 शेषफनि वेदपाठिन के हाथ से ॥ २० ॥
 चोरी रही मन में ठगोरी रही रूप ही में,
 नार्ही तो रही है एक मानिनी के मान में ।
 केस में कुटिलताई नैन में चपलताई,
 भौंह में बँकाई हीनताई कटियान में ॥
 'भूषन' भनत पातसाह पातसाहन में,
 तेरे सिवराज राज अदल जहान में ।
 कुच में कटोरताई रति में निलजताई,
 कूँड़ि सब ठौर रही आइ अबलान में ॥ २१ ॥
 सुमन में मकरन्द रहत है साहिनन्द,
 मकरन्द सुमन रहत ज्ञान बोध है ।
 मानस में हंस-बंस रहत हैं तेरे जल,
 हंस मैं रहत करि मानस विसोध है ॥
 'भूषन' भनत भौंसिला भुवाल भूमि तेरी,
 करतूति रही अद्भुत रस ओध है ।
 पानी में जहाज रहे लाज के जहाज,
 महाराज सिवराज तेरे पानिप पयोध है ॥ २२ ॥

[सवैया]

अवरंग सा इक ओर सजे इक ओर सिवा नृप खेलन घारे ।
 'भूषन' दक्खिन दिल्ली देस किये दुहुँ ठीक ठिकान मिनारे ॥

साह सिपाह खुमानहि के खग लोग घटान समान निहारे ।
 आलमगीर के मीर वजीर फिरें चहुगान-वटान से मारे ॥ २३ ॥
 श्रीसिवराज धरापति के यहि भौति पराक्रम होवत भारी ।
 दंड लिये भुवमंडल के नहिं कौऊ अदंड बच्यो कृतधारी ॥
 बैठि सुदन्किन 'भूपन' दच्छ खुमान सबे हिन्दुवान उँजारी ।
 दिल्ली तें गाजत आवत ताजि ये पीटत आपको पंज हजारी ॥ २४ ॥
 यों पहिले उमराव लरे रन जेर किये * जसवन्त अजूबा ।
 साइत खाँ अरु † दाउद खाँ पुनि हारि दिलेर ‡ महम्मद डूबा ॥
 'भूपन' देखे बहादुर खाँ फिर होय महाबत खाँ अति ऊबा ।
 सूखत जानि शिवाजी के तेज सों पान से फेरत नौरंग सूबा ॥ २५ ॥

[छप्पय]

तहवरखान हराय एँड़ अनवर की जँग हरि ।
 सुतरुदीन बहलोत गये अबदुल समद मुरि ॥
 पहमद को मद मेदि सैद अफगनहि जेर किय ।
 अति प्रचंड भुजदंड बलन काहिनै दंड दिय ॥
 'भूपन' बुँदेल कृतमाल डर, रंग तज्यो अवरंग तजि ।
 मुक्के निशान तजि समर सों मक्के तक्कि तुरुक भजि ॥ २६ ॥
 सैयद मुगल पठान सेख चन्द्रावत भच्छन ।
 सोमसुर द्वे वंस राव राना रन रच्छन ॥
 इमि 'भूपन' अवरंग और पदिल दल जंगी ।
 कुल करनाटक कोट भोट कुल हवस फिरंगी ॥
 चहुँ ओर वैर महि मेरु लगि साहितजै साहस भलक ।
 फिर एक ओर शिवराज नृप एक ओर सारी खलक ॥ २७ ॥

* पाठा०—कै पहिले उमराव अशीरुफ फेर कियो ।

† फेरि कुतुब खाँ । ‡ दलेज ।

[कवित्त मनहरण]

सारस से सूबा करवानक से साहजादे,
 मोर से मुगल मीर धीर ही धर्चें नहीं ।
 बगुला से बंगस बलूचिया बतक ऐसे,
 काबुली कुलंग याते रन में रचें नहीं ॥
 'भूषन' जू खेलत सितारे में सिकार संभा,
 सिंघा को सुवन जाते दुधन सँचें नहीं ।
 बाजी सब बाज से चपेटें चंगु चहूँ आर,
 तीतर तुलुक दिल्ली भीतर बचें नहीं ॥ २८ ॥

साहू जी की साहिबी दिखात कछू होनहार,
 जाके रजपूत भरे जोम बमकत हैं ।
 भारे भारे नद्य धारे भागे घर तारे दै दै,
 बाजे ज्यों नगारे घनघोर धमकत हैं ॥
 व्याकुल पठानी मुगलानी अकुलानी फिरें,
 'भूषन' भनत माँग मोती दमकत हैं ।
 दख्खिन के आमिल भो सामिलही चहूँ आर,
 चम्बल के आर पार नेजा चमकत हैं ॥ २९ ॥

बलख बुखारे मुलतान लों हहर पारे,
 काबुल पुकारै कोऊ धरत न सार है ।
 रुम रुँदि डारै खुरासान खूँदि मारे खाक,
 खादर लों झारै ऐसी साहू की बहार है ॥
 सक्खर लों भक्खर लों मक्खर लों चले जात,
 टक्कर लेवैया कोऊ धार है न पार है ।
 'भूषन' सिरोंज लों परावने परत फेरि,
 दिल्ली पर परति परिन्दन की छार है ॥ ३० ॥

[दोहा]

रेषा तें इत देत नहिं, पथिक म्लेच्छ निवास ।
कहत लोग इन पुरनि में है सरजा को वास ॥ ३१ ॥

[कवित्त मनहरण]

वाजी बम्बा चढ़ो साजि बाजि जब कलां भूप,
गाजी महाराज राजी 'भूपन' बखानते ।
चंडी की सहाय महि मंडी तेजताई पेंड,
छंडी राय राजा जिन दंडी औनि आनते ॥
मन्दीभूत रविरज वन्दीभूत हठ धर,
नन्दी भूतपति भो अनंदी अनुमान ते ।
रङ्गीभूत दुवन करङ्गीभूत दिगदंती,
पंकीभूत समुद्र सुलंकी के पयान ते ॥ ३२ ॥
रहत अक्क पै मिटै न थक पीवन की,
निपट जुनांगी डर काहू के डरै नहीं ।
भोजन बनावै नित चोखे खानखानन के,
सोनित पचावै तऊ उदर भरै नहीं ॥
उगिलत आसौ तऊ मुकल समर बीच,
राजे राव बुद्ध कर विमुख परै नहीं ।
तेग या तिहारी मतधारी है अक्क तौलों,
जौलों गजराजन की गजक करै नहीं ॥ ३३ ॥
जा दिन चढ़त दल साजि अवभूतसिंह,
तादिन दिगन्त लौं दुवन दाटियतु है ।
प्रलै कैसे धाराधर धमकै नगारा धूरि,
धारा ते समुद्रन की धारा पाटियतु है ॥

(३३) इस में 'भूषण' उपनाम नहीं आया है तथा याज्ञिक महाशय
इसे लाल कलानिधि कृत लिखते हैं । यह छंद संदिग्ध अवश्य है ।

‘भूषन’ भनत भुवगोल को कहर तहाँ,
 हहरत तगा जिमि गज कारियतु है ।
 काँच से कचरि जात सेस के असेस फन,
 कमठ की पीठि पै पिठी सी बाँटियतु है ॥ ३४ ॥

मेचक कवच साजि बाहन बयारि बाजि,
 गाढ़े दल गाजि रहे दीरघ वदन के ।
 ‘भूषन’ भनत समसेर सोइ दामिनी है,
 हेतु नर कामिनी के मान के कदन के ॥
 पैदरि बलाका धुरवान के पताका गहे,
 घेरियत चहुँ ओर सूते ही सदन के ।
 ना करु निरादर पिया सेां मिलु सादर ये,
 आये वीर वादर बहादर मदन के ॥ ३५ ॥

उलदत मद अनुमद ज्यों जलधि जल बल हद,
 भीम कद काहू के न आह के ।
 प्रबल प्रचंड गंड मंडित मधुप वृन्द,
 बिन्ध्य से बिलन्द सिन्धु सात हू के थाह के ॥
 ‘भूषन’ भनत भूल भूपति भूपान भुकि,
 भूमत भुलत भहरात रथ डाह के ॥
 मेघ से घमंडित मजेजदार तेजपुंज,
 गुंजरत कुंजर कुमाऊ नरनाह के ॥ ३६ ॥

किबले की ठौर बाप बादसाह साहजहाँ,
 ताको कैद कियो मानो मक्के आगि लाई है ।
 बड़ा भाई दारा वाको पकरि कै कैद कियो,
 मेहर हू नहिँ माँ को जाये सगे भाई है ॥
 बंधु तौ मुराद बक्स बादि चूक करिबे को,
 बीच दै कुरान खुदा की कसम खाई है ।

'भूषण' सुकवि कहै सुनौ नवरंगजेव,
 ऐते काम कीन्हे फेरि पातसाही पाई है ॥ ३७ ॥
 हाथ तसबीह लिपि प्रात उठै बन्दगी को,
 आप ही कपट रूप कपट सु जप के ।
 आगरे में जाय दारा चौक में चुनाय लीन्हों,
 कृत्र हूँ छिनायो मानो मरे बूढ़े बप के ॥
 कीन्हों है सगेत घात सोमैं नहीं कहों फेरि,
 पील पै तोरायो चार चुगुल के गपके ।
 'भूषण' भनत छरछंदी मतिमंद महा,
 सौ सौ चूहेखाय कै बिलारी बैठी तप के ॥ ३८ ॥
 जुद्ध को चढ़त दल बुद्ध को जसत तब,
 लंक लौं अतंकन के पतरें पतारे से ।
 'भूषण' भनत भारे घूमत गयंद कारे,
 बाजत नगारे जात अरि उर छारे से ॥
 घसिकै धरा के गाढ़े काल के कड़ाके डाढ़े,
 आषत तरारे दिगपालन तमारे से ।
 फेन से फनीस-फन फूटि विष कूटि जात,
 उद्धरि उद्धरि सिंह पुरवै सुआरे से ॥ ३९ ॥
 अकबर पायो भगवन्त के तनै सों मान,
 बहुरि * जगतसिंह महा मरदाने सों ।
 'भूषण' त्यों पायो जहाँगीर महासिंह जू सों,
 साहिजहाँ पायो जयसिंह जग जाने † सों ॥
 अब अवरंगजेव पायो रामसिंह जू सों और,
 दिन दिन पैहै कूरम के माने सों ।

* पाठा०—तनय जू सों बहुर्यो ।

† बर बान ।

केते राजा राय मान पावैं पातसाहन सों,
 पावैं पातसाह मान मान के घराने सों ॥ ४० ॥
 डंका के दिये ते दल डम्बर उमंज्यो,
 उडमंज्यो उडमंडल लौं खुर की गरद है ।
 जहाँ दारासाह बहादुर के चढ़त पैड़,
 पैड़ में मड़त मारु राग बम्ब नद है ॥
 'भूषन' भनत घने घुम्मत हरौल वारे,
 किम्मत अमोल बहु हिम्मत दुरद है ॥
 हदन कृपद महि मद फरनद होत,
 कदन भनद से जलद हलदद है ॥ ४१ ॥
 भले भाई भासमान भासमान भान जाको,
 भानत भिखारिन के भूरि भय जाल है ।
 भोगन को भोगी भोगि-राज कैसी भाँति भुजा,
 भारि भूमिभार के उभारन को ख्याल है ॥
 भावतो समानि भूमि-भामिनी को भरतार,
 'भूषन' भरतखंड भरत भुपाल है ।
 विभौ को भंडार औ भलाई का भवन भासे,
 भाग भरे भाल जयसिंह भुषपाल है ॥ ४२ ॥
 पौरव नरेस अमरेस जू के अनिरुद्ध,
 तेरे जस सुने ते सुहात सौन सीतलें ।
 चंदन सी चांदनी सी चादरें सी चहूँ दिसि,
 पथ पर फैलती है परम पुनीत लें ॥
 'भूषन' बखानी कबि मुखन प्रमानी सोता,
 बानी जू के बाहन हरख हंस हीतलें ।
 सरद के घन की घटान सी घमंडती हैं,
 मेंहू ते उमंडती हैं मंडती महीतलें ॥ ४३ ॥

कौकनद-नैनी केलि करी प्रानपति संग,
 उठी परजंक ते अंगन जोति सोकी सी ।
 'भूषण' सकल दलमलि हलचल भये,
 बिन्दु लाल भाल फैल्यो कान्ति रवि रोकी सी ॥
 कूटि रही गोरे गाल ढाल पै अलक आङ्गी,
 कुसुम गुलाब के ज्यों लीक अलि दो की सी ।
 मोती सीसफूल ते विथुरि फैलि रह्यो मानो,
 चन्द्रमा ते कूटी है नक्षत्रन की चौकी सी ॥ ४४ ॥
 देखत ही जीवन बिडारौ तो तिहारौ जान्यो,
 जीवनद नाम कहिये ही को कहानी में ॥
 कैधौ घनश्याम जो कहावैं सो सनावैं मोहि,
 निहचै कै आजु यह बात उर आनी में ॥
 'भूषण' सुकवि कीजै कौन पर रोखु निज,
 भागि ही को दोखु आगि उठलि ज्यों पानी में ।
 राखरे हू आये हाय हाय मेघराय मब,
 धरती जुड़ानी पै न बरती जुड़ानी में ॥ ४५ ॥
 मलय समीर परलै को जो करत अति जम की,
 दिसा ते आयो जम ही को गोतु है ।
 साँपन को साथी न्याय चन्दन कूयो तो डसै,
 सदा सहवासी विष गुन को उदोतु है ॥
 सिंधु को सपूत कलपद्रुम को बंधु दीनबंधु,
 को है लोचन सुधा को तनुसेतु है ।
 'भूषण' भनै रे भुव-भूषण द्विजेस तैं,
 कलानिधि कहाय कै कसाइ कत होतु है ॥ ४६ ॥
 बन उपवन फूले अंबानि के भौर भूले,
 अवसि लुहात सोभा और सरसाई है ।

अलि मदमत्त भये केतकी बसंती फूली,
 'भूषन' बखाने सोभा सबै सुखदाई है ॥
 विषम विडारिवे को बहत समीर मंद,
 कोकिला की कूक कान कानन सुनाई है ।
 इतनो सँदेसो है जू पथिक तिहारे हाथ,
 कहो जाय कन्त सेों वसन्त ऋतु आई है ॥ ४७ ॥
 जिन किरनन मेरो अंग छुयो तिनहीं सेों,
 पिया अंग छुवै क्यों न मैं दुख दाहे को ।
 'भूषन' भनत तूतो जगत को भूषन है,
 हौं कहा सराहौं ऐसे जगत सराहे को ॥
 चंद ऐसी चाँदनी तू प्यारे पै बरसि उतै,
 रहि न सकै मिलाप होय चित चाहे को ।
 तूतो निसाकरै सब ही की निसा करै,
 मेरी जो न निसा करै तो तू निसाकर काहे को ॥ ४८ ॥
 कारो जल जमुना को काल से लगत आली,
 झाड़ रह्यो मानो यह विष कालीनाग को ।
 बैरिन भई है कारी कोयल निगोड़ी यह,
 तेसो ही भँवर कारो बसि बन बाग को ॥
 'भूषन' भनत कारे कान्ह को बियोग हियै,
 सबै दुखदाई जो करैया अनुराग को ।
 कारौ घन घेरि घेरि मार्यो अब चाहत है,
 एते पर करति भरोसो कारे काग को ॥ ४९ ॥

[सवैया]

सौँधे भरी सुखमा सु खरी मुख ऊपर आइ रही अलकैं ।
 कवि 'भूषन' अंग नवीन विराजत मोतिन माल हियै भलकैं ॥
 उन दोउन की मनसा मनमी नित होत नई ललना ललकैं ।
 भरि भाजन बाहिर जात मनौ मुसुकानि कियौं छबि की छलकैं ॥ ५० ॥

[कवित्त मनहरण]

नैन जुग नैनन सो प्रथमै लड़े हैं धाय,
 अधर कपोल तेऊ टरे नाहिं टरे हैं ।
 अड़ि अड़ि पिलि पिलि लड़े हैं उराज बीर,
 देखो लगे सीसन पै घाव ये घनेरे हैं ॥
 पिय को चखायो स्वाद कैसो रति संगर को,
 भये अंग अंगनि ते केते मुठभेरे हैं ।
 पाछे परे बारन कौ बांधि कहै आलिन सो,
 'भूषन' सुभट ये ही पाछे परे मेरे हैं ॥ ५१ ॥
 सुने हूजै बेसुख सुने बिन रखा न जाय,
 याही ते बिकल सी बिताती दिन राती हैं ।
 'भूषन' सुकवि देखि बावरी विचार काज,
 भूलिवै के मिस सास नन्द अनखाती हैं ॥
 सोई गति जानै जाके भिदी होय कानै सखि,
 जेती कहैं तानै लेती छेदि छेदि जाती हैं ।
 हूक पांसुरी मैं क्यों भरौ न आंसुरी मैं,
 थोरे छेद बांसुरी मैं, घने छेद किये छाती हैं ॥ ५२ ॥
 सत युग द्वापर औ त्रेता कलियुग मधि,
 आदि भयो नाहीं भूप तिनहुँ ते आ घरी ।
 अकबर बब्बर हुमायूँ साह सासन सों,
 स्नेह ते सुधारी हेम हीरन तें सगरी ॥
 'भूषन' मनत पेसी मुगलानी चहुँथ दीनी,
 दैरि दैरि पौरि पौरि लूट ली चहुँ फिरी ।
 धूरि तन लाइ बैठि सूरत है रैन दिन,
 सूरत को मोरि बदसूरत सिवा करी ॥ ५३ ॥
 सिंहल के सिंह सम रन सरजा की हाँक,
 सुनि चौक चलत बंधाइ पाट सादा के ।

'भूपन' भनत भुवपाल दुरे द्राविड़ को,
 ऐल फैल गैल गैल भूले उनमादा के ॥
 उक़लि उक़लि ऊँचे सिंह गिरे लंक माहि,
 बूड़ गये महल विभीषन के दादा के ।
 महि हाले मेरु हाले अलका कुबेर हाले,
 जा दिन नगारे बाजे सिव साहजादा के ॥ ५४ ॥
 पक्खर प्रबल दल भक्खर सों दौर करि,
 आय साह जी को नंद बाँधी तेग बाँकरी ।
 सहर भोलायो मारि गरद मिलायो गढ़,
 अजहूँ न आगे पाछे भूप किन ना करी ॥
 हीरा मनि मानिक की लाख पोटा लादि गयो,
 मजीद ढहायो जो पै काढ़ि मूल काँकरी ।
 आलम पुकार करे आलम पनाह जू पै,
 होरी सी जराय सिवा सूरत फना करी ॥ ५५ ॥
 दिल्ली के हरोल भारी सुभट अडोल गाल,
 चालिस हजार ले पठान धायो तुरकी ।
 'भूपन' भनत जाकी दौर ही को सार मच्यो,
 एदिल की सीमा पर फौज आन दुरकी ॥
 भयो है उचाट करनाट नरनाहन की,
 काँपि उठी क़ाती गोलकुंडा ही के भुर की ।
 साहि के सपूत सिधराज बीर तेने तब,
 बाहुबल राखी पातसाही बीजापुर की ॥ ५६ ॥
 घिरे रहे घाट और बाट सब घिरे रहे,
 बरस दिना की गैल छिन माहि छूँवै गयो ।
 ठौर ठौर चौकी ठाढ़ी रही सब स्वारन की,
 मीर उमरावन के बीच है चलो गयो ॥

देखे में न आये ऐसे कौन जाने कैसे गया,
 दिल्ली कर मीड़े कर भारत किते गया ।
 सारी पातसाही के सिपाही सेवा सेवा करें,
 पर्यो रह्यो पलंग परेवा सेवा ह्वे गया ॥ १७ ॥

बाजे बाजे राजे से निवाजे हैं निजर करी,
 बाजे बाजे राजे काटि काटे असिमत्ता सों ।
 बाँके बाँके सूबा नालबंदी दे सलाह करें,
 बाँके बाँके सूबा करें एक एक लत्ता सों ॥

गाढ़े गाढ़े गढ़पति झाँड़े रामद्वार दे दे गाढ़े,
 गाढ़े गढ़पति आने तरे कत्ता सों ।
 बाजीराव गाजी ते उबार्यो आइ झुमाल,
 आमिल बिठाये बल करि कै चकत्ता सों ॥ १८ ॥

भेंदि सुरजन तोहि भेंदि गुरजन-लाज पंथ,
 परिजन की न त्रास जिय जानी है ।
 नेह ही को तात गुन जीवन सकल गात,
 भादौ-तम-पुंजन निकुंजन सकानी है ॥

साधन को रैन कवि 'भूपन' भयावनी में,
 भावत सुरति तेरी सकह न मानी है ।
 आज राखे की यहाँ बातें चलिये की मीत,
 मेरे जान कुलिश घटा मी घहगानी है ॥ १९ ॥

[सवैया]

मेरु को सोनो कुबेर की संपति उयों न घटै विधि राति अमा की ।
 नीरधि नीर कहै कवि 'भूपन' क्षीरधि क्षीर झमा है झमा की ॥
 रीति महेस उमा की महा रस रीति निरंतर राम रमा की ।
 एन चलाए चलें कम छोड़ि कठोर क्रिया औ तिया अधमा की ॥ २० ॥

परिशिष्ट (क)

टिप्पणी

शिवराजभूषण

- १—भव पथ—संसार रूपी मार्ग, भवसागर । करन—कर्ण, कान । विजना—पंखा । कोकनद—कमल । इह लोक—मृत्यु-लोक, संसार । द्विरद-मुख—गणेश जी ।
- २—जयंति—पार्वती जी । आदि-सक्ति—(आदि शक्ति) परमेश्वरी । कपर्दिनि—महादेव जी की स्त्री । चमुंड—(चामुंडा) पार्वती का एक नाम । दुर्गा जी ने मधुकैटभ, महिषासुर, चंड, मुण्ड, भंडासुर, रक्तबीज, बिड्डाल, निशुंभ, शुंभ आदि दैत्यों को मारा था, इससे उनकी स्तुति में इन दैत्यों के साथ विनाशिनि—वाचक शब्द लगाकर कहते हैं ।
- ३—तरनि—सूर्य, नाव । ओक—गृह, स्थान । कोक—चक्रवाक । कोकनद—कमल । आलोक—प्रकाश । कवि ने सूर्य की स्तुति करके तब उसके वंश का वर्णन आरंभ किया है ।
- ४—दिनराज—सूर्य । अवतंस—भूषण, श्रेष्ठ । कंसमथन—श्रीकृष्ण । प्रभु-अंस—परब्रह्म के अवतार श्रीकृष्ण जी यदुवंशी थे, जो चंद्रवंश की एक शाखा है । इस कारण ज्ञात होता है कि कवि ने श्रीकृष्ण जी को परब्रह्म स्वरूप माना है और उन्हीं का अंश लेकर इस सूर्यवंश में अनेक अवतार होने का उल्लेख किया है । इसलिए कंसमथन प्रभु शब्द का विशेषण हो कर आया है अर्थात् कंस को मारने वाले परब्रह्म परमेश्वर ।

५—सीसौदिया—सीसोंद ग्राम के निवासी होने के कारण सीसौदिया कहलाए। कवि महाराज ने सीसौ+दिया अर्थ लगाया। एक भाट ने लिख मारा है कि एक महाराणा को उनके अनजान में दवा रूप में वैद्य जी ने मदिरा दे दिया, जिसे जान कर उन्होंने गला हुआ सीसा पी लिया इससे सिसौदिया कहलाए।

६—बगवत—(बख्त) भाग्य, किस्मत। बलंद—ऊँचा, अच्छा।

७—किरवान—दूपाण, तलवार। अंबु—जल। निजाम साहि—अहमदनगर के निजाम शाही सुलतान।

८—सरजा—(फा० सर+जाह) सदरिमर्तबः, बड़े रतने वाला, प्रतिष्ठित। रन+भू+सिला—युद्ध स्थल में चट्टान से दूढ़।

१०—बिरौंच की तिया—सरस्वती जी। क्रिया—तुच्छ। तकिया—आश्रय, सहारा।

१२—अहमेव—अहंता, गर्व।

१३—भुसिल-भूप—शिवा जी भोंसला। करन-प्रवाह—हाथियों की सेना।

१४—सहार—सहारा, आश्रय। सिव—शिवजी, शिवाजी।

१५—साहि—शाह जी। जंपत—कहता है।

१६—उत्तंग—ऊँचा। मरकत—पन्ना, हरा रत्न। घन-समै—वर्षा ऋतु। पटल—परत, तह। गलगाजहीं—गरजते हैं।

१७—ऊरध—ऊपर।

१८—पुहुपराग—पुष्पराग, पुखराज। फटिक—स्फटिक, बिलौर।

२०—लवली—हरफारेवरी फल। यलानि—इलायची।

२१—करबीर—कनेर। दाख—द्राक्षा, भुनका। दाड़िम—अनार।

तूत—शहतूत। जंभीर—बड़ा निबुआ। कदंब—एक फल।

समूह—गुच्छ। हिताल—जंगली खजूर। ताल—ताड़,

खजूर। तमाल—आवनूस। रसाल—आम, रस भरे।

- २२—पुष्पाग—सुलतानी चंपा, सफेद कमल । बकुल—सुगंधि पुष्प । पाटल—कुंभी फूल, यह लाल और सफेद दो प्रकार का होता है ।
- २३—लघनित—लाघवयुत, सुन्दर । महारि—ग्वालिन नामक पक्षी । चटुल—चंचल, सुन्दर । मकरंद—पराग । घन—तीव्र ।
- २६—तरनि-तनूजा—सूर्य-तनया, यमुना ।
- २६—भूषननि—अलंकारों ।
- ३३—सरवरि—समानता, सादृश्य ।
- ३४—चक्रता—मुगल सम्राटों के वंश का एक नाम चक्रताई भी था । कुमिस—झूठे बहाने । गैर मिसिल—जो बराबर के न थे । दाबदार—प्रतापी, रोबदार । दीह—दीर्घ, बड़ा । दल-राय—सेनापति । गद्दार—भाले घाले जो हाथियों को बिगड़ने पर उसे भाले दिखाकर आगे बढ़ाते हैं । अड़दार—अड़ने वाला, मस्त ।
- ३५—बिगोय—नष्ट कर । कौनि—पृथ्वी, भूमि । भारथ—महा-भारत युद्ध ।
- ३७—अमीत—शत्रु । मुधा—व्यर्थ । बंदन—पूजा, प्रतिष्ठा ।
- ३८—जापता—(अ० ज्ञातः) नियम, अदब । मिनके—एक दम चुप रहे । तुजुक—(तु०) नियम, क़ानून ।
- ३९—सकस—(फा० शख्स) आदमी, मनुष्य ।
- ४१—प्रेम—प्रिय, प्यारा ।
- ४२—करारी—तेज़, अधिक । सौध—सफेद महल । बगारी—फैलाई ।
- ४३—वर्ग्य—उपमेय ।
- ४४—तूल—तुल्य, समान ।
- ४५—अवर्ग्य—उपमान ।

४८—नाग—सर्प, हाथी । अबस—(अ०) व्यर्थ । भोर ठहरात न—
तुषार कण, आंस, जो सूर्य निकलते ही नष्ट हो जाती है ।
बहरात—बलकर नष्ट हो जाता है । टंक—तीन मासे की
एक छोटी तौल ।

५०—कैलासधर—महादेव जी ।

५१—कहाऽब—कहा + अब ।

५२—जोऽब—जो + अब । ध्रुव—निश्चय, अवश्य । धू—ध्रुव नक्षत्र ।
सुर-रुख—कल्पवृक्ष । देव-गऊ—कामधेनु । दिगदंति—दिक्-
पाल हाथी । कुंडलि—साँप, शेषनाग ।

५४—निकट—समूह । दिनकर—चंद्रमा । आकर—घर, खान ।
रत्नाकर—समुद्र ।

५६—जंभ—महिषासुर का पिता । बारिषाह—बादल । दंड—
पाँक्ति, समूह । बितुंड—हाथी ।

५६—रेल—रेला, प्रवाह । जोन्ह—चाँदनी । कुहू—अभावस्था ।

६१—उद्ध—ऊपर । उर्मि—ऊर्मि, तरंग । बादबान—(फ़ा०) जहाज़
का पाल ।

६२—नवरंगसाहि—औरंगज़ेब बादशाह । एदिल—बीजापुर का
आदिल शाही सुलतान । कुतुब्ब—गोलकुंडे का कुतुबशाही
सुलतान ।

६३—थरि—स्थली, जगह । भठी—पैठना, घुसना । मदगल—मस्त,
मत्त । ता बिगिर—उसके बिना ।

६५—बिगिर—बगैर, बिना । सहससीस—शेषनाग । सहसद्वग—
इंद्र । सहसकर—सूर्य, सहस्ररश्मि ।

६६—फैल—बहुत, आधिक्य । ऐल—बाढ़, बहुतायत ।

६८—दारिद-दौ—गरीबी की आग । करि-बारिद—हाथी दान
रूपी बादल ।

६९—घुग्घू—उल्लू । तापी—तपाया ।

७१—नरसिंह—नृसिंह जी, नर रूपी सिंह ।

७२—करन—कर्ण । करन जीत—कर्ण को जीतने वाला, अर्जुन ।
कमनैत—धनुर्धर । धरेस—पर्वत । धराधर—पृथ्वी को धारण करने वाला । कहरी—(फा०—कहरी) आफत ढाने वाला । बहरी—समुद्री । अहमद नगर के निजाम शाही सुलतान बहरी कहलाते थे । बहरी निजाम के जितेया—औरंगजेब । देव—(फा०) असुर ।

७३—हमाल—(अ०—हम्माल) बाँझ उठाने वाला । अमाल—(अ०—ग्रामिल) अफसर, हाकिम । दंडक—शासक ।

७४—इस पद में शिवाजी को भूषण विष्णु का अवतार बतलाते हुए कहते हैं कि अन्य ब्राह्मणों पर वह सुदामा जी की तरह दया करते हैं, पर हमें देखकर भृगु की सुधि करते हैं अर्थात् क्रुद्ध होते हैं । भृगु ने विष्णु को लात मारा था ।

७७—सोपै—शोक करके, दुख से ।

७९—गुसुलखाने—(अ० गुसुलखानः) स्नानघर । त्योर—त्योरी, कुद्ध आँखें । रस खोट—अनरस, वैमनस्य । अगोट—रोक, आड़ । रेवा—नर्मदा नदी ।

८०—दुराय—झिपाकर । आरोपिण—आरोपण कीजिए, कहिए ।

८१—फिरंगै—फिरंगी अर्थात् यूरोपीय शस्त्र । वैरष—भंडा, निशान । धुरवा—बादल, मेघ । दराज़—(फा०) बड़ा, भारी । गज-घटनि-सनाह—हाथियों के झुंड के लोहे के झूल ।

८३—भुज-भुजगेस-भुजंगिनी—हाथ रूपी सर्प की नागिन है ।

८४—करवाल—तलवार । चंड—शरीर, कबंध । बार—देर । भरतार—भर्ता, पति, स्वामी । भूतनाथ—महादेव जी जो मुंडमाला पहिरते हैं ।

८५—गोय—झिपाकर । रोपि—आरोप कर ।

- ८६—काल—मृत्यु, भोजन, खा जाना ।
 ८७—दिगनाग—दिशाओं के रक्षक हाथी । अमल—अधिकार ।
 धरातल—पृथ्वी ।
 ८८—वात—आँठ, रक्षा । जञ्ज—यज्ञ, कुबेर के सैनिक ।
 ९०—आलमगीर—आौरंगजेब की एक पदवी । करौलनि—
 (फा० करावल) पीछे के सैनिक गण ।
 ९१—छेक—अयथार्थ, झूठा । अवदात—अच्छा, विमल ।
 ९२—तिमिर-बंस-हर—अंधकार हरण करने वाला, तैमूरवंश को
 हराने वाला । अरुन-कर—लाल किरणों वाला, सुर्ख रू ।
 सूरज-कुल-सिरमौर—सूर्यवंश के मुकुट, श्रेष्ठ सूर्य ।
 ९३—दुरगहि—दुर्ग को, दृढ़ता से पकड़ कर, दुर्गा जी के ।
 ९४—चक्रता—आौरंगजेब ।
 ९५—कैतव—बहाना, झूठ । सति—सत्य, सच्चा ।
 ९६—धर—धड़, शरीर ।
 ९६—भयारो—भयानक, डरावना । बीछू—एक प्रकार का छूरा ।
 अरिंद—भारी शत्रु । मयंद—शेर ।
 १००—निसाँक—निशंक, निडर । राठिवर—राष्ट्रवर, राठौर ।
 १०१—दुरजन-दार—दुष्टों की स्त्री, शत्रु स्त्री । नाहन—स्वामियों,
 पतियों । कलिंद—कलिंद पर्वत जो यमुना का उद्गम है ।
 १०३—अमाल—शासक । गढ़ेई—गढ़पति, किलेदार । रिसाल—
 (फा० रिसालः, इर्साल) सेना, खिराज ।
 १०४—अचल—पर्वत । पाग—पगड़ी, पहवाड़ों पर दुर्ग रूपी पाग ।
 १०७—उदरत—गिरती है । घास—दिन । निकेत—घर ।
 माधली—जाति विशेष ।
 ११०—वासव—इन्द्र । मसनंद—राजाओं की गद्दी । कनकलता—
 सोने का कमल दंड ।

- ११२—जुमिला—(फा० जुमलः) और सब । कुही—छोटा पत्नी ।
 दुँडार—आमेर राज्य । भारखंड—उड़ीसा । बांधौधनी—
 रीवाँ के राजा । ताकत—देखते हैं । पनाह—(फा०)
 शरण । जैनवार—विजय करने वाला । न्यारी—निराली ।
- ११३—अक्रम—क्रम हीन, बे सिलसिले ।
- ११४—उद्धत—प्रचंड, तीव्र । पारावार—समुद्र । रँगरेजे—रंगे
 हुए रेजे अर्थात् धूल कण । रज-पुज—धूल की ढेर ।
 परन—शत्रु । अर्थात् सवारों के धावे से तथा शत्रु के
 भागने से उठे धूल साथ ही उड़ रहे हैं । कसीसैं—(फा०
 कशिर्से) खींचना ।
- ११७—बिलायत—मुसलमानों का बिलायत फारस, रुम आदि ।
 दलति—कूटती पीटती हैं । चमू—सेना ।
- ११६—मंगन—भीख माँगने वाला । डारि—फेंक कर । दीह—
 भारी ।
- १२०—रस—जल । सुफल—इच्छा पूर्ण होती है । फूल—प्रसन्नता ।
- १२३—बसुधा—भूमि । प्रममान—युद्ध । जगती—भूमि । धृति—
 धैर्य, धीरज । मीरन—मीरों अर्थात् सैयदों । पीर—पीड़ा,
 पितर ।
- १२५—चढ़त—सवार होना, चढ़ना, घुसना, मिलना, ऊपर जाना ।
 जोट—झुंड । व्यामयान चढ़ना—बिमान पर बैठ कर
 स्वर्ग जाना । बदरंग—स्याही ।
- १२८—गुनन—गुणों, रस्सी । पाय—पैर, पाकर । गहि—छूकर,
 पकड़ कर । रस—प्रसन्नता, स्नेह । रांस—क्रोध । दोहाई—
 दोहा हा, शरण आना ।
- १३०—जामिनी—यामिनि, रात्रि । दामिनि—विजली । पावस—
 वर्षा ऋतु । सूरति—रूपरंग । नलिनी—कमलिनी । पूषन—
 सूर्य ।

- १३३—चंका—अच्छी तरह । दरीन—गुफाएँ । नंका—नाँघ गए ।
साहि—शाह, शिवाजी के पिता शाह जी । धंका—धक्का ।
- १३४—रैयति—प्रजा । पेस—भेंट । राना—उदयपुर के महाराणा ।
बाना—हठ । हाड़ा, राठौर, कड़वाहा तथा गौड़—राज-
पूतों की ये कई शाखाएँ हैं । क्रमशः बुँदी, जोधपुर और
जयपुर में इन जातियों के राजा थे । गौड़ जाति को
औरंगज़ेब के समय में बादशाही राज्य में जागीर मिली
थी । चमाऊ—चँवर । पेंडू—अभिमान ।
- १३६—मद-जल-धरन—मत्त होने से जिसे मद चू रहा हो ।
पुदुमि—पृथ्वी । खरग धरन—समाज—तलवार धारण
करने की शोभा वही है जहाँ समाज के रक्षा की रुचि
है । पेंड धरन—अभिमान रखना ।
- १३८—हथिमथ—हाथों का माथा । घालै—करे ।
- १३९—जिस प्रकार निराकार को ज्ञानी और साकार को गुणी
लोग चाहते हैं उसी प्रकार वीर शिवाजी निर्गुणी और
गुणी दोनों ही पर दया करते हैं ।
- १४०—तुरी—घोड़ा । करी—हाथी । निहाल—प्रसन्न, संतुष्ट ।
- १४२—कोल—बाराह । होवे—होने को ।
- १४३—मारतंड—सूर्य । कीरति—जानी में—शिवाजी के यश
के साथ उनका प्रताप वैसे ही जान पड़ता है जैसे सूर्य
के तेज में चाँदनी चमकती है अर्थात् सूर्य के प्रखर ताप
रूपी प्रताप में कोमल चाँदनी रूपी कीर्ति भी मौजूद है ।
भाग फिरना—भाग्य का उदय या अवनति होना ।
- १४५—खयाल—साधारण काम । जंजाल—झंझट ।
- १४७—इन्द्र से समता दिखलाने हुए शिवाजी को बढ़ाकर कहा
गया है । वह—इंद्र । एक अरि—वृत्रासुर । यह—शिवाजी ।
विहंडि—नष्ट कर । पानिप—जल, शोभा । यकई—एक ही ।

गयंद—पेरावत हाथी । तुरंग—उच्चैःश्रवा घोड़ा ।
सरवरि—बराबरी ।

१४८—दुर्योधन से दूना कुटिल औरंग कृत मे संसार को फँसाए
हुए है । धर्म—युधिष्ठिर, सत्यता । पैज—पौरुष । लाख—
लाक्षा, लक्ष ।

१५०—हुतास—प्रसन्नता, खुशी । आमखास—बादशाही दर-
बार । हरम—जनाना महल । रुचि—इच्छा, रंग ।

१५२—अगड़—अकड़, अभिमान । गुमान—घमंड ।

१५३—विभूषण—भूषण, शोभा । सभाजित—सभा जीतने वाला ।

१५४—विवेक—सत् असत् का ज्ञान । लाज के जहाज—
शीलवान शिवाजी । अपजस काज—कुकीर्ति युत काम ।
गरीब नेवाज—दीनों को पालने वाले । आज—उदंड
प्रताप । घनी—भारी, अधिक ।

१५५—करी—किया । धरवी—धरेगी । कुतुब—कुतुब शाह, ध्रुव
नक्षत्र की ओर अर्थात् उत्तर बतलाने वाला यंत्र । धुर—
अक्ष, धुरा, प्रधान स्थान । सिंह—सिंहगढ़ । साहिबी—
आधिपत्य, बादशाही । दिलीसुर—दिलीश्वर । सलाह—
मेल । मुरकी—बिगड़ी ।

१५६—पील—(फा०) हाथी । यहाँ औरंगजेब से तात्पर्य है ।
थान—जगह । सरजा—सिंह, शिवाजी ।

१५८—द्विजराज—चन्द्रमा, ब्राह्मण । कला—किरण, गुण । शिव—
महादेव जी, शिवाजी । दोहे से चन्द्रमा का वर्णन ज्ञात
होता है पर वह 'भूषण' कवि पर भी घटता है ।

१५९—विधनेल—विदनेर । केली—क्रीडास्थल । विरुद—यश,
कीर्ति । गोर—गौड़ । अफगानिस्तान का गोर अर्थ लेना
अशुद्ध है क्योंकि पूर्व में गौड़ और पश्चिम में गुजरात

- तक कवि का तात्पर्य है । गौड़ के हाथी भी प्रसिद्ध हैं,
गोर के नहीं । बसति—बस्ती, निवास स्थान । रद्द—नष्ट ।
- १६०—सभिप्राय—अभिप्राय युक्त, किसी अर्थ से ।
- १६१—सनुहाने—सामना करने पर । अग्र्याने—सूख । दिल
आनि—मान लो । बरजा—वर्जित, मना करना ।
ललन—पुत्र ।
- १६२—जाहिर-जहान—संसार प्रसिद्ध । पासवान—पार्श्वधर्ती,
मुसाहब । खलक—दुनिया । राय—राजा, अमीर ।
अनंग—अंग भंग, कामदेव । शिवजी तथा शिवाजी दोनों
पर अर्थ घटता है ।
- १६३—सूर—वीर, सूर्य । कुल—वंश ।
- १६४—अंधक—एक असुर जिसे महादेव जी ने मारा था ।
- १६६—सीता—श्रीजानकी जी, (सी + ता) श्री अर्थात् लक्ष्मी +
उसके । सुलच्छन—अच्छे गुण, सु + लक्षण । भरत—
भरता है, फैलाता है । नाम—यश । भाई—पसंद ।
कुल सूर—रामचन्द्र जी तथा शिवाजी दोनों ही सूर्यवंश
के थे । दासराथी—दशरथ जी के पुत्र, दास + रथी ।
लंक—कमर, लंका । तोर—तोड़ने वाला । बान रहें—
बानर हैं । सिंधु रहें—मसुद्र रहते हैं, हाथी हैं । तेग—तल-
वार । राकस—राक्षस, दुष्ट । मरद—मनुष्य, मर्दन ।
- १६७—मिहात—मिहाता है, चाहता है । निधन—निर्धन, नष्ट ।
न फल की—नहीं फली, कष्ट ही दिया । बस करनी—बस
में लाने वाली । दारी—पुंश्चली स्त्री । गनिका—वेश्या ।
श्लेष से दक्षिण की सुवेदारी को गणिका बनाया है ।
- १७१—गढ़पाल—दुर्गाध्यक्ष । मौज—इच्छा । निहाल—प्रसन्न ।
दुनी—संसार ।

- १७३—हरम—जनानामहल । हवसी—अफ्रीका की एक काली जाति । बयरनि—शत्रु स्त्रियों का । कर चिन्ह न—अर्थात् हाथों में चूड़ी पहिरने का अवसर ही नहीं पड़ा । जमनी—यवन स्त्री । मुसलमानों में सिंदूर देने की प्रथा नहीं है पर कवि ने यह भाव प्रकट किया कि मानों वे आरम्भ ही में विश्रवा हो गई थीं, इसीलिए उनके मुख चंद पर सिंदूर बिन्दु नहीं दिखता ।
- १७५—हुन्नै—हून मुहर, सोने का छोटा सिक्का जो दक्षिण में प्रचलित था । सुवरन—सुन्दर अक्षर, पद, सोना । परखि—समझ कर, गुण दोष की विवेचना कर । लाख—लाक्षा, लाह । रूखन—वृक्ष, रूखे । हाथी—गजनी, मोटा कपड़ा । तुमहियों—तुम भी ।
- १७६—बन रत—बन में ब्रूभते रहते हैं । राज—राजश्री, धूल । दरां—पहाड़ की गुफा । वेऊ—मारे गए शत्रु । अरिवर—मुख्य मुख्य शत्रु ।
- १७७—सुमेध—अच्छी मेधा वाला, बुद्धिमान ।
- १७८—भिरना—लड़ना, युद्ध करना । दरियाव—नदी । लघुता—लाघव, फुरती । सलाह—मेल ।
- १८०—मुहोम—चढ़ाई, कठिन कार्य । उजुर—उज्र, विरोध । नेक—थोड़ा । उचरते—बच जाने । घने—बहुत ।
- १८२—सेत—श्वेत, सफेद । अरुन्न—अरुण, लाल । कुमानु—आग । गरे—गल गए । पानिप—जल, मान । तिन—तृण, तिनका ।
- १८४—दक्षिन्न—दक्षिण दिशा, कई स्त्रियों में समान रूप से अनुरक्त । भुव-भामिनी—पृथ्वी रूपिणी स्त्री । अनुकूल—एक पत्नीवत । दीन—गरीब, मत ।

१८६—गारो—गाल बजाना, गर्व । कुज्वाब—देहा व्यंग्यपूर्ण उत्तर ।

१८७—अनरीके—प्रसन्न होने के पहिले ही ।

१८८—दावि करि—दमन करके । करवार—तलवार । भरैया—
फैलाने वाला । गंजाय—नाशकर ।

१९०—अखिल—सब । खल खलक—दुनिया के दुष्ट जन ।
करग्वन हैं—क्रुद्ध होते हैं । अगार—घर । दार गन—
स्त्रियाँ । बार परग्वन—देर करना । कूटे—खुलता है, खुले
हुए । कारे घन उमड़ि अंगारे—काले बादल रूपी धुएँ
से अंगारे रूपी गोली बरसते हैं ।

१९१—लोप—लोक ।

१९२—अग्नि से धुआँ निकलता है पर यहाँ धुँए से अग्नि अर्थात्
कार्य से हेतु होना दिखलाया गया है ।

१९३—पुनीत—शुद्ध, शुभ । जस काज—यश पाने योग्य कार्य ।
अचरज लपटा है—आश्चर्य होता है । कोकनद—कमल ।
इसमें हाथ रूपी कमल से संकल्प जल गिर कर नदी
बनाता है अर्थात् कार्य से हेतु होता है ।

१९४—उदार—दानशील । खुमान—शिवाजी ।

१९७—जानै—जानता था ।

१९८—जसन—(फा० जशन) महफिल, दरबार । जुलूस—(अ०)
बैठना, सिंहासन पर बैठना । गाजी—(अ० गाजी)
काफिर को मारने वाला, अन्य धर्म वालों को मारने वाला ।
तुज्जक—दरबार के नियम । लरजा—(फा० लर्जीदन-
काँपना) काँपा । इलाम—(अ० एलाम या इलहाम)
हाल कहना, जतलाना, आज्ञा । तरे—पास ।

१९९—अनत—दूसरे स्थान ।

२००—ग्रीवा—गर्दन । नै—सुकना । गनीम—(आ०) शत्रु ।

अतिबल—बलवान । खरी—अच्छी प्रकार । जराई—
जलाना । स्याही—बदनामी ।

२०१—सगौर—अच्छी प्रकार मनन कर ।

२०२—अहं—अहंता, घमंड । अभंग—कभी न दूटने वाला, सदा
बिजयी । पुरहूत—इंद्र । दंगली—दंगल मारने वाला, बहुतों
के बीच बिजय प्राप्त करने वाला । अगार—घर । राखे जंतु
जंगली—उजाड़ कर जंगल बना दिया ।

२०४—प्रवीनो—प्रवीण लोग । भीनो—भरा हुआ, लीन ।
चकता—औरंगजेब । गुसुलखाना—स्नानघर ।

२०६—गाजी—गंजन किया, जीता । डोंड़िये—नगाड़ा । दामन
गीर—दामन पकड़ने वाला, समानता करने वाला ।

२०७—लों—तक । बिगूँचे—लूटा । कूँचे—नम ।

२०६—पंज-हजारी—जिस मंसबदार के पाँच सहस्र सेना रखने
का अधिकार हो । उज्जर—वजीर, मंत्री । बेहिम्माव—
अधिक । इसलाम—मुसलमान होना, खुदा की राह पर
जान देने का उद्यत रहना । भाव यह है कि औरंगजेब
मंत्रियों पर यह कह कर बिगड़ रहा था कि शिवाजी के
पाँच हजारियों के बीच में गड़ने करने का भेद नहीं मालूम
होता । उसके कमर की कटारी भी उसे नहीं दी गई थी
और उसके हाथ में कोई हथियार भी नहीं आगया था, नहीं
तो अवश्य वह अनर्थ करता । खुदा ने स्नानघर का वचा
दिया अर्थात् जहाँ मैं छिपा था वहाँ वह नहीं पहुँच सका ।

२१२—कैयो—कई, कितने । बार—देर ।

२१३—साईं—शाह । पंचतीस—पैंतीस ।

२१५—बितान—चंदवा । छिति—पृथ्वी । प्रमान—प्रमाण, सबूत ।
हौंस—इच्छा । हेम—सोना ।

- २१७—दारहि—दारा शिकोह को। दारि—मारकर। संगर—
युद्ध।
- २१८—रमरुद्र—युद्ध का बाना, लड़ाई करना। तिरे—पार
किया।
- २१९—प्रमेय—बहुत से।
- २२०—वासी—बसने वाला, रहने वाला। त्रिभुवन आधार में
भी हाथ में रहने वाला यश आधेय नहीं समाता।
- २२१—सहज—स्वभावतः। मतीत-मीत—चंचल, खिलवाड़ी।
पव्य—पर्वत। पील—हाथी। जस-टंक—यश का थोड़ा
ही अंश।
- २२२—क्रिति—पृथ्वी पर। क्जाजना—जोभा पाना। मजै—करना,
सजाना। गजै—दर्प दिखलाते हैं।
- २२५—चंदावत—चंद्रावत, चूँड़ावत, मेवाड़ नरेश राणा लाखा
के पुत्र चूँड़ा जी के घंशधर। रजवंत—श्रीमंत। रजतंत—
धूलि की शरीर। शरीर रूपी आधार को छोड़कर आधेय
का सुरलोक जाना वर्णित है।
- २२६—कतनाम—(फा० कतले आम) बहुत मार काट। फर—
युद्धस्थल। उद्धट—भारी, वीर।
- २२८—सँवारे—बनाया, किया। हरिवारे—विष्णु भगवान के।
अवनी—पृथ्वी। यवनी—म्लेच्छ स्त्री। भनार—भर्ता,
पति।
- २२९—कसत—कस कर बाँधना या थामना। बलंद—ऊँचा।
राज-मनि—राजाओं के मणि। फूल—ढाल पर जड़े हुए
फूल। केते मान—कुछ नहीं। मोई हाल—वही बर्ताव।
अर्थात् म्लेच्छों के काल की रक्षा करता है। ढाल का
कार्य तलवार पर घटाया गया है।
- २३०—पूरब—पहिले का। उत्तर—बाद का। गुम्फ—माला।

- २३१—जहान—संसार ।
 २३४—रज—राज्यश्री ।
 २३६—महिमेवाने—(महिमावाने) महिमा युक्त राजाओं ने ।
 लेवा—लेने वाला । पातसाह—बादशाह, सम्राट् ।
 सेवा—शिवाजी ।
 २३७—जीव-जड़ो—जीवधारी और जंगम, चराचर । पैज—पौरुष,
 पुरुषार्थ । राज—राजा ।
 २३८—जोई—जो । तेई—मो । दुवन—शत्रु । बड़े उर के—
 साहसी, उत्साही । धरैया धीर धुर के—धैर्य तथा दृढ़ता
 धारण करने वाले । खाँड़े—तलवार । डाँडे—दंड किया ।
 २४१—जीति—विजय । कुत्रपति—राजाओं को । माँडि—मंडित,
 शोभित ।
 २४२—हरकतु है—रोकता है या हकड़ता है । पेसकम—(फा०
 पेशकम) भेंट, नज़र । याकी—शिवाजी की । खरकना—
 काँटे सा चुभना ।
 २४३—अगर—एक सुगंधि द्रव्य । धूप—जलाने से । बगूरे—
 बगोला, बवंडर । अमाप—नापने योग्य नहीं । भारी ।
 कलावंत—गायक, गुणी । गाजत—गर्जते हैं । मतंग—
 हाथी । दाप—दर्पवान, भयंकर ।
 २४४—धरन—धारण करने वाला, स्वामी । धरमदुधार—धर्म
 अर्थात् पुण्य का आश्रय, शरण । सारु—तत्व, लोहा ।
 हथियार, बड़ाई । हिंदुवानाँसर—हिंदुओं को । हारु—
 मुंडमाला । हरगन—महादेव जी के गण पिशाचादि ।
 २४६—दिलदारि—दिलदार, सहृदय ।
 २४७—दुरदै—हाथी । परकीति—प्रकृति, सहज स्वभाव । गुन-
 प्रीति—गुण ग्राहकता, प्रेम की रस्सी । कंप—डर । बारि-
 बुंद—आँसू, जलबिंदु । अदली—न्यायी, न्यायप्रिय ।

- २५०—दंत गहो तिन—तृण मुख में लेना, शरण जाना । मह्य
सों—भारी शपथ । जोट—समूह । राह—उपाय ।
- २५२—बाह्या—चलाया, मारा । कठैठा—तेज, कठोर । अठपाँव—
दुष्टता । बीठू—बिठुआ, एक प्रकार का खंजर । धुक्योई—
गिराही था । धराधर—राजा, शिवाजी ।
- २५४—अज्ञानन—अज्ञान का बहुवचन, मूर्ख, (अर्ज + अज्ञान)
वकरा के समान डाढ़ी युत मुख । फेन—भाग । भै—डर ।
भै भरकी...सेना—आदिलशाही फौज डर से भड़क गई,
दुःखी हुई, दहल गई तथा उसका मन दूट गया ।
- २५६—होत है आदर जामें—जिनसे प्रतिष्ठा होती है । दान-
कृपान—युद्धदान, युद्ध में किसी की ललकार न सहना ।
बर—बल, शक्ति ।
- २५७—अमोर—अमोल ।
- २५८—ह्याँ—यहाँ, दक्षिण में । उहाँ—उत्तर में, वहाँ । मठ—
मंदिर आदि । बिसात—चलती । बालम—स्वामी, पति ।
आलम—संसार में । आलमगीर—संसार विजय करने
वाला, औरंगज़ेब की उपाधि ।
- २५९—गरबीले—घमंडी । अरबीले—उदंड । कँगूरन—बुर्जो ।
गोलंदाज़—गोली गोला चलाने वाले । अमान—अधिक,
बहुत । करपते—(सं० कर्प) लागडाँट करना, बढ़ावा
देना, उत्तेजित होना । अराति—शत्रु । अमरस—अमर्ष,
क्रोध ।
- २६१—सयन—सोते समय । साहन—दक्षिण के सुलतानगण ।
- २६३—साइति—अच्छा मुहूर्त । सर करना—परास्त करना,
दमन करना । डावरे—लड़के । गज-झावरे—हाथी के
बच्चे । गाढ़े—दुर्भेद्य । रावरे—आपके ।

२६५—चतुरंग—सेना के चारों अंग रथ, हाथी, घोड़ा, पैदल।
पारथ—पार्थ, अर्जुन। अज्ञातवास के समय राजा विराट
की गाय हरण करने वाले कौरवों को अकेले अर्जुन ने
परास्त किया था। हथियाय—हथिया कर, झीन कर।

२६६—करनी—कार्य, कर्म। फीकी भई—दब गई। नैसुक—
थोड़ा।

२६८—घनसारऊ—कपूर भा। घरीक—एक घड़ी, थोड़े समय
तक। सारद—शारदा, सरस्वती। सी—ऐसी। पुंडरीक—
सफेद कमल। कुक्यो—कुक गया, हार माना। कैलासईस—
महादेव जो, पहाड़ के राजा। रजनीस—चंद्र, रात्रि अर्थात्
अश्वंकार के राजा। अवनीस—राजा। सरीक—(फा०)
शरीक, समान, बराबर।

२७०—लोमस—एक ऋषि जिन्होंने बड़ी आयुष्य पाया था।
करनवारो—कर्ण वाला, सूर्य का दिया हुआ अभेद्य कवच।
इलाज—(अ०) उपाय। वे—(फा०) बिना।

२७२—शिवा जी के पैर रण में उसी तरह नहीं जमते हैं, जिस
तरह रावण की सभा में अंगद के नहीं जमे थे, अर्थात्
दोनों ही के पैर समान रूप चल हैं और शिवाजी की
प्रतिज्ञा भी ध्रुव नक्षत्र, पृथ्वी तथा मेरु पर्वत के समान
चल हैं। भाव यह कि शिवाजी रण में दृढ़ और वचन के
पक्के हैं।

२७३—छोटापन—छुटाई, लघुता। जाहिको—जिसका। सीरो—
ठंडा। कित्ति—कीर्ति। कुलिश—वज्र। भुध—पृथ्वी। कान्य
परंपरा में पृथ्वी अचल है। उलट्टी उपमा देते हुए भी
भाव यही है कि शिवाजी मेरु से महान, समुद्र से ऊँचे
हृदय वाले, कुवेर से धनी आदि हैं।

२७४—मतिपोस - पुष्ट बुद्धि वाले।

- २७५—ऊटै—विचार रखता है । जूटै—तैयार रहता है । टूटै—चढ़ाई करता है । अलोक—आलोक, चाँदनी । कोक—चकवा ।
- २७६—दहपट्ट—चौपट, नष्ट । गढोई—गढ़पति, दुर्गाध्यक्ष । तोरा-दार—जो तुरः नामक पगड़ी के एक आभूषण को पहिर सकते हैं अर्थात् भारी या बंदूक धारी । डाँडे—दंड लिया । जंग दै—युद्ध करके । मिजाज के—अभिमान्नी । डाबरे—बच्चा ।
- २७९—बिरद—यज्ञ, बड़ाई । अभंग—अभेद्य, दृढ़ । बेइलाज—बेचारे, बेबस । गैर—शत्रुता । नैर—नगर । नाहक—व्यर्थ ।
- २८१—चढ़ा—इच्छित, वांछित । हा—दुःख । दुनी—संसार ।
- २८२—रौम—रविण, चाल ।
- २८३—जाहिर-जहान—संसार-प्रसिद्ध । जलूस—दृश्य । जर-वाफ—ज़रबलू, एक कीमती कपड़ा ।
- २८५—पेंड—हठ । पेंड़—गस्ता ।
- २८८—पंपा—किष्किंधा का एक भारी तालाब । अगन—अगणित, बहुत । परन—परकोटे । चक चाहि कै—आश्चर्य से देख कर । कलिकानि—कष्ट, दुःख । इंदु—चन्द्रमा । उदथ—(सं० उदरथि) सूर्य । उतंग—ऊँचा । चकहा—पहिए ।
- २९०—आनन—मुख । मानी—सम्मानित हुई । सोहानी—शोभित हुई ।
- २९१—छहरावत—फँकते हैं, डालते हैं । झार—धूलि । भूधरऊ—पृथ्वी भी । बलरूरे—बलवान । पूरे—भर दिया ।
- २९२—जूझ—युद्ध । घाले—नष्ट किया । अरुनै—लाल ।
- २९३—सैली—शैली, चाल । बारिधि की गति पैली—अपनी मर्यादा छोड़ कर ।

- २६५—जे...महीके—पृथ्वी को म्लेच्छ असुर से रहित करने वाले ।
 भूधर उद्धरिबो—पर्वत उठाना, गोवर्धन-धारण, दुर्ग बना-
 कर पहाड़ों का सुरक्षित करना ।
- २६६—मानस—मन । कुरुख—क्रोध । उक्ताह—उत्साह, हर्ष ।
 दिपत—दीप्तिमान, सुप्रसिद्ध । परताप—प्रताप, आतंक ।
 फोटो रहा—लगा रहे, चिपका रहे । बरतन.....अथाह
 ते—वीरों के पानी अर्थात् मान के लिए थाह रहित पात्र है
 अर्थात् बड़े बड़े वीरों की पेंट मिटा दी पर अभी भी तृप्त
 नहीं हुई । रातो—रात्रि, लाल ।
- २६७—नौल—नवल, नई । धौल—सफेद ।
- २६८—गनीम—(अ० गनीम) शत्रु । दौर—दौड़, इच्छा । यवनी—
 मुसलमान स्त्रियाँ । परोई—सर्वदा पड़ा ही रहता है ।
 कलित—शोभायमान ।
- ३०१—गज-इंद्र—गजेंद्र, पेरावत । इंद्र के अनुज—उपेंद्र, विष्णु
 भगवान । दुग्धनदीस—(दुग्धनदीश) तीर सागर । सुर-
 सरिता—देव नदी, गंगा । निज गिरि—अपने कैलाश पर्वत
 को जो हिम के कारण श्वेत है । भाव यह कि शिवाजी
 के सुयश के, जो श्वेत माना जाता है, का जाने से उसमें
 अन्य श्वेत वस्तु ऐसी मिल गई कि ढूँढ़ने पर नहीं
 मिलती ।
- ३०३—तूल—तुल्य, समान । बास—सुगंध ।
- ३०५—गमके ते—उत्साहित होने से । झमके ते—डूट पड़ने से ।
 धमके ते—गिरने से । अवसान—होश हवास । धोप—
 सीधी तलवार ।
- ३०७—पखरैत—लोहे की पाखर अर्थात् जाली ओढ़े हुए घोड़े
 हाथी । बखतरवारे—कवचधारी । एते मान—ऐसा । सम

वेस—एक प्रकार के वस्त्र धारण किए हुए । हाँकिं देत—
ललकारते हुए । जाने चलते—भागने से जाने गए ।

३०६—अंतरजामी—मन की बात जानने वाला अर्थात् औरंगजेब
के मन में अपनी ओर से शत्रुता रहना समझ कर ।

३१०—औरंगजेब की आँखों से हृष्य प्रकट हो रहा था कि शत्रु
आप से आकर मिला है । शिवाजी ने मूर्खों पर ताव
देकर जतलाया कि हम तुम से अभी दब कर नहीं हैं ।

३१२—मिख देंहौ—सम्मति दोगे । सलाह—राय । करोऽब—करो
अब ।

३१५—जेय—विजेता, जीतने वाला । सिसौदिया—यहाँ शिवा जी
से तात्पर्य है । ठए हैं—किया है ।

३१६—बदन—मुख । साहि—बादशाही, राज्यभार, क्योंकि
औरंगजेब औलिया बनने का ढोंग रचता था ।

३२०—कप्पर—कपड़ा । मुहीम—(फा० मुहिम) कठिन काम,
चढ़ाई । झग—बकरी । झुपट—झुपेट, धक्का । साहब—
बड़ा आदमी । भुवप्पर—पृथ्वी पर । यहाँ राठौर।वीर महा-
राज यशवंत सिंह से तात्पर्य है, जिनसे औरंगजेब भी डरता
था और शिवाजी भी जिससे मिलने गए थे । ये सात-
हजारी मंसबदार थे तथा शायस्ता खाँ के साथ थे ।
सूबहु—सूबा, सूबेदार । कलींद—तरबूज ।

३२२—तन्नि रहे हौ—दुःखित हो रहे हो । उकन्नि हौ—उठ भागेगे ।
रन्नि—बनाकर । त्रिपुरारि—महादेव जी ।

३२३—भेजौ उत औरै—जब तक दूसरे को भेजे । महाकाज—भारी
काम ।

३२४—करि आप—कर आने पर । हज़रत—औरंगजेब । पेहें—
आवेंगे ।

- ३२६—मेरु—मेरु पर्वत सुवर्ण का बना कहा जाता है । कथान—
कथा, आख्यान । बलकत—उत्साह उमड़ता है, उत्तेजित
होता है । कुलकना—भर कर उमड़ना ।
- ३२७—बहना—देखना । जहत हैं—भरते हैं, खींचते हैं ।
- ३२८—पूरे मन के—दृढ़ चित्त के । कुंडन—लोहे की टोपी, शिर-
स्त्राण । जीरन—जिह्व, कवच ।
- ३२९—तरुन—वृत्तगण । तरायल—टूट कर । अमोद—आमोद,
खेल । सकसै—भर उठा है । अड़दार—मस्त । गड़दार—
हाथियों के साथ के भाले वाले । गैर—गैल, मार्ग । तुंड-
नाय—नरसिंहा ।
- ३३०—भयो—भूतकाल । होनहार—भविष्य । परतच्छ—वर्तमान ।
- ३३१—कराह—आर्तस्वर, कष्ट से आह करना । रूहेला—रूह की
रहने वाली एक अफ़ग़ान जाति ।
- ३३२—घटा—समूह । बेला—(सं० बेला) किनारा । उक़लत—
उमड़ता है । तरनि—सूर्य ।
- ३३४—जमाति—समूह । तेरिये फौज दरेरी—तुम्हारी ही सेना
द्वारा बेरी हुई । सूरति—स्वरूप, सूरत शहर ।
- ३३६—दीसैं—दिखलाई पड़ते हैं । हीसैं—हिनहिनाते हैं । बारन—
बार बार । जसरत—यश गाने में मग्न हैं । सम्याने—शामि-
याने । लाल—माणिक । नीलमणि—नीलम ।
- ३३७—खता—धोखा । डार्यौ बिन मानकै—बेइज्जत कर डाला ।
बिराटपुर—राजा बिराट की राजधानी जहाँ पांडवगण
ने अज्ञातवास किया था । कीचक—राजा बिराट का साला
जिसने द्रौपदी पर कुदृष्टि डाली थी ।
- ३४०—जकरे—जकड़े दृष्ट । बेआब—बेपानी, तेजहीन । गड़काब—
(फा०—गर्क+आब) डूब जाना ।

३४१—जगदेव—पँवार जाति का एक प्रसिद्ध वीर । जनक—
सीता जी के पिता । जजाति—राजा ययाति जिन्होंने अपने
पुत्र पुरु का यौवन उधार लिया था । अंबरीष—एक वैष्णव
राजा जिन्हें दुर्वासा ऋषि कष्ट देना चाहते थे, पर विष्णु
भगवान ने रक्षा की थी । खरिक—खरका, तृण । किंजल्क—
फूलों के बीच का अंश । उडुवृंद—तारागण । मकरंद—
शहद । कंद—जड़ । नाक-गंग—स्वर्ग की गंगा ।
चंचरीक—भौंरा । भाव यह है कि सब दानियों से बढ़ कर
शिवाजी हैं और उनके दान रूपी समुद्र से यश रूपी कमल
उत्पन्न हुआ है ।

३४४—दारिद्र्य—द्विष्ट—दरिद्रता रूपी हाथी । अमान—बहुत ।

३४५—मदन—कामदेव । हरयो...को—कामदेव से सुंदर ।

३४६—सरनागत—शरण आए हुए । अभैदान—निडरता देना,
निर्भय करना । गंभीर—गहरा । दरियाव—बड़ी नदी, समुद्र ।
बहिरात—निकलता है अर्थात् सारे संसार के पानी का
स्नान तुम्हीं में है ।

३४८—दारुण—दारुण, भयंकर । दूत—असुर । विकार—
डरावना । विधंसिवे—नष्ट करने । पुरहूत—इंद्र ।

३५०—अनचैन—घबड़ाया हुआ, बेचैन । काहि ने—क्यों नहीं ।
संक—डर ।

३५१—अम्हा—(सं० अंजन) रात्रि, रात । संम्हा सी—अधियारी ।
रोर—शोर । अंदेस—अंदेशा, डर । बड़वा—बवंडर या
बड़वाशि । जितवार—जीतने वाला ।

३५४—निरंसक—निश्शंक, निडर । डंक—डंका । बंककरि—
बजाकर । संककरि—डराकर । सोचचकित—सोचत +
चकित । भरोचचलिय—भड़ोच भागो । तट्टट्टइमन—
तत् + ठट्ट + मन, मन में यही ठान कर । कट्टट्टिक—कष्ट से

ठीक कर । रट्टिहिलिय—आगे ठेल कर । सहदिसि दिसि—
सब तरफ से । भद्दवि—दबने से भद्द हुई । रट्टिहिलिय—
दिल्ली रद्द हुई ।

३५४—गतबल—शक्तिहीन । मुद्ध—व्यर्थ । कुद्धद्धरि—क्रोध करके ।
युद्धद्धरि—युद्ध में धर कर । अद्धद्धरि—आधा धड़ । मुंड-
ड्डरि—मुंड के कट कर गिर जाने पर । रुंड—कबंध,
धड़ । डुंडडुडग भरि—डुंडत (सं० डम्) भागते हैं + डग
भरि—कूदते हुये । खेदि—भगाकर । दर वर—घर दुआर ।
खेदिदय करि—खेद + द्वय + करि, खेद कर । भेददधि—
दही सा काट डाला । जंगगति...बल—युद्ध का हाल
सुन कर औरंगजेब का रंग बिगड़ गया और वह निर्बल
हो गया ।

३५६—नृप + कुंभ—राजाओं का शिर, श्रेष्ठ राजा । भूमिम्मधि—
पृथ्वी में । धूमम्मडि—धूमधाम से । रिपु जुम्मम्मलिकरि—
शत्रुओं के जमा अर्थात् समूह को मल कर । उतंगरब—
ऊँचाई से गर्वीले । दक्षखलनि—दक्ष दुष्टों को । अलख-
खिति—अलक्ष्य हुई क्षिति को, पृथ्वी पटकर न दिखलाने
लगी । मोललहि—मोल लेकर । जस नोललरि—नवल
यज्ञ लड़ कर ।

३५७—दुंददवि—युद्ध में दबने से । दंददलनि—सेनाओं को दुख
हुआ । बुलंददहमति—भारी डर । लच्छ...झिति—लाखों
स्नेच्छों को नष्ट कर पृथ्वी की गोभा बढ़ाई । हल्ल...जीति-
हल्ला अर्थात् धावा कर, राजा से लड़ कर परनाला जीत
लिया ।

३५८—नटत—नाचता है । घन—बहुत । रसत—आस्वदन करते
हैं । वूत—वूता, शक्ति । सुर-दूत—यमदूत । डंडि—(सं०
डम्—चीत्कार करना ।) शोर ।

- ३५९—रुद्र—लड़ते हुए । बग—बाग । दुक्कि—झिपे हुए । कुक्कि—कूक, शब्द । रंक रकत—खून के प्यासे । हर-संग—महा-देव जी के गण, भूत प्रेत ।
- ३६०—बरार—बरियार, बलवान । वैहर—भयानक । बिग—(सं० वृक) भेड़िया । बगरे—फैले । जाम—समूह । लोम—पुच्छ, दुम । गोहन—छिपकिली जाति का गोह जंतु । गोम—भूमि । खेरन—छाटे गाँवों में । खबीस—भूतप्रेत । खोम—(फा० कौम) जाति ।
- ३६१—तुरमती—एक शिकारी बिड़िया । सिलहखानः—शस्त्रा-गार । कूकर—कुत्ता । करीस—गोशाला । हरमखाने—जनाना महल । स्याही—एक जानवर जिसके शरीर पर लंबे लंबे काँटे होते हैं । सुतुरखाना—ऊँट घर । पाढ़े—एक प्रकार का हरिण । पीलखाना—हाथीशाला । करंजखाना—वह गृह जहाँ अतिशबाजी बनती है । खेरा—छाटा गाँव । खीम—नष्ट । खड्गी—(सं० खड्गी) गेंडा । खिलवत-खाना—एकांत स्थान । खसखाना—ठंडा घर, जहाँ खस की टट्टियाँ लगी रहती हैं ।
- ३६४—पूनावारो गति—पूना में जायस्ता खाँ की जो दुर्दशा हुई उसका हाल । समीरन की गति—हवा की सी चाल । जस-वंत—महाराज यशवंतसिंह, यशस्वी । रजपूत—राजपूत, (रज+पूत) पवित्र राज्यश्री । सिव—महादेव जी । बरकति—वृद्धि, बढ़ती । नव खंड—भरतखंड, इलावर्त, किंपुरुष, केतुमाल, कुरु, हिरण्य, हरि, राम्य, भद्रा । दीप—टापू, दीपक । आजु समै के—इस काल के । मिदति है—कष्ट देता है ।
- ३६६—सैन—(शयन) सोना, सेना । संग रमै—साथ पड़े हैं । समुहाने—सामना करने पर । सूर—वीर, सूर्य ।

कलानिधि—चंद्रमा । जगत—(सं० गम्) फैलता है, संसार ।

३६८—ध्रुव—ध्रुव नक्षत्र । गिरजा-पिब—महादेव जी । तरु—कल्पवृक्ष । सिरजा—पैदा किया, उत्पन्न किया । त्रिष—(सं० त्रा) पृथिवी । भुव भरता—संसार को पालन करता । वर—दान देने का वचन, इच्छानुसार याचना । निव—(सं० नि=सर्वदा+वह=पाना) अवश्य, ध्रुव, सत्य ।

३७०—बाज—शिकारी चिड़िया । आमल—संसार के लोग । जिन—जिन थोड़ों पर । तीर एक मारे—जितनी दूर चलाने पर एक तीर जाता है ।

३७१-६—इन नौ गीतिकाओं में १०५ अलंकारों के नाम हैं ।

३८०—सुचि—(सं० शुचि) ज्येष्ठ तथा आपाढ़ मास दोनों को कहते हैं ।

३८१—एक प्रभुता को धाम—विष्णु भगवान् । सजे...काम—ब्रह्मा जी । पंच—आनन—महादेव जी । पडानन—स्वामि-कार्तिक । बार—इन । याम—पहर । नव अवतार—नया अवतार अर्थात् शिवाजी । थिर राजे—मदा शोभायमान रहें । कृपन हरि-गदा—भगवान् की गदा की कृपा से । त्रिदस—अमर, देवता । दासरथि-राज -राम राज्य ।

शिवाबावनी

१—राज-लाज—राज्यत्व की मर्यादा । मकरंद—माल मकरंद के वंशज ।

२—रंग—उत्साह, उल्लास । बिहद—बेहद, असीम । गैवरन—हाथियों । पेल—बाढ़, बहिया । खेलमैल—गड़बड़, अशांति ।

खलक—संसार । गैल—गली । उसलत—उखड़ जाता है ।
तरनि—सूर्य । थारा—थाली । पागवार—समुद्र ।

३—बाने—भंडे । नग—पहाड़ । ग्राम नगर—तात्पर्य वहाँ के
रहने वालों से है । उकसाने—स्थान से आगे हट आण ।
अलि—भौरा । दरारे—रगड़, चाँप । करारा—कड़ा,
कठोर ।

४—अरु—और । भूधर—पहाड़ । जुथ—झुण्ड । जमाति—
समूह । दिगंबर—महादेव जी । शिवा—पार्वती जी ।

५—हँकारी—अहँकारी, दर्शमान । दामिनी—विजली । दमक—
चमक । तीजा असवारी—मुसलमानों में किसी की मृत्यु
के तीसरे दिन का कृत्य तीजा कहलाता है और उसमें लोग
साथ निकलते हैं तथा गरीबों को रोटियाँ बाँटते हैं ।
बीर सिर.....असवारी के—शिवाजी के सैनिकों के सिर
पर क्राप लगी हुई है कि मुसलमानों को तीजा सवारी
निकालनी पड़ेगी । हरम—बैगम । बयारी—हवा । मति-
भूली—पगली ।

६—दिलगीर—दुखी । तनिया—चाली । तिलक—लंबा कुर्ता ।
सुथनिया—पायजामा । पगनिया—जूता । पति बाँह बहियाँ
न—जिन्होंने पति का हाथ कभी न छोड़ा था । छहियाँ
खन की—तुत्तों की छाया । बालियाँ—बाल । आलियाँ—
भ्रमर । नलिन—कमल ।

७—कत्ता—‘नीमचा तु कृपाणः स्यात् कत्ती तु करवालिका’
(राजव्यवहारकोश) एक प्रकार की छोटी तलवार । अकह—
अकथ, अवर्णनीय । बिलायती—मुगल साम्राज्य के समय
अरब, फारस आदि बिलायत कहलाते थे । बिललाना—
घबड़ाना । अगारन—घरों । कगारन—दीवारों का ऊपरी

भाग । कीबी—करने योग्य । गरीबी—दीनता । नीबी—कमर के पास की धोती की गाँठ ।

८—मंदर—मंदिर, घर, मंदर पहाड़ । अंदर—भीतर । कंदमूल—मिश्री मिला हुआ फल, मुरब्बा, गाजर आदि जड़ । बैर—बार, मर्तबा, एक फल । भूपन—आभूषण, गहना । भूखन—भूख से । विजन—पंखा, निर्जन । नगन—नगों को, नग्न, नंगी । जड़ार्ती—रत्न बैठवाती थीं, जाड़ा खानी थीं ।

९—सगवग—सकपकाती हुई । घाती—आत्महत्या ।

१०—उघारे पाँव—नंगे पैर । सम्हारती न हैं—घबड़ाहट के मारे यह भा ध्यान नहीं रहता कि उनके शरीर के कपड़े खुल गए हैं । हयादारी—लज्जा । नरम परीं—दीन हो जाना, तपाक का ठंडा होना । बनासपाती—पत्ती, बनस्पति ।

११—बोवा—सुगंधि । घनसार—कपूर । सुरति—याद । दारा—स्त्री ।

१२—सोंधा—सुगंधि, वह द्रव्य जिसे मलकर स्त्रियाँ बाल सुगंधित करती हैं । चारि.....लंक—चार संख्या के मध्य भाग सा कमर । पिछौरा—चादर, उसका पिछला हिस्सा जिसकी झालर में मोतियाँ टँकी रहती हैं ।

१३—साहि बिरताज—बादशाहों का शिरोमणि । अचल—दृढ़ । अथह—थाहरहित, गहरा । उमराव—(फा० उमरा) सदांरगण । बाँदी—दासी । डोंगा—लंबी नाव । दरियाव—नदी ।

१४—कैकय—कई । गुर्जबदर—(फा०) गदा की चाल का एक अस्त्र धारण करने वाले । हुस्यार—होशियार, सतर्क । नीति पकरि—कायदे से । नीरे—पास । फड़—कतार ।

- १५—जारिन—हजारी सदाखण । नियरे—पास । गैर मिसिल—नियम विरुद्ध । सियरे—ठंडे । बलकन लाग्या—क्रोध उमड़ने लगा, क्रोधित होने लगा । जियरे—कलेजा, जीवट । तमक—क्रोध ।
- १६—कुंद—छाया फूल । पट्पद—भौरा । भ्रमर सभी पुष्पों का रस लेता है, पर कटहरी चंपा के पास नहीं जाता क्योंकि उसकी गंध बड़ी तीव्र होती है । इसके आगे के कवित्त में अलग अलग एक एक राजा को एक एक पुष्प बनाया है । इससे यह ऐतिहासिक ध्वनि भी निकलती है कि औरंगजेब राजपूताने आदि में स्वयं लड़ने गया, पर शिवाजी से युद्ध करने को उनके जीवित काल में स्वयं कभी दक्षिण नहीं गया ।
- १७—कूर्म—कूर्मघंजीय जयपुर नरेश । कमधुज—जोधपुर नरेश । गौर—गौड़ क्षत्रिय । पँवार—प्रमार क्षत्रिय । पाँडरि—एक फूल । चंद्रावत—चूँड़ा जी के वंशधर चूँड़ावत राजपूत । बड़गूजर—क्षत्रियों की एक जाति ।
- १८—देवल—मंदिर । निसान—झंडा । अली—मुसलमानी मत प्रवर्तक मुहम्मद पैगंबर के दामाद । लबकी—लपक, भाग । पीर—मुसलमान साधु । पयगंबर—खुदा का संदेश लाने वाला । दिगंबर—नंगा, एक प्रकार के फकीर, जैसे सरमद नाम का एक फकीर था जो इसी प्रकार नंगा रहता था और जिसे औरंगजेब ने मरवा डाला था । रब—खुदा । मसीद—मसजिद । सुनति—सुन्नत, खतना, मुसलमानी धर्म का बप-तिस्मा ।
- १९—हुती—थी । साखि—साक्षी, गवाही । तब्बर—(पं० -- टब्बर) पुत्र । दो मैं...ढब की—कुरान तथा वेद की प्रथाओं को एक नहीं किया । अर्थात् अत्याचार कर मुसलमान नहीं बनाया ।

२०—तबकी—पहले की, अपने अपने धर्म । भव—महादेव जी । कलमा—यह इस्लाम धर्म का मुख्य मंत्र, 'लाय लाय लिह्लाह मुहम्मद रसूलिल्लाह' है । अर्थ हुआ कि ईश्वर एक है और मुहम्मद उसका दूत है । निवाज—(फा० नमाज़) ईश्वर की प्रार्थना ।

२१—दावा—बराबरी करना । ज़ेर—दमन, हराना । हद्—सीमा । दरबारे—मग़ल दरबार, साम्राज्य । मवास—घर । बनजारा—देश देश घूम कर व्यापार करने वाला । आमिष अहारी—कच्चा माँस खाने वाला, पिशाच । खाँड़ा—चौड़ी तलवार । किरचें—सीधी लम्बी पतली तलवार । मतवार—मस्त, घमंडी ।

२२—कमान—तोप । जोट—समूह । किम्मति—कौशल, चतुराई । भोंट—युद्ध । ताव देना—मरोड़ कर मोड़ों को ऊपर उठाना ।

२३—ठट्ट—भुंड, कतार । सिंहराज—वीर सैनिक से अर्थ है । बिदारे—फाड़ डाला । कुम्भ—गंडस्थल, खोपड़ा । चिक्करन—चिंघाड़ते हैं । मीर—सैयदों की पदवी । हद्—मर्यादा, प्रतिष्ठा । बिहद्—बेहद्, असीम । गुमान—घमंड । झारि डारे हैं—घमंड उतार दिया है, तोड़ डाला है ।

२४—असुरन—मुसलमान । सीना—झाती । धरकत—काँपता है, धड़कता है । खग दाँत—तलवार का दुकड़ा । खरकत हैं—कसकता है, टीसता है । कंटक कटक—शत्रु की या काँटे सी सेना को । मोरे—छिपाये हुए । सरकत है—खिसक जाते हैं, भागते हैं । फरलेटे—ढेर हुए से । पठनेटे—पठान के बच्चे । फरकत हैं—तड़प रहे हैं ।

२५—चंगुल चाँपि के चाख्यों—पूरा अधिकार कर लिया । रूप गुमान—घमंड । सूरत—एक नगर । नाखो—फैंक

दिया । पंजन—बघनहा, जिसे हाथ की उँगलियों में लगा कर चोट किया जाता है । होरँग है—उसकी ऐसी धाक है ।

२६—सूबा—सूबेदार । निरानंद—आनंद रहित, दुःखी । ब्योत—उपाय । सिगरे—सब । हुता—था । साइत खान—शायस्तः खाँ । थान—पड़ाव, कंफ । गीदड़ बाना—कादरांचित कार्य ।

२७—जोरि—वेग से । जुमला—इस नाम का कोई देश नहीं ज्ञात हुआ, पर फारसी में इस शब्द के माने सब के होते हैं अर्थात् सभी देश के । तरि—पार कर । कूरताई—मूढ़ता । मंसब—पद, ओहदा । हज़रत—हुजूर, मान्यवर ।

२८—जपत—(अ० ज़ब्त) क़ीन लेना । तुरकान दलथंभ—म्लेच्छ सेना के स्तंभ, सेनापति । तबल—(अ०) डंका । बेदिल—घबड़ाई हुई, निराश । सेवा सुख—सुख की निद्रा सोना, आराम से सोना । रिसालें—सेनाएँ । करनाल—ताप ।

२९—चमू—सेना । सेवत जगावा—आपसे छेड़खानी करना । जंग जुरा—युद्ध करो । बैरिबधू—शत्रु की स्त्री । सलाह—संधि, मेल । दिवाल की राह—बेराह, कुराह, दिवाल में से जान का प्रयत्न कर मिर फोड़ना ।

३०—संधि—चढ़ाते हैं, लगाते हैं । मलतारि—मलाबार की । धम्मिल्ल—बाल । गब्भ—गर्भ । कोटै गरब्भ—काट का गर्भ, दुर्ग में । चिंजी चिंजाउर—स्थानों का नाम । चाल कुंड—चौल बंदर । मधुराधरेश—दक्षिण के मधुरा स्थान का राजा । धकधकत—घबड़ाया है । निविड़—अधिक ।

३१—मयदान मारा—युद्धभूमि में मार डाला । फरासीस—फ़्रांस देगीय । फिरंगी—अन्य युरोपीय मनुष्य । खाक किया—धूल में मिला दिया । सालति—कष्ट देती है । चहुँघा—चारों ओर ।

- ३२—फिरंगाने—फिरंगियों का देश । हृदसनि—डर । हबसाने
अफ्रीका का एबीसीनिया प्रान्त, हबश देश । बिडरि—छितरि
बितरि होकर । दरगाह—दरबार, फकीरों का मठ ।
खरभरी—घबड़ाहट । परी पुकार—घबड़ाने लगे ।
- ३३—दावा—हक, स्वत्व । नाग—साँप, हाथी । जूह—झुंड ।
पुरहूत—ईद । बाज—शिकारी चिड़िया । तम—अंधेरा ।
- ३४—दौर—पीड़ा करना । रारि—लड़ाई । देहग—चौरा ।
कतलान—मार काट । हासिल साल को—वार्षिक कर जैसे
चौथ, सरदेशमुखी आदि ।
- ३५—गंजाय—ढेर कर, गिरा कर । गढ़धरन—दुर्ग के रक्षक ।
धरम दुवार दै—शरण में आने के कारण । गढ़धारी—
दुर्गाध्यक्ष । हजारी—साहसिक मंसब वाला । रैयत—प्रजा ।
बजारी—साधारण । महता—गाँव का चौधरी ।
- ३६—सक्र—इन्द्र । शैल—पर्वत । अर्क—सूर्य । तम फैल—अंध-
कार के विस्तार । रेल—ढेर, समूह । लंबादर—गणेश जी ।
कुंभज—अगस्त्य ऋषि । हर—महादेव जी । अनंग—
कामदेव । पारथ—अर्जुन ।
- ३७—कुंभभव—अगस्त्य । घन—गंजान । तरुन—घना, घोर ।
कंटकाल—काँटों का घर । कैटभ—मधुकैटभ राक्षस, जिसे
काली जी ने मारा था । जालिम—अत्याचारी, असुर ।
पन्नग—साँप । कार्तवीज—कार्तवीर्य, सहस्रार्जुन ।
- ३८—दरबर—वेग से । दुर्जन दरब की—दुर्जनों के दर्प की ।
जाहिर—प्रसिद्ध । जहान—संसार । जंग जालिम—युद्ध में
भयंकर । जोरावर—शक्तिमान, बलवान । रब—राव ।
दहलिजात—बिगड़ जाती है डर जाते हैं । करब की—
(अ० अकरब) बिच्छू की, बिछुआ मुहम्मद साहब के

चाचा अमीर हमूजः नाम के एक मुसलमान वीर की तलवार का यह नाम था । पाठा० गरब की है अर्थात् घमंड की ।

३६—खुपान—बादशाह । महिदेव—ब्राह्मण । अरजा—अर्ज किया, कहा । रन ज़ोंगे—रणभूमि त्याग देते हो, भागते हो । रावरे—आप के । करि परजा—अपनी प्रजा बना कर । तिहारो—तुम्हारी शक्ति । निबैरो—निर्णय, तै पाना । कायर सों कायर—डरपोंक से डरपोंक ही होते हैं ।

४०—बाहियत है—चलाता है । बैरी—घबड़ाई हुई । दौरनि—चढ़ाई, आक्रमण । निबाहियतु है—पार पाते हैं । बैरवारे—शत्रु के । जैनवारे.....चाहियतु हैं—आँखों से जो आँसू की नदी उमड़ती आ रही है उसे रोकना चाहते हैं अर्थात् रोते हैं ।

४१—दहसनि—डरती है । चाह—इच्छा, उत्सुकता । बिलखि—रोकर । नारी—नाड़ी । हहरि—डर कर । भीर—सेना । धाक—शब्द । दरकति है—फटती है ।

४२—नव कोटि—मारघाड़ । धुंधजोत है—तेज मलीन हो गया है । रोत—रोते, हे—थे ।

४३—दुग्ग—दुर्ग, गढ़ । गाजी—अन्य धर्म वाले को मारने वाला । जीति—विजय । करनाटो—कर्णाटक के । सिंहल—सीलोन, लंका । पनारे वारे—परनाले वाले । उड्डट—प्रचंड, भारी । तारे फिरने लगे—सौभाग्य के ग्रह आने लगे । सितारे गढ़धर—शिवाजी । दाड़िम—अनार । दरके—फट गए ।

४४—ऐन—(अ०) ठीक । परावने—भगदर, भागना । रुहिलन—रुह के रहने वाले पठान जो रुहेलखंड में अधिक बस गए थे, रुहेले । बाजे बाजे—किसी किसी, कभी कभी । उघरत हैं—खुलते हैं ।

- ४५—खाक साहो—(फा० खाक + स्याह) धूल में मिला देना ।
खिस गई—नष्ट हो गई । फिस गई—भूल गई । हिस गई—
मिट गई । दमामा—बड़ा नगाड़ा । धौंसा—डंका । भारे—
भारी आदमी ।
- ४६—डाढ़ी—जली हुई । रैयति—प्रजा, यहाँ हिंदुओं से तात्पर्य है ।
बिनु चोटी के सीस—मुसलमानों के सिर ।
- ४७—फुतकार—फुफकार । बिदलिगो—मसल गया । झारन—
तीव्र गंध । चिकारि—चिंघाड़ मार कर । कैल—कठुआ ।
खग—तलवार । भुजंग—सर्प । अखिल—सब ।
- ४८—अस्मृति—स्मृति, धर्म-शास्त्र । समसेर—(फा० शम्शेर)
तलवार । दिवाल—सीमा, मर्यादा । दुनी—संसार ।
- ४९—बाही—उठाई, चलाई । पारावार—आर पार । नाँदिया—
नंदी बैल । कपाली—महादेव जी ।
- ५०—सो—वह । वेस—(फा० बैश) अधिक । बहलोलिया—बह-
लोल खाँ की ओर वाले । कौल—प्रतिज्ञा । रसना—जिह्वा ।
भोलिया—भोला, सीधा । औलिया—फकीर ।
- ५१—मीड़ि—मल डाला । देवल—मंदिर । तेग—तलवार ।
- ५२—सपत—सप्त, सात । नगेश—पहाड़ । ककुभ + गजेश—
दिशाओं के हाथी । कैल—शूकर । दिनेस—सूर्य । घाले—
नष्ट किया । जग काजघारे—रोज़गारी, नित्य कमाकर खाने
वाले । निहचिंत—चिंता रहित ।

छत्रसाल दशक

- १—हाड़ा—राजपूतों की एक शाखा । बूंदी-धनी—बूंदी के राजा ।
मरद—वीर पुरुष । सालत—कष्ट देता है । छत्रसाल—क्षत
अर्थात् घाव जो कष्टकर है ।

- २—वै—बूंदी नरेश । दिल्ली की ढाल—दिल्ली के रक्तक ।
- ३—भुज-भुजगेस—बाहु रूपी सर्प । वै—बरङ्गी । खेदि—दौड़ा कर । दलन—सेनापै । बखतर—कवच । पाखरिन—हाथियों का लोहे का कवच । मीन—मछली । परबाह—धारा । रैया—पुत्र । पर-क़ीने—जिनके पर कट गए हैं । पर—शत्रु । क़ीने—क्षीण हो कर, चोट खाने पर । बर—बल, शक्ति ।
- ४—जोम—उत्साह से । जमकें—चमक रही हैं । सेल—बरङ्गा । दामिनी—विजली । आन—दोहाई । घन—बड़ा हथौड़ा । बेहर—भयानक, डरावना । बगारन—घाटियाँ । अगारन—घरों । पगारन—चहार दीवारी ।
- ५—अख—हथियार । खीझौ—क्रुद्ध हुआ । गबड़ी कबड़ी का खेल । चपटें—चोट चपेट । हुलसीं—प्रसन्न हुई । ईस की जमाति—भूत प्रेत गण । समद—समुद्र, अब्दुस्समद खाँ । बाड़व—बड़वानल ।
- ६—हैबर—हय + वर, अच्छा घोड़ा । हरट्ट—मोटा ताजा । गैबर—गज + वर, भारी हाथी । रंजक—बारूद । तराप—तड़प, छूटने की आवाज़ ।
- ७—चाकचक—सतर्क, सुरक्षित । चमू—सेना । अचाकचक—एकाएक, अचानक । चाक—चक्र । करेरी—सामना किया, बर्दाश्त किया । थप्पन—स्थापित करना, रक्षा करना । उथप्पन—उखाड़ डालना । दाम देवा—करद, धन देकर ।
- ८—कीवे को समान—उपमा देने को । पंचम बुँदेलों के पूर्व पुरुष का नाम पंचम था, इसीसे बुँदेले राजे प्रायः यह नाम पदवी रूप में धारण करते हैं । लौ—से, समान ।
- ९—साँग—चौड़े फल का भाला । पेलि—भोंक कर । मिया—मुसलमान । उदंगल—प्रचंड । मत्ता—मत्त, मस्त । कत्ता—तलवार ।

- १०—दहबट्टि—नष्ट कर । मेंडे—सीमा पर । बरगी—(फा० बार-गीर) घुड़सवार । बहरि—फैल कर । बिहाल—बेहाल, घबड़ाया हुआ । रेवा—नर्मदा नदी ।
- ११—औड़ों—गंभीर, भारी । मेड बेड़ी—हद्द बांधा, रोका । चक्रवे—चक्रवर्ती । सौं हैं—सामने । भक—एकाएक । रुंड—कबंध । रुंडमुंड—लुंडमुंड, गिरे पड़े । भुसुंड—एक अस्त्र । तुंड—तलवार का अग्र भाग । कीन्हों जस-पाठ—प्रशंसा करने लगे । काठ लों—निश्चल, निस्तब्ध ।
- १२—आफलाप—(आफताब) सूर्य । तुरी—घोड़ा ।

फुटकर

- १—जुरे—सामना किया, युद्ध किया । रहँट—जल निकालने का एक यंत्र जिसमें लोहे की जंजीर में घड़े लगे रहते हैं, ये घड़े कुएँ में नीचे जाकर जल ले आते हैं और ऊपर आकर पानी गिरा देते हैं । घड़ी—घटी, झांटा घड़ा । पानिप—जल, प्रतिष्ठा ।
- २—बरदार—ढोने वाला । निखिल—सब । नकीब—प्रशंसा करते हुए आगे आगे चलने वाला भाट । जेम—ताव, उत्साह । पजारवा—जला दिया ।
- ३—तरनि—सूर्य । बिड़ाल—बिल्ली । कैटभ—राक्षस विशेष । पन्नग—नाग ।
- ४—किरधान—कृपाण, तलवार ।
- ५—बिलंदे—बड़े आदमी । बारिधि बिहरनौ—समुद्र-यात्रा ।
- ६—दरबारे—राज्य । दुधन—शत्रु । चौंसठ—चौंसठ योगिनी । पसुपाल—पशुपति महादेव जी ।
- ७—खँट—आर ।

८—बामी—बिल । जास्ती—अधिक, बढ़ कर । तरासती—(फा० तराशीदन=काटना) काटती है ।

९—पंजर—हड्डिया । अंबिका—काली जी । अर्चकिये—खा गई । कर्चकिये—कुचल उठे ।

११—सुरसाल—असुर, म्लेच्छ । गंजन—नाशकारक, नष्ट करने वाला । गनीम—(अ०) शत्रु । पार—एक ग्राम । म्यान—लाल ।

१२—कत्ता—तलवार । चकत्ता—यहाँ सुल्तान से तात्पर्य है, म्लेच्छ-राज ।

१३—बंद कीने—अधिकार कर लिया । उपखान—कहानी । जेर—हार, पराजय ।

१४—दलमनी—दलमणि, सेनापति । विश्वधनी—विष्णु भगवान । बल्लम—भाला । अनी—नोक ।

१६—इसमें अकबर के यौवनावस्था के समय के नौ रोज़ की मीना बाज़ार पर आक्षेप किया गया है । यह बाज़ार दुर्ग ही में लगता था और राजाओं तथा मंसबदारों की बहू बेटियाँ दूकानें खोल कर बैठती थीं । बादशाह की वेगमें खरीदने आती थीं । इन्हीं में कभी कभी बादशाह भी स्त्री-वेष धारण कर घूमते थे । दावादार—जिनका दावा है, स्वत्वाधिकारी । घान कीनी—मार डाला । नदानी—मुखता । बंस कुत्तिस—राजपूतों के कुत्तिस वंश प्रसिद्ध हैं ।

१७—देह—(फा० देह-दस) दस, बारबार, शरीर । धराई—पृथ्वी पर । गगन के गौन—मृत्यु-समय । नग—मणि, माणिक । नगन—नंगा ।

१८—हुज़र—कौशल, गुण । महादरी—(महा+आदरणीय) प्रतिष्ठा योग्य । अमान—बहुत । कादरी—डरपोकपन ।

१९—बज़धर—इंद्र ।

- २०—सहज—साधारण । धाराधर—बादल । दिग्ग मैगल—
दिशाओं के हाथी, दिग्गपाल ।
- २१—अदल—(अ०) न्याय ।
- २२—बिसोध—विशुद्ध, पवित्र ।
- २३—मिनारे—खेल की सीमा, गोल । चहुगान—चाँगान, पोले ।
बटा—गेंद ।
- २४—धरापति—राजा । कृतधारी—कृत्रधारी । उजारी—प्रकाश
किया । ताज़िण—तुर्की ताज़ी, मुसलमान ।
- २६—पेंड—हठ, मान । काहिनै—किसको ।
- २७—जंगो—युद्धप्रिय । खलक—संसार ।
- २८—करवानक—गौरैया पत्नी । कुलंग—कौआ । दुषन—शत्रु ।
बाजी—घोड़े । चंग—चंगुल ।
- २९—साहिबी—प्रभुत्व, धाक । तारे—ताला । आमिल—हाकिम ।
- ३०—सार—तत्व, धैर्य । खादर—कढ़ार । क़ार—भस्म, राख ।
- ३२—बाजी बम्ब—बम बम महादेव पुकारने लगे । कलाँ—भारी ।
राजी—समूह, सेना । मंडी—भर गई । तेजताई—तेज,
प्रताप । दंडी—दंड लिया था । औनि—भूमि । मंदीभूत—
तेज धीमा हो गया । रंकीभूत—दरिद्र हो गए । करंकीभूत—
कलंकी अर्थात् स्याह हो गए । सुलंकी—क्षत्रियों का एक
वंश, भूषण के एक आश्रयदाता 'हृदयराम सुत रुद्र'
सोलंकी थे ।
- ३३—अक्क—क़की हुई, तृप्त । धक—इच्छा । नांगी—नग्न, कुटिल ।
आसौ—मदिरा । सुकल—सफ़ेद । गजक—चाट, मदिरा
पान के बाद का निमकीन खाद्य ।
- ३४—दारियतु है—डाँट कर दमन कर देते हैं । धाराधर—बादल ।
कहर—आफ़त, प्रलय सा कष्ट । तगा—तागा, डोरा ।

- ३५—मेनक—स्याह, काला । बयारी बाजि—हृषा रूपी घोड़ा ।
कदन—तोड़ने । बलाका—बगुला, बक । धुरवान—हृषा ।
- ३६—उलदत—निकालते रहते हैं । भीम—भयंकर, भारी । कद—
डीलडौल । आह के—घण के । गंड—मस्तक । बिलंद—
ऊँचे । भंगति—लटक रही है । मजेजदार—शानदार ।
कंजर—हाथी ।
- ३७—दिवलः—बड़ा, पूज्य । मेह—दया, मुहब्बत । दारा आदि
चारों महोदर भाई थे, जिनकी माता अर्जुमंदबानू थी ।
यही मुमताजमहल कहलाती थी जिसकी कब्र पर आगरे
का ताजमहल बना हुआ है । बादि—व्यर्थ ।
- ३८—तमबीह—माला । बंदगी—ईश्वर-प्रार्थना । क़त्र...बय के—
पेमा क़त्र खीन लिया मानों बूढ़ा बाप मर गया हों । पील
पै तारायो - हाथी से मरधा डाला । क़रकंदी—क़ल करने
वाला ।
- ३९—तमत—घण फैलता है । लंक लो—लंका तक । क़ारे—राख
से, जलते हुए । तरारे—सिर घूमना ।
- ४०—भगवंत के तनै—राजा भगवंत दास के पुत्र मानसिंह । जग
जाने—संसारप्रसिद्ध । क़ूरम—कड़वाहा । माने—मानने
अर्थात् प्रतिष्ठा करने ।
- ४१—डंबर—बादल । उडमंडल—तारामंडल, आकाश ।
- ४२—भाममान,—प्रकाशमान, तेजयुक्त । भोगीराज—सर्प ।
भावना—प्रिय ।
- ४३—बानीजू को वाहन—हंस । मेंडू—स्थान विशेष ।
- ४४—काकनद—कमल । अनंगज्योति सोकी सी—कामदेव
अर्थात् रति-कलित के चिन्हों से सिक, तात्पर्य यह है कि
रति के चिन्ह उसके शरीर पर पूरी तरह लक्षित हो रहे थे ।
सकल—सब शृंगार । कांति रवि रोकी सी—अरुण सूर्य

की लाल किरणों । सुबह ही के सूर्य लाल होते हैं और ज्यों ज्यों ऊपर उठते हैं, श्वेत होते जाते हैं इसलिए कवि कहता है कि यह लाल बिंदु ऐसा ज्ञात होता है कि प्रातः सूर्य रोक दिए गए हैं और स्थिर होकर लाल ही दिखला रहे हैं ।

- ४५—जीवनद—(जीवन + द) जीवन और जल देने वाला ।
 ४६—जम की दिशा—दक्षिण । द्विजेस—चंद्रमा ।
 ४७—झौर—गोध, गुच्छा । विषम—प्रेम ताप ।
 ४८—मैन—कामदेव । निसाकर—चंद्रमा, निसा अर्थात् सांत्वना करने वाला ।
 ४९—काग—कौआ के उड़ने या न उड़ने से प्रिय के आगमन का शकुन प्राप्त करना ।
 ५१—उराज—स्तन । घाव—नखत्रत से तात्पर्य है । बारन—बाल, हाथी ।
 ५२—हूजे—होइए । अनखाती—क्रुद्ध, अप्रसन्न । भिदी—छेदी, विद्ध ।
 ५३—आ घरी—आज तक । सगरी—सब । चहूँथ—मराठों का चौथे कर । सूरत—शक्क, स्वरूप, नगर विशेष ।
 ५४—अलका—कुबेर की राजधानी ।
 ५५—पखर—पखरैत, कवचधारी । मूल—नेह, नींव । आलम-पनाह—संसार के रक्षक । आलम—लोक । फना—नष्ट ।
 ५६—हरौल—(फा० हरावल) आगे की सेना, वैनगार्ड । धुर—ध्रुव, यहाँ गोलकुंडा के बादशाह से तात्पर्य है ।
 ५७—चौकी—थाना । मीडें—मलती रही । परेवा—पत्नी विशेष ।
 ५८—नजर—दया दृष्टि । मत्ता—मतवाली । नालबंदी—कर, चौथे । सलाह—संधि । रामद्वार—धर्मार्थ । आमिल—शासक ।
 ५९—कुलिश—वज्र ।
 ६०—अमा—अमावस्या । अधमा—दुष्टा, नीच ।

परिशिष्ट (ख)

पदों की अनुक्रमणिका

अ

	पद-संख्या	
अकबर पायो भगवन्त के	४०	स्फु०
अगर के धूप	२४३	
अचरज भूषण मन	१६२	
अजो भूतनाथ मुंडमाल	३३१	
अटल रहे हैं	१३४	
अतर गुलाब रस	११	बा०
अति मतवारे जहाँ	२४७	
अति सगपति बरनत	३३५	
अख गहि छत्रसाल	५	क०
अनत बरजि कछु	२४६	
अनहूबे की बात	१६६	
अन्योन्या उपकार जहँ	२२२	
अफजलखान का जिन्होंने	३१	बा०
अरि तिय भिल्लनि	१७०	
अरिन के दल	३६६	
अरु अक्रमातिसयोक्ति	३७३	
अरु अर्थ अन्तर न्यास	३७७	
अहमदनगर के थान	३०७	

आ

आए दरबार बिल्लाने	३८	
आगे आगे तरुन	३२६	
आजु यहि समै	३४१	
आजु भिषराज महाराज	३४६	
आदर घटत अवर्ण्य	४५	
आदि बड़ी रचना	२३७	
आन ठौर करनीय	२०१	
आनन्द सों सुन्दरिन	१६	
आन बात आरापिये	८०	
आन बात का आन में	७६	
आन बात को आन में	८८	
आन हेतु मों	३१४	
आनि मिल्यो अरि	३१०	
आपस की फूट ही ते	१६	स्फु०
आयो आयो सुनत	११६	
आवत गुसुलखाने	७६	

इ

इन्द्र जिमि जम्भ पर	५६	
इन्द्र निज हेरत	३०१	

उ

उतरि पलंग ते	६	बा०
उतै पातसाह जू के	२३	बा०
उत्तर पहार बिधनोल	१५६	

	पद-संख्या
उद्धत अपार तव	११४
उदित होत सिधराज	१२
उदैमान राठौर बर	२८५
उपमा अनन्वै कहि	३७१
उपमावाचक पद	३६
उमड़ि कुड़ाल में	३२८
उलदत मद अनुमद	३६ स्फु०

ऊ

ऊँचे घोर मंदर के	८ बा०
------------------	-------

ए

एक अनेकन में	२४०
एक कहै कलपद्रुम	७१
एक प्रभुता को	३८१
एक वचन में	१६५
एक बात को दै जहाँ	२४४
एक बार ही जहँ भयो	२४३
एक समै सजि	६०
एकहि के गुन	२७४
एते हाथी दीन्हे	१०

ऐ

ऐसे बाजिराज दैत	३७०
-----------------	-----

औ

और काज करता	२२७
और गढ़ोई नदी	१०८

	पद-संख्या
औरन के अनबाढ़े	२८१
औरन के जाँचे	३६२
औरन को जो	१४४
और नृपति भूषन	१२२
और हेतु मिलि	२५१
औरे के गुन	२८०
औरंग जो चढ़ि	३२०
औरंग यों पङ्क्तितात	१६७
औरंग सा इक	२३ स्फु०

अं

अंभा सी दिन	३४१
अंदर ते निकसी	१० बा०

क

कत्ता की कराकनि	७ बा०
कत्ता के कसैया	१२ स्फु०
करत अनादर बर्ग्य	४३
करन लगे औरै	२०३
करि मुह्मीम आप	३२४
कलियुग जलधि अपार	६१
कवि कहैं करन	७२
कविगन को	३४४
कवि तरुवर सिव	१२०
कमत में बार	२२६
कहनावति जो लोक	३१७
कहाँ बात यह	२०५

	पद-संख्या	
कहिवे जहँ सामान्य	१२१	
कहुँ केतकी कदली	२१	
कह्यो अरथ जहँ	२६४	
काजमही सिवराज	२७५	
कामिनी कंत सेां	१३०	
कारण अपूरे काज	१८६	
कारो जल जमुना	४६	स्फु०
काल करत कलिकाल	८६	
काहू के कहे	३२७	
कितहूँ बिसाल प्रवाल	२०	
किबले की ठौर	३७	स्फु०
कीरति को ताजी	१५५	
कीरति सहित जो	१४३	
कुछ न भयो	२१०	
क्रुद्ध फिरत अति	३५६	
कुन्द कहा पय वृन्द कहा	५१	
कुल सुलंक चित कूटपति	२८	
कुम्भकर्न असुर औतारी	२०	बा०
कूरम कमल कमधुज	१७	बा०
कूरम कबंध हाड़ा	१५	स्फु०
कंतिक देस दल्यो	२५	बा०
कै बहुते कै	७०	
कैयक हजार जहाँ	१४	बा०
कै यह कै वह यों जहाँ	७८	
कै वह कै यह कीजिए	२४८	
कोऊ बचत न	२८६	

	पद-संख्या
कोऊ बूझै बात	३११
कोकनद नैनी केलि	४४ स्फु०
को कविराज विभूषन	१५३
कोट गढ़ ढाहियतु	४० बा०
कोट गढ़ दै कै माल	२४२
को दाता को रन चढ़ो	३१३
कौन करे बस वस्तु कौन	१ बा०
कम सों कहि	२३८

ग

गजघटा उमड़ी महा	३३२	
गढ़न गंजाय गढ़ धरन	३५	बा
गढ़ नेर गढ़ चाँदा	११७	
गत बल खान दलेल	३५५	
गरब करत कत	४६	
गरुड़ को दावा	३३	बा०
गुनन सों इनहूँ	१२८	
गौर मिसिल ठाढ़ो	३०६	
गौर गरबीले अरबीले	२५६	
ज्ञान करन उपमेय	१०६	

घ

घटि बढि जहँ	६४	
घिरे रहे घाट बाट	५७	स्फु०

च

चकित चकता चौकि	४१	बा०
----------------	----	-----

	पद-संख्या	
चक्रवती चकता चतुरंगिनी	१३३	
चढ़त तुरंग चतुरंग	२५	
चमकती चपला न	८१	
चन्दन में नाग	४८	
चंद्राव चूर करि	२८	दा०
चाक चक चमू के	७	कु०
चाहत निरगुन सगुन	१३६	
चित्त अनचैन आसू	३५०	
चोरी रही मन में	२१	स्फु०

छ

छाय रही जितही	४२	
छूटत कमान और	२२	बा०
छूट्यो है हुलाम	१५०	

ज

जसन के रोज	१६८	
जहँ अभेद करि	६७	
जहँ उतकरप अहेत	२६७	
जहँ कैतष कुल	६५	
जहँ चित चाहे काज	२१६	
जहँ जोरावर सत्र	२५७	
जहँ दूरस्थित वस्तु	३३३	
जहँ प्रसिद्ध उपमान	४१	
जहँ बरनत गुन	२८४	
जहँ विरोध सेां	१८३	
जहँ मन बांझित अरथ	२१४	

	पद-संख्या
जहँ संगति ते	२६४
जहाँ आपनो रंग	२८७
जहाँ एक उपमेय	४४
जहाँ और के	२६८
जहाँ और को	६१
जहाँ करत उपमेय	३६
जहाँ करत हैं	२११
जहाँ काज ते	३४६
जहाँ जुगुति सों	८२
जहाँ दुहुँन की	३२
जहाँ दुहुँन को	६०
जहाँ दुहुँ अनुरूप	२०८
जहाँ परस्पर होत	४३
जहाँ प्रगट भूपन	१६१
जहाँ बड़े आधार	२१६
जहाँ श्लेष सों	३२१
जहाँ समता को	४१
जहाँ सरस गुन	२८२
जहाँ सूरतादिकन की	३३६
जहाँ हेतु अरु	११३
जहाँ हेतु चरचाहि	११४
जहाँ हेतु ते	११८
जहाँ हेतु पूरन	१८८
जहाँ हेतु समरथ	१६४
जाको बरनन कीजिये	३३
जा दिन चढ़त	३४ स्फु०

	पद-संख्या
जा दिन जनम	१३
जानि पति बागवान	१ स्फु०
जापर साहि तनै	१५
जाय भिरौ न	१७८
जाबलि बार सिंगार पुरी	२०६
जाहि पास जात	१०४
जाहिर जहान सुनि	२८३
जाहिर जहान जाके	१६२
जाहु जनि आगे	३३७
जिन किरनन मेरो	४८ स्फु०
जिन फन फुतकार	४७ वा०
जीत रही औरंग	२४१
जीत लई बसुधा	१२३
जीत्या सिवराज सलहेरि	२४ वा०
जुग घाक्यन को	१३७
जुद्ध को चढ़त	३६ स्फु०
जु यों होय	२६६
जे अरथालंकार ते	३५२
जेई चढ़ौ तेई	२३६
जेते हैं पहार	६६
जे सोहात सिवराज	३१६
जेहि थर आनहि	१११
जेहि निषेध अभ्यास	१७६
जे जयन्ति जे	२
जोर करि जेहैं	२७ वा०
जोर रुसियान को	१८ स्फु०

झूठ अरथ की

पद-संख्या

२७१

ड

डाढ़ी के रखेयन

४६ बा०

डका के दिये

४१ स्फु०

त

तखत तखत पर

१० स्फु०

तरनि जगत जलनिधि

३

तहवर खान हराय

२६ स्फु०

तहँ नृप नतधानी

२४

ता कुल में

६

तासे सरजा बिरुद भो

८

ता दिन अखिल

१६०

तिमिर बंस हर

६२

तिहुँ भुवन में

२३४

तुम भिवराज ब्रजराज

७५

तुरमती तहखाने तीतर

३६१

तुल्य जोगिता तहँ

१२४

तुही माँच द्विजराज

१५८

तू तो रात दिन जग

१७६

तेग बरदार

२

तेरी बास बैरी

१३ स्फु०

तेरी धाक ही ते

५

तेरी स्वारी माँझ

६

तेरे ही भुजन

८७

तेरो तेज सरजा

५४

	पद संख्या
तैं जयसिंहहिं गढ़	२१२
तो कर सों	२२३
तो सम हो	४०
त्रिभुवन में परसिद्ध	१४७

द

दच्छिन के सब	१४	
दच्छिन धरन धरि	२४५	
दच्छिन नायक एक	१८५	
दरबर दौरि करि	३८	बा०
दशरथ जू के	११	
दानघ आयो दगा	६६	
दान समै द्विज	३२६	
दारा की न दौर यह	३४	बा०
दारुन दइत हरनाकुस	३४८	
दारुन दुगुन दुरजोधन	१४८	
दाघा पातसाहन सों	२१	बा०
दारहि दारि मुरादहि मारि	२१७	
दिल्लिय दलन दबाय	३५४	
दिल्ली को हरौल भारी	५६	स्फु०
दीन दयालु दुनी	२६५	
दीपक एकावलि मिले	२३५	
दीपक पद के अरथ जहँ	१३१	
दुग्ग पर दुग्ग	४३	बा०
दुज कनौज कुल	२६	
दुरगहि बल पंजन	६३	
दुरजन दार भजि	१०१	

	पद-संख्या
दुधन सदन सब	१०५
देखत उँचाई उदरत	१०७
देखत सरूप को	१६७
देखत ही जीधन	४५ स्फु०
देत तुरीगन गीत सुनें	१४०
देवल गिरावते फिरावते	१८ बा०
देस दहबट्टि आयो	१० क०
देस दहपट्ट कीने	२१६
देसन देसन ते	२५
देसन देसन नारि	२५०
देह देह देह फिर पाइए	१७ स्फु०
दै दस पाँच	१६५
दौरि चढ़ि ऊँट	७ स्फु०
दौलति दिली की	२७६
द्रव्य क्रिया गुन	१८१
द्वारन मतंग दीसें	३३६

ध

धुष जो गुरुता न	३६८
-----------------	-----

न

नामन को निज	३४३
नैन जुग नैनन सों	५१ स्फु०
नृप सभा न में	२७७

प

पग रन में	२७२
पर के मन की जानि गति	३०८

	पद-संख्या	
पहिले कहिए बात	१७७	
पाय बरन उपमान	४७	
पावक तुल्य अमीतन को	३७	
पावस की एक राति भली	३०१	
पीय पहारन पास	७७	
पीरी पीरी दुखे	१७४	
पुनि यथासंख्य बखानिए	७७६	
पुन्नाग कहँ कहँ	२२	
पुहुमि पानि रवि	३८२	
पुनावारी सुनि कै	३६४	
पूरब के उत्तर	१८०	
पूरब पूरब हेतु	२३०	
पैज प्रतिपाल भूमि	७३	
पौरच नरेस अमरेस	४३	स्कु०
पंच हजारिन बीच	२०६	
पंपा भानसर आदि	२८८	
प्रथम बरनि जहँ	२३३	
प्रथम रूप मिटि	२८६	
प्रस्तुति लीन्हें होत	१६८	
प्रेतिनी पिसाचऽरु	४	बा०

फ

फिरंगाने फिकिरि औ	३२	बा०
-------------------	----	-----

ब

बचनन की रचना	१७२	
बचैगा न समुहाने	१६१	
बड़ी औड़ी उमड़ी	११	ब०

	पद-संख्या	
बड़ा डील लखि	१५७	
बदल न होहि	५	बा०
बन उपवन फूले	४७	स्फु०
बरनत हैं आश्रय	२२४	
बरनन कीजे आन	१५६	
बरने निरुक्तिहु हेतु	३७६	
बर्न्य अबर्न्यन को	१२६	
बलख बुखारे मुलतान	३०	स्फु०
बस्तु गोय ताको	८५	
बस्तुन को भासत	१४६	
बस्तु अनेकन को	२५२	
बहसत निद्रत हँसत	५८	
बाक्यन को जुग	१३५	
बाजि गजराज सिवराज	६	बा०
बाजि बम्ब चढ़ो	३२	स्फु०
बाजे बाजे राजे	५८	स्फु०
बानर बरार बाघ	३६०	
बाने फहराने घहराने	३	बा०
बाप ते बिमाल	४	स्फु०
बारह हजार असवार	११	स्फु०
बारिधि के कुम्भभष	३७	बा०
बासव से बिमरत	११०	
बिकट अपार भव	१	
बिना कछू जहँ	१५१	
बिना चतुरंग संग	२६५	
बिना लोभ को	१५४	

	पद-संख्या
बीर बड़े बड़े	१८६
बीर बिजेपुर के	६६
बीर बीर बर	२७
वेदर कल्याण दै	२१३
वेद राखे विदित	५१ बा०
बैठतीं दुकान लैके	१६ स्फु०
बैर कियो सिध	२५२
बंद कीने बलख	१४ स्फु०
ब्रह्म के आनन	२६०
ब्रह्म रचै पुरुषोत्तम	२२८

भ

भले भाई भासमान	४ स्फु०
भयो काज बिन	१८५
भयो होनहारो अरथ	३३०
भाखत सकल सिध जी	८४
भासति है पुनरुक्ति	३६५
भिन्न अरथ फिरि	३६३
भिन्न रूप जहँ	३०४
भिन्न रूप सादृश्य	३०६
भुज भुजगेस की	३ व०
भूपति सिधाजी तेरी	२०२
भूप सिधराज कोप	६ स्फु०
भूषन एक कवित्त	३६६
भूषन भनत जहँ	१८
भूषन भनि ताके	६

	पद-संख्या
भूपन भनि सब ही	१६४
भूपन सब भूपननि	३१
मेंटि सुरजन तोहि मेंटि	५६ स्फु०
भौंसिला भूप बली	६८

म

मच्छद् कच्छ में	१४२
मद् जल धरन	१३६
मन कवि भूपन	२३६
मनिमय मयल	१६
मलय समीर परलै	४६ स्फु०
महाराज भिवराज के	३४२
महाराज भिवराज चढ़त	२००
महाराज सिवराज तव वैरी	२१८
महाराज सिवराज तव सुघर	१०२
महाराज सिवराज तेरे	१७३
महावीर ता धंस में	५
मारि करि पतिसाही	४५ बा०
मानसर बामी हंस	२६८
मानो इत्यादिक बचन	१०६
मारे दल दुगल	८ स्फु०
मालवा उजैन भनि	४४ बा०
माँगि पठाया सिवा	२५४
मिलतार्हि कुरुख चकत्ता	३४
मुकतान की भालरनि	१७
मुंड कटत कहूँ	३५८

	पद संख्या
मेचक कवच साजि	३५ स्फु०
मेरु को सांनो कुबेर की संपति	६० स्फु०
मेरु सम क्वांटो	२७३
मौरंग कुमाऊँ और	४२ बा०
मौरंग जाहु कि जाहु	२४६
मंगन मनोरथ के	११६

य

या निमित्त यहई	३४७
या पूना में	३०८
यों कवि भूषण	२६३
यों पहिले उमराव	२६ स्फु०
यों सिर पै	२६१
यों सिधराज के	५२

र

रहत अक्क पै	३३ स्फु०
राखी हिन्दुधानी हिन्दुधान	४८
राजत अखंड तेज	१२ क०
राजत है दिनराज	४
राना भो चमेली	१६ बा०
रेखा ते इत इत नहिं	३१ स्फु०
रैया राय चम्पति	४ क०

ल

लसत बिहंगम बहु	२३
लाज धरौ सिध जू	२५८

	पद-संख्या
लिखे सुने अचरज	३६७
लिय जिति दिल्ली	३५७
लिय धरि मोहकम सिंह	३५६
लूट्या खानदौराँ जोरावर	१०३
लै परनाला सिवा	२०७
लोगन साँ भनि	३१२
लोमस की पेसी आयु	२७०

व

वह कीन्ह्यां ता	२६०
विज्रपूर बिदनूर सूर	३० बा०

श

शिव औरंगहि जिति	१३८
शिव प्रताप तथ	४४
शंकर की किरपा	२३१
श्रीनगर नयपाल जुमिला	११२
श्रीसरजा सलहेरि	२६२
श्रीसरजा सिव	१८२
श्रीसिवराज धरापति	२४ स्तु०

स

सक्र जिमि सैल	३६ बा०
सदा दान किरवान	७
सदृश वस्तु मैं मिलि जहाँ	३००
सदृश वस्तु में मिलत पुनि	३०२

	पद-संख्या	
सदृश वाक्य जुग	१४१	
सपत नगेस चारों	५२	बा०
सबन के ऊपर ही	१५	बा०
सम छविवान दुहून	१४६	
सम शोभा लखि	७४	
सम सत्रहसै तीस	३८०	
सयन मैं साहन	२६१	
सहज सलील सील	२२१	
साइति लै लीजिए	२६३	
साजि चतुरंग बीर	२	बा०
साजि चमू जनि	२६	बा०
साजि दल सहज	२०	स्फु०
साभिप्राय विशेषननि	१६०	
सामान्य और विशेष	३७८	
सारस से सूबा	२६	स्फु०
सासता खाँ दक्खिन को	३२३	
सासता खाँ दुरजोधन सेां	३५	
साहि के सपूत रनसिंह	४६	बा०
साहि के सपूत सिवराज	५०	बा०
साहि तनय तेरे	३२०	
साहि तनै सरजा के भय सेां	८६	
साहि तनै सरजा सिव के गुन	२०४	
साहि तनै सरजा समरथ	२६६	
साहि तनै सरजा की कोरति सों	२१५	
साहि तनै सरजा सिवा की सभा	५६	
साहि तनै सरजा तब द्वार	४०	

	पद-संख्या	
साहि तनै सरजा खुमान सलहेरि पास	१७	
साहि तनै सरजा सिवा के सनमुख	२१६	
साहि तनै सिवराज की	१८७	
साहि तनै सिवराज ऐसे देत	३४०	
साहि तनै सिवराज भूपन सुजस	६५	
साहि तनै सिव साहि निसा में	१००	
साहि तनै सिव तेरो सुनत	१६३	
साहिन के उमराव	३१५	
साहिन के सिच्छक	६६	
साहिन मन समरत्थ	६२	
साहिन सो रन	१४५	
साहि मिरताज श्री	१२	बा०
साहू जी की साहिबी	२६	स्फु०
साँगन सो पोल	६	क०
साँच के न मानै देव	१६	बा०
साँचो तेसो बरनिण	३२५	
सिव चरित्र लखि	२६	
सिव सरजा को जगत में	२६७	
सिव सरजा जी सुधि करौ	३१८	
सिव सरजा के कर लसै	८३	
सिव सरजा के बैर के	२७८	
सिव सरजा तव सुजस में	३०३	
सिव सरजा तव हाथ के	२२०	
सिव सरजा तव दान के	१३२	
सिव सरजा भारी	१२६	
सिव सरजा सो	२२५	

	पद संख्या
सिवाजी खुमान तेरो	२६६
सिवाजी खुमान सलहेरि	२२६
सिवा बैर औरंग	२१६
सिंधु के अगस्त	३ स्फु०
सिंह थरि जाने	६३
मीता संग सोभित	१६६
सुकविनहूँ की	३०
सुजस दान अरु	२३२
सुनि सु उजीरन	६४
सुन्दरता गुरुता प्रभुता	२१६
सुविनोक्ति भूपन	३७४
सु बिसेष उक्ति	३७५
सुमन में मकरन्द	२२ स्फु०
सूने हूँ बेसुख	५२ स्फु०
सूचन सार्जि पठावत	३३४
सूख निरानंद वहादर खान	२६ बा०
सूर सिरामनि सूर	१६३
सेवा की बड़ाई	३६ बा०
सैयद मुगल पठान	२७ स्फु०
सोभमान जग	१५२
सौंधे को अधार	१२ बा०
सौंधे भरी सुखमा	५० स्फु०
संक आन को	८८
स्तुति में निन्दा	१७४
स्वर समेत अच्छर	३५३

ह

हर्यों रूप इन	३४५	
हाथ तसबीह लिप	३८	स्फु०
हित अनहित को	१२७	
हिन्दुनि सों तुरकिनि	१६६	
हीन होय उपमेय	४६	
हेतू अनत ही	१६६	
हेतू अपन्हृत्यो बहुरि	३७२	
है दिढ़ाइवे जोग	२६२	
हैबर हरट्ट साजि	६	क०

परिशिष्ट (ग)

व्याख्यायुक्त अलंकारों का अनुक्रम

अक्रमातिशयोक्ति Hyperbole with cause and effect occurring simultaneously—जहाँ लोकसीमा का उल्लंघन करके वर्णन किया जाय वहाँ अतिशयोक्ति है। इसी का यह एक भेद है। जहाँ कारण और कार्य एक साथ होते हुए वर्णित हों वहाँ अक्रम अर्थात् क्रमरहित अतिशयोक्ति हुई। जैसे बाण छूटने के साथ साथ तुर्कों के प्राण छूटे अर्थात् मृत्यु-कार्य का कारण बाण का लगना है, पर उसके पहिले ही कारण के आरंभ के साथ कार्य हो गया कहा गया है। ११३—४

अतद्गुण Non-borrower साथ रहते हुए भी जब एक का कुछ अस्तर दूसरे पर होता न दिखलाया जाय, जैसे श्वेत कीर्ति ने स्त्रियों की आँखों का अंजन हरण किया, पर उसकी स्याही का उस पर कुछ भी अस्तर न हुआ। २६४—७

अतिशयोक्ति Hyperbole— १०६—२०

अत्यन्तातिशयोक्ति Hyperbole with sequence-occurring before cause—हेतु के पहिले ही कार्य का हो जाना। जैसे, दारिद्र्य को नष्ट कर शिवाजी के पास कोई याचना करने आता है, अर्थात् धन की

ॐ ये संख्याएँ शि-भूषण के पदों की संख्याएँ हैं।

याचना करने के पहिले ही कार्य हो जाता है और
माँगते समय वह दरिद्र नहीं रह जाता । ११८—२०

अन्युक्ति Exaggeration—जहाँ कोई वर्णन बहुत बढ़ा कर
किया जाय, अर्थात् अद्भुत और अतथ्यपूर्ण हो जाय ।
जैसे, हाथियों के मद में पहाड़ डूब जाते हैं । ३३६—४२

अधिक Exceeding—जहाँ आश्रय का भारी आधार से
भी बढ़ कर होना कहा जाय । जैसे शिवाजी के हाथ
में रहने वाला यश सीनों लोक में भी नहीं
समाता । २१६—२१

अनन्वय Comparison Absolute—जहाँ उपमेय ही
उपमान हो अर्थात् एक ही वस्तु दोनों रूप में कही
जाय । जैसे, हे शिवाजी, आप के समान आप ही हैं ।
यहाँ शिवाजी ही उपमान और उपमेय दोनों हैं । ३६—४०

अनुगुण Enhancer—जहाँ साथ होने से गुण का
आधिक्य ही दिखलाया जाय । जैसे, काजल-युक्त
आँसू के मिलने से यमुना का सहज श्याम रंग और
भी श्याम होता है । २६८—६

अनुज्ञा Acceptance—जहाँ दोष में भी अच्छा गुण देख
कर उसकी चाह की जाय । जैसे, महाराज शिवराज
का हमें भिखारी कीजिए । यहाँ याचक होना यद्यपि
दोष है, पर उस याचना से बहुत अधिक धन मिलने
के कारण भूषण जी इस दोष की भी वांछा कर
रहे हैं । २८२—३

अनुमान Inference—जहाँ कार्य देख कर कारण का या
कारण से कार्य का अटकल लगाया जाय । जैसे,
पति की घबड़ाहट देख कर उसके दक्षिण के
सूवेदार नियुक्त होने का अनुमान करना । ३४६—५१

अन्योन्य Reciprocal—जहाँ दो वस्तुओं के गुण का एक दूसरे के द्वारा उत्पन्न होना दिखलाया जाय। जैसे, दान से हाथ की गोभा और हाथ से दान की गोभा है।

२२२—३

अपन्हुति Concealment—जहाँ उपमेय का निषेध करके उपमान का स्थापन किया जाय। इसके शुद्ध, हेतु, पर्यस्त, भ्रान्त, कैतव और त्रैक त्र्यः भेद हैं।

८०—६७

अप्रस्तुतप्रणामा Indirect Description—जहाँ अप्रस्तुत वस्तु का वर्णन करते हुए प्रस्तुत का बोध कराया जाय। इसके पाँच भेद सारूप्य-निबन्धना, सामान्य-निबन्धना, विशेष-निबन्धना, हेतु निबन्धना तथा कार्य-निबन्धना हैं। भूषण ने केवल अंतिम ही के उदाहरण दिए हैं। इसमें इष्ट कारण का वर्णन कार्य के कथन द्वारा किया जाता है। शिवाजी के वेर काने का क्या फल हुआ यह कहकर उनके प्रभुत्व की वर्णना की गई है। तीसरे में शिवाजी की गुणग्राहकता का बोध कराया गया है।

१६८—७१

अर्थान्तरन्यास Transition—जहाँ एक कथन का दूसरे कथन द्वारा समर्थन किया जाय। इसमें सामान्य बात का विशेष बात से और विशेष का सामान्य से, साधर्म्य या वैधर्म्य द्वारा, समर्थित होने से चार भेद होते हैं। २६५ में सामान्य बात 'वीरों के हिम्मत हथियार होत आई है' का समर्थन श्री-रामचन्द्र, अर्जुन तथा शिवाजी के कृत्यों से किया गया है। दूसरे में विशेष बातों का वर्णन कर उसका समर्थन इस साधारण बात से किया गया है कि

‘ यह तो शिवाजी की सदा ही की रीति है । ’ ये दोनों उदाहरण साधर्म्य द्वारा समर्थित हुए हैं । २६४—६
 अवज्ञा Indifference—जहाँ किसी के साथ होने से उसके गुण या दोष का असर न हो । जैसे, दूसरों के दरबार में जाने या न जाने से कोई फल नहीं है । २६०—१

असंगति Disconnection—असंगति तीन प्रकार की होती है । प्रथम—जहाँ कारण एक स्थान पर और कार्य दूसरे स्थान पर होता दिखलाया जाय । जैसे, शिवाजी के घोड़े पर सवार होने से शत्रु की गरदन झुक जाती है । यहाँ बोझ घोड़े पर पड़ा पर गर्दन शत्रु की दबी । द्वितीय—जहाँ कार्य का होना उचित है वहाँ न हो कर दूसरे स्थान पर हो । जैसे, शिवाजी की तलवार से शत्रु-स्त्रियाँ डर गई । शत्रु पुरुषों का डरना उचित है, पर स्त्रियों का डरना दिखलाया गया है । तृतीय—जहाँ कुछ कार्य करते हुए कोई दूसरा कार्य हो जाय ! जैसे, शिवाजी औरंगजेब को सुख देने दिल्ली गए, पर उसे दुख ही दिया । १६६—२०४

असंभव Unlikely—यदि कोई अनहोनी बात हुई सी मालूम हो तो वह असंभव अलंकार माना जाता है । जैसे, शिवाजी के एक ही रात्रि में सब दुर्ग ले लेने का समाचार सुनकर औरंगजेब पश्चात्ताप कर रहा है । १६६—८

आक्षेप Hint—भूषण ने आक्षेप की दो परिभाषाएँ की हैं । पहिला यह है कि जहाँ कुछ कह कर उसका वाद को निषेध किया जाय । जैसे, लड़ना हो तो

लड़ो, पर लड़ने पर बचोगे नहीं। दूसरा लक्षण येा दिया है कि जहाँ निषेध का आभास मात्र हो, प्रत्यक्ष में न कहा गया हो। जैसे, शिवाजी को दमन करने पर नियुक्त हो कर मुगल-सेनानी स्पष्टतः जाने का निषेध न करता हुआ केवल उसका आभास मात्र देता है कि यदि कुछ दिन बाद शिवाजी पर भेजे जायँ तो बीच में बहुत कुछ बादशाह का कार्य करेंगे।

१७७—८०

उत्प्रेक्षा Poetical fancy—जहाँ विभिन्नता का ज्ञान दिखलाते हुए एक बात की दूसरी में संभावना की जाय। भूषण ने उत्प्रेक्षा के चार भेदों के केवल उदाहरण दिए हैं—वस्तु, हेतु, फल तथा गम्य। इसके अतिरिक्त सापेक्षोत्प्रेक्षा भी होती है। जिसमें एक वस्तु दूसरी वस्तु के समान दिखलाई जाय वह वस्तु-प्रेक्षा है। इसके उक्तविषया तथा अनुक्तविषया दो भेद हैं। भूषण जी ने केवल प्रथम ही का उदाहरण दिया है। जैसे, शिवाजी ने शत्रु को ऐसा पढ़ाड़ा जैसे सिंह गजराज का। कारण न होते हुए भी उसे उस कार्य का हेतु मानना हेतु-प्रेक्षा है। इसके तथा फलोत्प्रेक्षा के सिद्ध-विषया तथा असिद्ध-विषया दो दो भेद हैं। जैसे, शिवाजी दिल्ली से आई सेना को लूट लेते हैं मानों औरंगजेब कर स्वरूप घाड़े, हाथी, सेनापतियों के साथ कर भेजता रहता है। जिस कारण का जो वास्तविक फल नहीं है उसे उसका फल माना जाय तो फलोत्प्रेक्षा हुई। जैसे, शत्रु आठों पहर शिवाजी का नाम डर से लेते रहते हैं मानों मुक्ति के लिए

स्लेत्त भी महादेवजी का नाम-जप कर रहे हैं । शिवाजी का नाम लेना सिद्ध विषय है, पर फल मुक्ति की याचना ठीक नहीं है । उत्प्रेक्षा-वाचक मानों आदि शब्द जहाँ न हों वह गम्योत्प्रेक्षा है । जैसे, छोटे छोटे किलेदार नदी हैं, शिवाजी भारी दुर्गाध्यक्ष समुद्र हैं, जिसमें सब आकर मिल जाते हैं ।

६८—१०८

उदात्त Exalted—जहाँ संभाव्य पेश्वर्य का बड़ा चढ़ा वर्णन हो या किसी के चरित्र का विशेष महत्त्व दिखलाया जाय । जैसे, शिवाजी के कवि राजाओं की तरह रहते हैं अथवा पूना में मत टिकना, वहीं शायस्ता खाँ की शिवाजी ने दुर्दशा की थी ।

३३५—८

उन्मीलित Discovered—सादृश्य होते हुए किसी कारण के उल्लेख से भिन्नता प्रकट हो । जैसे, शिवाजी के यश में हंस और चमेली बिलकुल मिल से गए हैं, पर बोली तथा गंध ही से उनका पता चलता है ।

३०२—३

उपमा Simile—दो वस्तुओं में जहाँ समानता दिखलाई जाय वहाँ उपमालंकार होता है । इसके चार अंग होते हैं ।

३२—५

(१) उपमेय Subject compared—वर्ण्य, उपमा योग्य, जिसकी उपमा दी जाय ।

३३

(२) उपमान Object with which comparison is made—जिस वस्तु से उपमा दी जाय । जैसे, कमल से नेत्र में कमल उपमान और नेत्र उपमेय है ।

३३

(३) वाचक Word implying comparison—उपमा
को प्रकट करने वाले शब्द । जैसे समान, से आदि ।

(४) धर्म Quality-compared—दोनों में दिखलाया गया
समान गुण ।

उपमेयोपमा Reciprocal Simile—जहाँ उपमेय
और उपमान परस्पर समान दिखलाए जायें ।
जैसे शिवाजी का तेज सूर्य के समान है और सूर्य
शिवाजी के तेज समान है ।

५३—४

उल्लास Sympathetic Result—जब एक के गुण या
दोष के प्रभाव से दूसरे में गुण या दोष का होना
दिखलाया जाय । यह उल्लास चार प्रकार का होता
है । गुण से गुण तथा दोष से दोष का होना सम
और गुण से दोष तथा दोष से गुण का होना
विषम कहलाता है ।

२७४

(१) गुण से दोष—शिवाजी के 'हिन्दुवानी' की रक्षा करते
भी कभी कभी अमरसिंह से एकाध हिन्दू मारे
जाते हैं ।

२७५

(२) दोष से गुण—मुगल शिवाजी से लड़ने आते हैं, पर
उससे लाभ शिवाजी ही का होता है ।

२७६

(३) गुण से गुण—यशस्वी शिवाजी का गुण गान कर
अन्य राजदरबारों में कविगण प्रतिष्ठा पाते हैं ।

२७७

(४) दोष से दोष—शिवाजी की जघ्रता से औरंगजेब के गढ़
कोने जाते हैं और बजोरगण पिटते हैं ।

२७८

उल्लेख Representation—एक वस्तु का अनेक रूपों में
जहाँ वर्णन होय । इसके दो भेद होते हैं ।

७०

(१) गुणों के अनुसार जब अनेक लोग एक व्यक्ति को कई
रूपों में देखें । जैसे, सबका चितचाहा देने में एक

उसे कल्पद्रुम, सौंदर्य के कारण दूसरा उसे कामदेव
और तीसरा उसे युद्ध में नृसिंह बतलाता है । ७१

(२) जब एक ही व्यक्ति को अनेक जन अनेक रूप में देखें ।
जैसे, शिवाजी को कवि कर्ण, धनुर्धर अर्जुन तथा
एदिल कहरो कहता है । ७२—३

एकावली Necklace—जहाँ पूर्वकथित के प्रति उत्तरोत्तर
वस्तुओं का विशेषण भाव से वर्णन इस प्रकार
किया जाय कि अर्थ की पंक्ति सी हो जाय । इस
प्रकार के वर्णन के स्थापन तथा निषेध से इस
अलंकार के दो भेद होते हैं । भूषण ने केवल प्रथम
भेद दिया है । उदा०, तीनों लोक में नरलोक, नर-
लोक में तीर्थ, तीर्थों की समाज में महिमा, महिमा
में राज्यश्री और राज्यश्री शिवाजी में शोभित है । २३३—४

कारणमाला Garland of Causes —जहाँ किसी कारण
से उत्पन्न कार्य अन्य कार्य का कारण बतलाया
जाय और इसी प्रकार क्रमशः कई कारण कार्य
कथित हों । इसे गुम्फ भी कहते हैं । जैसे, जंकर की
कृपा से सुबुद्धि, सुबुद्धि से दान, दान से पुण्य और
पुण्य से शिवाजी का उत्कर्ष हुआ । २३०—२

काव्यार्थापत्ति Necessary conclusion—‘जब वैसा हो
गया तब ऐसा क्यों न होगा’ कह कर जहाँ वर्णन
हो । जैसे, जब शिवाजी ने दिल्ली के सम्राट् को
परास्त कर दिया तब तुम्हारी उसके आगे क्या
चलेगी ? २६०—१

काव्यलिंग Poetic reason—जहाँ युक्ति के साथ किसी
बात का समर्थन किया जाय । जैसे, उत्तर, पूर्व तथा

पश्चिम के राज्यों को विजय कीजिए, पर दक्षिण के
नाथ शिवाजी से युद्ध कर बाधरे न कहलाइए । २६२—३
कैतवापन्हुति Concealment dependant on decep-
tion—जहाँ एक के बहाने दूसरे का कार्य दिख-
लाया जाय । मुगल लोग वास्तव में शिवाजी से
डर कर युद्ध में जाना नहीं चाहते थे इसलिए मक्का
जाने के बहाने नर्मदा नदी उतरते थे । १५—१६

गम्योत्प्रेक्षा Incomplete Poetical Fancy—जहाँ
उत्प्रेक्षा-वाचक मानों आदि शब्द न दिए गए हों ।
जैसे, गढ़पति शिवाजी समुद्र हैं और क़ांटे क़ांटे
गढ़पाल नदी नाले हैं, जो उसमें आ मिलते हैं । १०६—८

चंचलातिशयोक्ति Hyperbole depending on effect
following the cause immediately—कारण
की बात निकालते ही कार्य हो जाय । जैसे, शिवाजी
का आना सुनते ही शत्रुनारियों के अश्रुप्रवाह से
गाँव ही डूब जाता है । ११५—७

चित्र Manifold—जिसके लिखने या सुनने में किसी
प्रकार की विचित्रता हो । शिवरात्र-भूषण में जो
उदाहरण दिया गया है उसमें यही विचित्रता है
कि उसे जहाँ से पढ़िए एक सवैया पूरी बनती
जाएगी । ३६७—८

छेकानुप्रास Single Alliteration—स्वर के साथ अक्षरों
की दो बार आवृत्ति हो । जैसे, दिल्लीय दलन,
सूरति सहर । ३५३—४

छेकापन्हुति Concealment dependant on art-
fulness—जहाँ सत्य बात छिपाकर दूसरे बात की
शंका की जाय । जैसे, तिमिर (अंधकार और

तैमूर लंग) वंश को नष्ट करने वाला आया है।
एक के शिवाजी कहने पर दूसरी उसे चुप कराती
हुई कहती है कि नहीं सूर्य। १२—४

छेकोकि Ambiguous Speech—जहाँ प्रचलित उक्ति से
समर्थन करते हुए कोई कहावत कही जाय। जैसे,
शिवाजी के पसंद ही की कविता उसी प्रकार रस-
मय है जिस प्रकार ईश्वर पर चढ़ाए गए फूल ही
उत्तम हैं। ३१७—२०

तद्गुण Borrower—जहाँ अपना गुण त्याग कर दूसरे
का ग्रहण किया जाय। जैसे, सूर्य-रथ के पहिए
मणियों की ज्योति से अनेक रंग बदलते रहते हैं। २८७—८

तुल्ययोगिता Equal Pairing—जहाँ उपमेयों या उप-
मानों का एक ही धर्म कहा जाय। यह तीन प्रकार
का होता है।

(१) जब एक ही धर्म कई वस्तुओं में कहा जाय। जैसे,
शिवाजी का प्रताप, मरहट्टों के चित्त में चाव तथा
तुर्क लोग आकाश-विमान में चढ़ते हैं।

(२) जब उपमानों के गुण एक ही में कहे जायँ। जैसे,
शिवाजी की भारी भुजाओं ने पृथ्वी का भार
धारण कर लिया जिससे शेषनाग तथा दिगपाल-
गण निश्चित होगए।

(३) जहाँ हित और अहित की बात एक ही धर्म कहे
जाने पर निकले। जैसे, शिवाजी अपने गुणों से
मित्रों तथा शत्रुओं को बाँध रखते हैं। १२४—८

दीपक Illuminator—जहाँ उपमेय तथा उपमान का
एक ही धर्म कहा जाय। जैसे, रात्रि की चन्द्रमा से
और हिन्दुओं की शिवाजी से शोभा है। १२६—३०

दीपकावृत्ति Illuminator with repetition—जहाँ एक अर्थ वाले पद की कई बार आवृत्ति हो। जैसे, शिवाजी के दानजल से नदियाँ बढ़ती हैं और गज के दान (मद्) से नद उमड़ते हैं। अर्थ की आवृत्ति से तथा पद और अर्थ की आवृत्ति से इसके दो और भेद होते हैं।

दृष्टांत Exemplification—जहाँ उपमेय तथा उपमान के साधारण धर्मों का बिंब प्रतिबिंबभाव से वर्णन किया जाय। जैसे शिवाजी ही औरंगजेब को जीत सकते हैं, जिस प्रकार सिंह ही हाथी पर चोट कर सकता है। १३७—४०

निदर्शना Illustration—भूषण ने यह परिभाषा चंद्रालोक के अनुसार लिखा है। दो समान वाक्यों में अर्थ का ऐक्य आरंभित करना। जैसे, जिस प्रकार परशुराम या बलराम जी पहिले पृथ्वी के रत्नक हुए हैं उसी प्रकार आजकल शिवाजी हैं।

इसके तीन भेद किए गये हैं—

- (१) प्रथम निदर्शना—जब उपमान का गुण उपमेय में स्थापित किया जाय। जैसा पूर्वाक्त उदाहरण है।
- (२) द्वितीय निदर्शना—जब दो वाक्यों का एक ही अर्थ हो। जैसे, शिवाजी का जो कीर्तियुक्त प्रताप है उसे हम सूर्य-तेज के बीच चाँदनी समझते हैं।
- (३) तृतीय निदर्शना—कार्य देखकर फल कइना। बाद-शाहों से लड़ना तथा कवियों को प्रसन्न करना शिवाजी के लिए सहज विचार मात्र है चाहे वह औरों के लिए जंजाल ही क्यों न हो। १४१—k

निवृत्ति Derivative meaning—जहाँ शब्दों का युक्ति-युक्त पर मनमाना अर्थ किया जाय। जैसे, शिवाजी ने कवियों के दारिद्र्यरूपी हाथी को मार डाला इस लिए सरजा (सिंह) कहलाए। ३४३—६

परिकर Insinuator—जहाँ विशेषण किसी खास मतलब से प्रयुक्त हो। जैसे, सूर्यवंशी शिवाजी को स्लेच्छ-कुल-चंद्र कैसे जीतेगा ? १६०—३

परिकरांकुर Passing Insinuation—जहाँ विशेष्य का प्रयोग किसी खास मतलब से किया जाय। जैसे, अब अंधकासुर रूपी औरंगजेब शिवाजी को कैसे जीतेगा ? शिवजी ने अंधक दैत्य को मारा था, इसलिए शिवजी विशेष्य शब्द साभिप्राय है। १६०, १६४

परिवृत्ति Exchange—जहाँ कुछ लेकर देना दिखलाया जाय। जैसे, शिवाजी महादेव जी को मुंडमाल देकर यश का पहाड़ लेते हैं। २४४—५

परिणाम Commutation—जहाँ उपमेय का कार्य उपमान द्वारा किया जाना अथवा दोनों का एक रूप होकर करना दिखलाया जाय। रूपक से इसमें यही भेद है कि उपमान द्वारा कार्य होता दिखला कर विशेष चमत्कार उत्पन्न किया जाता है। जैसे, शिवाजी के यश रूपी चंद्र ने चंद्रमा की कांति हर ली। ६७—६

परिसंख्या Special Mention—जहाँ एक बात का किसी स्थान पर निषेध कर उसका दूसरे स्थान पर होना दिखलाया जाय। जैसे, शिवाजी के राज्य में चोरी नहीं रह गई और रह भी गई तां गुणियों में जो अपने गुणों से दूसरों का चित्त चुरा लेते हैं। २४६—७

पर्यस्तापहृति Concealment by Transposition—

जहाँ एक वस्तु का धर्म उसमें न बतला कर दूसरे में दिखलाया जाय। जैसे, कलियुग में तुर्कों को मृत्यु नहीं खाती प्रत्युत् शिवाजी की तलवार। ८५—८७

पर्याय Sequence—(१) जहाँ एक में अनेक वस्तु का आश्रित होना अथवा (२) एक वस्तु का अनेक में क्रमशः आश्रय लेना दिखलाया जाय। इस प्रकार पर्याय के दो भेद हुए। उदा० (१) जिन महलों में पहिले मृदंग बजते थे वहाँ अब हाथी, सिंह गर्जते हैं। (२) विजयश्री सब को छोड़कर औरंगजेब में आरही थी, पर उसे भी अब छोड़कर शिवाजी के पास चली आई। २४०—३

पर्यायोक्ति Periphrasis -वचन-चानुरी से जहाँ वर्णनीय वस्तु घुमा फिरा कर कही जाय। जैसे, शिवाजी के क्रोध के डर से आगरे की मुसलमानियों के मस्तक में सिंदूर दिखलाई पड़ता है। यहाँ शिवाजी का आतंक वर्णनीय है जिसे यह कह कर दिखलाया गया है कि दूर देश की यवनी भी हिंदू-स्त्री के सौभाग्य का चिन्ह धारण करने लगीं। १७२—३

पिहित Concealed—जहाँ दूसरे का रहस्य जान कर उसे किसी क्रिया द्वारा उस पर प्रकट कर दिया जाय। जैसे, नियम विरुद्ध खड़ा करने से औरंगजेब की नीति की बात जान कर शिवाजी ने सलाम न करके उस पर अपना क्रोध प्रकट किया। ३०८—१०

पुनरुक्तिवदाभास Apparent Tautology—जहाँ पुनरुक्ति दोष का आभास मिले, पर वास्तव में वह

दीप न हो । जैसे, उदाहरण में दल सैन, रवि सूर्य पुनरुक्ति ज्ञात होती है पर है नहीं । ३६५—६

पूर्वरूप Reversion—जहाँ एक का गुण लेकर फिर उसे द्वेद अपना पूर्व रूप धारण कर लेना वर्णन किया जाय । जैसे, पवित्र ब्रह्म-वाणी कलि के कविराजों के कारण भ्रष्ट हो चली थी, पर शिवाजी के चरित्र रूपी तालाब में अवगाहन कर पुनः पवित्र होगई । इसका एक भेद यह और होता है कि जिस समीपवर्ती का गुण लेना कहा गया हो उसके दूर करने पर भी वह गुण दूसरे के कारण विद्यमान रहे । जैसे, दीपक बुझा देने पर भी मणियों के कारण उजाला बना रहा । २८६—६३

प्रतिवस्तुपमा Typical Comparison—जहाँ उपमेय तथा उपमान का साधारण धर्म अलग अलग समान वाक्यों में कहा जाय । उदा०, जैसे ग्रीष्म के सूर्य में तेज विद्यमान है वैसे ही शिवाजी में दिल्ली-दलन का हठ मौजूद है । १३५—६

प्रतीप Converse—इस शब्द का अर्थ उलटा है अर्थात् जहाँ उपमेय को उपमान के समान न कहकर उलटे उपमान को उपमेय के सदृश कहा जाय । उपमेय तथा उपमान की समानता में आधिक्य या कमी के अनुसार पाँच भेद होते हैं । ४१—५२

(१) जहाँ उपमान उपमेय के समान कहा जाय । यथा, जिस प्रकार शिवाजी ने अपनी कीर्ति फैलाई थी, उसी प्रकार चन्द्र ने अपनी चाँदनी फैलाई । ४१—४२

(२) जहाँ उपमान की समानता न कर सकने पर उपमेय तिरस्कृत हो । यथा, हे शिवाजी ! सूर्य के समान

तुम्हारा प्रताप शत्रु का पानी सोख लेने वाला है
पर गर्व क्यों करता है ? बड़वानल तरे समान है । ४३—४४

(३) जहाँ उपमान ही उपमेय की समानता न कर सकने
पर तिरस्कृत हो । जैसे, चाँदनी क्या गर्व करती है जब
शिवाजी की कीर्ति इतनी चारों ओर फैली हुई है । ४५—४६

(४) जहाँ उपमान उपमेय के बराबर न हो । जैसे,
शिवाजी के यश को शेषनाग के समान कैसे
कहें ? ४७—४८

(५) जहाँ उपमेय उपमान के सामने व्यर्थ मालूम हो ।
जैसे, शिवाजी के सुयश के आगे शेषनाग कुछ
नहीं हैं । ४९—५०

प्रत्यनीक Rivalry—बलवान शत्रु पर जोर न चलने से उस
के साथ वालों पर चाँट करना जहाँ दिखलाया जाय ।
यथा, हिन्दू-पति शिवाजी से जब कुछ वश न चला
तब औरंगजेब गरीब हिन्दुओं को कष्ट देने लगा । २५७—६

प्रहर्षण Successful—मनचाहें अर्थ से जहाँ अधिक
प्राप्ति दिखलाई जाय । जैसे, चाँदी माँगने पर सोना
और घोड़ा माँगने पर हाथी पाते हैं । २१४—५

प्रौढ़ाक्ति Bold assertion—उत्कर्ष का कारण न रहने पर
भी उसकी उसमें कल्पना कर ली जाय । यथा,
मानसरोवर में रहने ही के कारण वहाँ का हंस वंश
शिवाजी के यश की समता नहीं कर सकता । २६७—८

प्रश्नोत्तर Question and Answer—जहाँ किसी एक के
प्रश्न तथा दूसरे के उत्तर में कुछ वर्णन किया जाय ।
यथा, कौन दाता है और कौन संसार का पातन
करने वाला है ? भूषण उत्तर देता है कि कृष्ण
भगवान् के अवतार महाराज शिवाजी । ३११—३

फलोत्प्रेक्षा—देखिए उत्प्रेक्षा ।

१०४—५

भाषिक Vision—जहाँ भूत तथा भविष्य काल की बातें वर्तमान काल में वर्णित हों । जैसे, आज भी मुंड-माता लेकर महादेव जी प्रसन्न होते हैं और अब तक रहेले सूर-लोक की ओर चले जा रहे हैं । ३३०—२

भाषिक इवि Vivid Description—जहाँ दूर पर स्थित वस्तु का ऐसा वर्णन किया जाय कि वह प्रत्यक्ष सा सामने हो । जैसे, दिल्लीपति दिन रात यही देखता रहता है कि शिवाजी ने सूरत घेर रखा है । ३३३—४

भेदकातिशयोक्ति Hyperbole depending on distinction जहाँ सब से भिन्न कहकर किसी बात का वर्णन किया जाय । यथा, सभी स्थानों के राजे औरंगजेब को कर देते हैं केवल एक राजा शिवाजी ही की इससे भिन्न गति है । ११०—२

भ्रम Mistake --जहाँ सादृश्य के कारण कवि-कल्पना द्वारा एक बात में दूसरी बात का भ्रम उत्पन्न किया गया हो । यथा, पहाड़ों के पास जाते हुए भी स्त्रियाँ अपने पति को मना करती हैं, उन्हें भ्रम होता है कि वहाँ भी शिवाजी के सिपाही न हों । यह उदाहरण ठीक नहीं है । ७६—७७

भ्रान्तापह्नुति Concealment depending upon a mistake—जहाँ भ्रम के पैदा होते ही वह दूर कर दिया जाय । जैसे, शिवाजी के डर से भाग कर मेरु पर्वत में लुके हुए शत्रु “ शिवाजी ” का नाम सुनते ही भागने की तैयारी करते हैं तब यत्नगण उन्हें धैर्य देते हुए कहते हैं कि ‘ यह सरजा शिवाजी नहीं है, महादेव हैं । ’ ८८—९०

मालादीपक Serial Illuminator—दीपक तथा एका-
वली अलंकारों के मिलने से यह अलंकार
बनता है। यथा, साधुओं के सत्संग ने शिव भक्ति
को तथा शिव जी की भक्ति ने भूषण के मन को
जीत लिया है। २३५—६

मालोपमा Serial Simile—जहाँ एक उपमेय के कई
उपमान दिए जायँ। जैसे, शिवा जी की म्लेच्छवंश
पर वैसी ही धाक है जैसी शेर की हाथियों पर,
चीता की मृगों पर और परशुराम जी की सहस्रा-
जुन पर थी। ४४—६

मिथ्याध्यवसित False supposition—जहाँ झूठे साध्य का
अन्य झूठे साधन से समर्थन किया जाय। यथा,
शिवाजी का पैर रण में वैसा ही चल है जैसे
अंगद का था और उनकी प्रतिज्ञा भी मेरु पर्वत,
ध्रुव तथा पृथ्वी के समान चल है। अर्थात् शिवा-
जी के पैर युद्धभूमि में अचल हैं और उनके घबन
भी अटल हैं। पौराणिक गाथाओं में पृथ्वी अचल
ही मानी जाती है। २७१—३

मीलित Lost—जहाँ समान वस्तु में भिन्न जाने से भिन्नता
न मालूम हो। यथा, शिवा जी के यश में भिन्नजाने
से कैलाश पर्वत को महादेव जी और पार्वती जी
महादेव जी को खोज रही हैं। ३००—१

यमक-अनुप्रास Pun—जहाँ उन्हीं शब्दों की भिन्न भिन्न
अर्थों में आवृत्ति हो। जैसे, 'यशवंत यशवंत'।
पहिले का अर्थ यशस्वी है और दूसरा नाम है। ३६३—४

यथासंख्य Relative Order—जिस क्रम से पहिले
एक से अधिक वस्तुओं का उल्लेख हो उसी क्रम

से बाद को उनका धर्णन दिया जाय । जैसे, अफजल-
खाँ, रस्तमजमाँ तथा फतेखाँ को कूटा, लूटा और
जूटा । २३८—६

रूपक Metaphor—जहाँ उपमेय तथा उपमान में कुछ भी
भेद न दिखलाया जाय । रूपक के दो मुख्य भेद
तद्रूप और अभेद हैं और फिर प्रत्येक के अधिक,
सम और न्यून के अनुसार तीन तीन उपभेद हुए ।
भूषण ने केवल तीन उपभेद ही लिए हैं जो तद्रूप
के हैं ।

(१) सम—शिवा जी के यश रूपी जहाज का रूपक ।

(२) न्यून—देा हो कर हाने पर शिवा जी को सहस-कर
(सूर्य) मानते हैं ।

(३) अधिक—पृथ्वी के इंद्र शिवाजी उस इंद्र से बड़ कर
हैं कि पर्वतों को कोट-युत कर फिर सपच्छ कर
दिया है । ६०—६६

**रूपकातिशयोक्ति Hyperbole depending on
Metaphor**—जहाँ केवल उपमान ही दिया गया हो
और उसी से उपमेय का भान हो । जैसे कनकलता
(देह) में चंद्र (मुख), चंद्र में कमल (आँखें)
और कमल से पराग की बूँदे (अश्रु-कण) भरती
हैं अर्थात् शत्रुनारियाँ रोती हैं । १०६—१०

ललितोपमा Graceful Simile—जहाँ उपमेय तथा
उपमान का सादृश्य दिखलाने के लिए लीलादिक
क्रिया पद दिए जायँ । लीला, विलास, ललित
आदि दस हाव होते हैं । हँसी उड़ाना, खिलवाड़
करना आदि इनकी क्रियाएँ हैं । जब उपमेय द्वारा
ऐसी क्रियाओं का उपमान के लिए प्रयोग होता है

तभी यह अलंकार बनता है। जैसे, शिवाजी के दुर्ग पर की दीपावली चाँदनी को हँसती है। १७—६

लाटानुप्रास Verbal Alliteration—जहाँ एक ही प्रकार के स्वर-युक्त पद बार बार आवें। अन्वय-भेद से, अर्थ भी इस अनुप्रास में भिन्न हो जाते हैं। यथा, औरों की याचना करने से क्या हुआ जो शिवाजी से नहीं माँगा ? तथा औरों की याचना से क्या जब शिवा जी से माँग ही लिया। ११३—६२

लुप्तोपमा Incomplete Simile—जिस उपमा में उसके चारों अंग में से एक, दो या तीन अंग न हों वे लुप्तोपमा कहलाती हैं। जैसे, शिवाजी शत्रुओं के लिए अग्नि के समान हैं। यहाँ अग्नि का जलाना धर्म लुप्त है। १६—८

लोकोक्ति Idiom—जहाँ लोगों में प्रचलित कहावत लेकर कुछ कहा जाय। जैसे, स्त्री कहती है कि दक्षिण के सूबेदार हो कर तो जा रहे हैं, पर प्राण कहाँ रखे जा रहे हो। ३१७—८

लेश Unexpected Result—जहाँ गुण को दोष और दोष को गुण कह के वर्णन किया जाय। जैसे, उदयभानु ने धैर्य, गढ़ तथा दृढ़ रखने का यही फल पाया कि स्वर्ग को प्रयाण किया। यहाँ गुण को दोष ठहराना हुआ। अब दोष का गुण-वर्णन इस उदाहरण में लीजिए। यथा, हे प्रिय, अच्छा किया कि युद्धभूमि से भागकर अपना प्राण तो बचा लाए। २८४—६

षक्रोक्ति Crooked Speech—जहाँ श्लेष या काकु से

दूसरा ही अर्थ लगाया जाय । जैसे, सरजा (सिंह
या शिवाजी) के डर से हम यहाँ भाग आए हैं । ३२१—३
वस्तुत्प्रेक्षा—देखिए उत्प्रेक्षा ६६—१०२

विकल्प Alternative—‘ यह किया जाय या वह किया
जाय ’ इस प्रकार अनिश्चयात्मक वर्णन जहाँ हो ।
जैसे, मोरंग जाओ, कमायूँ जाओ या कहीं और
जाओ, पर शिवाजी तक पहुँचे बिना मनचाहा
नहीं मिलेगा । २४८—५०

विचित्र Strange—जहाँ फल की इच्छा कुछ है और
प्रयत्न उसके विपरीत किया जाता है । जैसे, यश ही
के लिए शिवाजी ने कई बरस में लिए गए दुर्गों
को झूठ जयसिंह को दे दिया । २११—३

विनोक्ति Speech of Absence—जहाँ गुण या दोष
‘ बिना ’ शब्द के साथ वर्णित हो । जैसे, शिवाजी
का बिना गुमान का दान संसार में विख्यात है । १५१—५

विभावना Peculiar Causation—विभावना छ प्रकार
का होनी है । भूषण ने निम्नलिखित भेद दिए हैं ।

(१) बिना कारण के कार्य का होना । जैसे, साथ में सेना
और हथियार के न होते भी शिवाजी ने औरंगजेब
का गध दूर कर दिया ।

(२) अपूर्ण कारण से कार्य का होना । जैसे, दो सौ
सवारों से शिवाजी ने सौ हजार असवार के
सरदार को जीत लिया ।

(३) जो कारण न हो पर उससे भी कार्य हो जाय । जैसे,
काले बादलों से अंगारे बरसते हैं । अग्नि वर्षा का
कारण बादल नहीं है, पर उसीसे अग्नि बरस कर
शत्रु-सेना को विचलित कर रही है ।

कारे घन से तात्पर्य बारूद के धुएँ का झा जाना है ।

- (४) जहाँ कार्य से कारण की उत्पत्ति का आभास मिले ।
जैसे, तलवार रूपी धूम से प्रताप रूपी अग्नि उत्पन्न हुई । यहाँ तलवार ही के द्वारा, प्रताप का अर्जित होना ठीक है, पर धूएँ से अग्नि का पैदा होना अशुद्ध है ।

भूषण ने अन्य दो विभावनाएँ नहीं दिया है । १८५—६३
विरोध Contradiction—जहाँ वस्तु के गुणों के विरुद्ध कार्य हाता दिखलाया जाय । जैसे, शिवाजी के श्वेत यश से शत्रुओं का मुख काला हो जाता है ।

विरोधाभास Apparent Contradiction—जहाँ विरोध वास्तविक न हो केवल उसका आभास मात्र मिले । यथा, हे शिवाजी, तू दीनदयाल हो कर ग्लेच्छों के दीन (मत) को मारता है । १८३—४

विशेष Extraordinary—जहाँ बिना आधार के आधेय का वर्णन किया जाय । जैसे, अमरसिंह अमरपुर गए, पर उनकी राज्यश्री युद्धभूमि में रह गई । २२४—६

विशेषाक्ति Peculiar Allegation—जहाँ उपयुक्त कारण के होते भी कार्य का न होना दिखलाया जाय । जैसे, इंद्र सा पेश्वर्य हाते हुए भी शिवाजी में जरा भी गर्व नहीं है १६४—५

विशेषक Distinguisher—सादृश्य होते हुए भी किसी विशेषता से जहाँ भिन्नता दिखलाई जाय । यथा, ललकारने ही से शिवाजी के सिपाही और भागने से मीर लोग पहिचान पड़ते हैं । ३०६—७

विषम Incongruity—‘कहाँ यह और कहाँ वह’ कह कर जहाँ कुछ वर्णन किया जाय । जैसे, कहाँ यह

राजकुमार इतना सुकुमार हैं और कहाँ ये पर्वत
इतने विकराल हैं ।

२०४—७

विषादन Disappointment—इच्छित कार्य करने पर भी
जब उसके विरुद्ध कार्य हो जाय । जैसे, औरंगजेब
ने शिवाजी के गढ़ लेने को सेना भेजी, पर उसे
अपने ही गढ़ गँवा देने पड़े ।

२१६—८

व्यतिरेक Contrast—जहाँ समान उपमेय तथा उपमान
में किसी एक को बढ़ कर कहा जाय । जैसे, पंच
पांडव रात्रि में लाख के भवन से निकल आए, पर
शिवाजी अकेले दिन में लाख चौकी के बीच से
निकल आए ।

१४६—८

व्याघात Frustration—किसी कार्य का करने वाला जब
उससे विपरीत कार्य करता हुआ दिखलाया जाय ।
यथा, यवनी कहती है कि पालनहार विष्णु के
अवतार शिवाजी हमारे पतियों को मत मारो ।
व्याघात का एक और भेद होता है, जिसमें किसी
के तर्क को उलट कर उसीके विपरीत पक्ष का सम-
र्थन किया जाय । जैसे, शिवाजी की तलवार संसार
की रत्नक है और इसीसे ग्लेच्छों के काल (यम)
की भी रत्नक है ।

२२७—६

व्याजोक्ति Dissembler—जहाँ दूसरा कारण बतला कर
वास्तविक बात छिपाई जाय । यथा, शिवाजी द्वारा
लूटे पिटे सर्दार साधु से हो वन में घूमते हैं, पर
पूछने पर कहते हैं कि हम आपही संसार से अब
विरक्त हो गए हैं ।

३१४—६

व्याजस्तुति Artful Praise—जहाँ प्रशंसा में निन्दा और
निन्दा में प्रशंसा की जाय । जैसे, हे शिवाजी प्रसन्न

हो कर सभी हमें हाथी देते हैं, यदि आपने भी दिया तो क्या हुआ । १७४—६

शुद्धापन्हुति Simple Concealment—जहाँ सत्य बात छिपा कर दूसरी बात कही जाय । जैसे, यह बिजली नहीं चमकती प्रत्युत् बिलायती तलवार है । ८०—८१

श्लेष Paronomasia—जहाँ एक बात का कई अर्थ लगाया जा सके । जैसे, शिवाजी सूर-कुल-भूषण है, अर्थात् वह सूर्य-कुल-भूषण या शूर-कुल-भूषण है । १६५—७

संकर Mixed—जहाँ कई अलंकारों का मेल हो । जैसे, ऐसे बाजिराज देत महाराज सिवराज भूषण जो बाज की समाजें निदरत है । इसमें अनुप्रास के साथ प्रतीप लिए हुए ललितोपमा अलंकार है । ३६६—०

संदेह Doubt—जहाँ यह है या वह है, कह कर संशय दिखलाया जाय । यथा, शिवाजी के कार्य को देख कर लोग कहते हैं कि ऐसा काम न जानें गंधर्व, देव, सिद्ध करते हैं या शिवाजी करता है । ७८—६

सम Equal—जहाँ एक दूसरे के अनुरूप दो बातों का ठीक वर्णन किया जाय । यथा, शिवाजी अनर्थ अवश्य ही कर बैठता, पर अच्छा हुआ कि उसको हथियार नहीं मिला ।

समाधि Convenience—जहाँ अन्य कारण के उपस्थित होने से कार्य शीघ्र हो जाय । जैसे, शिवाजी यों ही स्नेहियों के शत्रु थे और उस पर क्रोध में भरे हुए थे इसलिए अफज़ल खाँ का भट मार डाला । २५१—२

समासोक्ति Model Metaphor—जहाँ वर्णन एक का किया जाय और ज्ञान हो किसी दूसरे का । यथा,

हाथी के भारी डील को देख कर सब भागे, पर सरजा सिंह ने उसका घमंड हरण किया। यहाँ वर्णन सिंह तथा हाथी का है, पर ज्ञान शिवाजी तथा अफज़ल खाँ का हो रहा है। १५६—६

समुच्चय Conjunction—जहाँ कई कार्य साथ ही दिखलाए जायँ। जैसे, शिवाजी के आतंक से बीजापुर खाक हो गया, खवास खाँ के मुख में फेन आगया और आदिलशाही सेना धक्का हो गई। २५३—६

संभावना Supposition—‘पेसा हो तो यह हो सके’ इस प्रकार जहाँ दिखलाया जाय। यथा, भीम से सहस्र गुण साहस हो तो शिवाजी से जाकर युद्ध करे। २६६—७०

सहोक्ति Connected Description—जब दो या अधिक बात साथ होती हुई मनोरंजक चाल पर कही जाय। यथा, दक्षिण की सूबेदारी पाकर दिल्ली के अमीर प्राण की आशा तथा उत्तर लौटने की आशा साथ ही छोड़ते हैं। १४६—५०

सामान्य Sameness—सादृश्य के कारण जहाँ भिन्नता न ज्ञात हो। जैसे, तलवारों की बिजली चमकने से मीरों के होश उड़ गए। ३०४—५

सामान्य-विशेष Enhanced Description—सामान्य बात का जहाँ बढ़ाकर वर्णन किया जाय। जैसे, और राजे सहज कार्य नहीं कर सकते, पर शिवाजी का यश मात्र कठिन कार्य कर डालता है। १२१—३

सार Climax—जहाँ उत्कर्ष की उत्तरोत्तर वृद्धि वर्णित हो। जैसे, मनुष्यों में राजे बड़े होते हैं और राजाओं में शिवाजी सब से बढ़कर हैं। २३५—७

स्मृति Reminiscence—जहाँ वैसी ही वस्तु देखकर किसी अन्य वस्तु का स्मरण होना दिखलाया जाय। जैसे, हे शिवाजी, आप हरि के अवतार हैं इससे ब्राह्मणों को देखकर आप को सुदामा की याद पड़ती है, पर हमें देखकर भृगु का क्यों स्मरण करते हैं ? ७४—५

स्वभावांक्ति Natural Description—प्रकृति के अनुसार ही ठीक ठीक वर्णन जहाँ किया जाय। यथा, युद्ध की चर्चा चलने ही से शिवाजी की आँखों में उत्साह क्लकने लगता है। ३२५—६

हेतु Cause—‘ इसी कारण ऐसा हुआ ’ कहकर जहाँ वर्णन किया जाय। जैसे, स्तेचकों को मारने ही के लिए शिवाजी का अवतार हुआ है। ३४७—८

हेतु-अपन्हुति Concealment depending on a cause—युक्ति के साथ सत्य हेतु छिपाते हुए दूसरा कारण बतलाया जाय। जैसे, शिवाजी के हाथ में तलवार नहीं है, प्रत्युत् भुजारूपी सर्प की यह नागिन है जो शत्रुओं के प्राणरूपी वायु का भक्षण कर रही है। ८२—४

हेतूपेक्षा—देखिए ‘ उत्प्रेक्षा ’ । १०३

परिशिष्ट (घ)

ग्रंथावली में आए हुए छंदों की

व्याख्यायुक्त सूची

अमृतध्वनि—२४ मात्रा का यह एक यौगिक छंद है। आरंभ में एक दोहा देकर उसके बाद दो रेला देने से यह छंद बनता है। दोहे का अंतिम चरण आगे के रेला का प्रथम चरण होता है। दोहे के आरंभ तथा दूसरे रेले के अंत के कुछ शब्द समान होने चाहिए। इस छंद के रेला में आठ आठ मात्राओं पर ही यति होना चाहिए। कुंडलिया छंद का यह एक भेद मात्र है जिसके रेला में इस प्रकार की यति का होना बंधन नहीं होता।

दोहे का लक्षण दिया गया है। रेला मात्रिक छंद है जिसमें ग्यारह तथा तेरह मात्रा पर यति होती है। अंत में, कुछ का मत है कि दो गुरु होने चाहिए, पर यह नियम सर्वसम्मत नहीं है। भूपण ने शि० भू० के द्वितीय पद में ऋण्य के रेला के अंत में दो लघु दिए हैं।

अमृतध्वनि के लिए शि० भू० छं० ३५४—७ देखिए।

अलसा—यह सवैया का एक भेद है। सात भगण के बाद एक रगण रहता है अर्थात् २४ अक्षर होते हैं। भगण में एक गुरु और दो लघु तथा रगण में मध्य का लघु और दोनों गुरु होते हैं। उदाहरण के लिए छं० २५८ देखिए।

किरीटी—यह सवैया का एक भेद है, जिसमें आठ भगण होते हैं। एक भगण में एक गुरु और दो लघु होते हैं। शि० भू०

कुं० ३२० इसी प्रकार की सवैया है। ' औरंग जो चदि दक्खिन आवै ता ' में प्रथम तीन भगण हैं पर चौथे समूह में तीनों वर्ण गुरु हैं पर उन्हें भी ' आव त ' के समान भगण बना कर पढ़ना होगा।

गीतिका—ऊँचीस मात्रा का यह कुंद होता है, जिसमें चौदह तथा बारह मात्रा पर यति होती है और अंत में लघु गुरु होता है। शि० भू० की ग्रंथालंकार नामावली इसी कुंद में है।

कृष्ण्य—इस कुंद में कृ पद होते हैं, जिससे यह षट्पद या कृष्ण्य कहलाया। पहिले दो रेखा और बाद को एक उल्लाला रहता है। शि० भू० कुं० २ देखिए। उल्लाला अट्ठाईस मात्रा का कुंद है, जिसमें पंद्रह तथा तेरह पर यति होती है। इसे चंद्रमणि भी कहते हैं।

देहा—यह मात्रिक कुंद है जिसमें चार चरण होते हैं। प्रथम तथा तृतीय में तेरह मात्रा और द्वितीय तथा चतुर्थ में ग्यारह मात्रा होती हैं। अंतिम दोनों के तुकांत मिलने चाहिए। शि० भू० में देहां की संख्या अन्य सभी कुंदों से अधिक है।

मनहरण—ऊँचीस वर्णों से अधिक वर्ण वाले कुंद दंडक कहलाते हैं। इनके दो प्रधान भेद हैं। जिनमें गणों का बंधन होता है वे गणान्मक और जिनमें यह बंधन नहीं होता वे मुक्तक कहलाते हैं। दूसरे में केवल अक्षरों की संख्या ही रहती है। मनहरण मुक्तक दंडक है जिसे घनाक्षरी या कवित्त भी कहते हैं।

माधवी—सवैया कुंद का एक भेद। इसमें आठ सगण अर्थात् चौबीस अक्षर होते हैं। सगण में दो लघु तथा एक गुरु होता है। शि० भू० का ३६८ वां पद देखिए।

- मालती—सवैया का एक भेद । इसमें सात भगण और दो गुरु अर्थात् तेईस अक्षर होते हैं । भगण में एक गुरु और दो लघु होते हैं । शि० भू० के ३५, ३७, ४० आदि छंद देखिए ।
- लीलावती—यह बत्तीस मात्रा का छंद है जिसमें लघु गुरु का कोई बंधन नहीं है । सोलह सोलह मात्रा पर यति हांती है । अंत में जगण होता है, ऐसा भी मत है ।
- हरिगीतिका—यह अट्ठाईस मात्राओं का एक छंद है जिसमें प्रवाह ठीक रखने के लिए पाँचवीं, बारहवीं, उन्नीसवीं और छब्बीसवीं मात्राएँ ह्रस्व हानी चाहिए । अंतमें एक लघु तथा गुरु रहना चाहिए । शि० भू० छं० १६—२२ देखिए ।

परिशिष्ट(ड)

कालचक्र

१० अप्रैल १६२७ शिवाजी का शिवनेरि दुर्ग में जन्म हुआ जो जुनार के पास पूना ज़िले में है। यह शाह जी के द्वितीय पुत्र थे। इनकी माता का नाम जीजाबाई था।

१६३७ विठो जी मोहिते नेवासकर की पुत्री सईबाई से शिवाजी का प्रथम विवाह हुआ। इन्हीं के पुत्र शंभा जी थे। यह पति के सामने ही स्वर्ग गईं।

१६४६ शिवाजी ने बाजी पसालकर, येसा जी कंक और ताना जी मालूसरे को भेज कर तोरण दुर्ग पर अधिकार कर लिया। दो लाख हून सरकारी तहसील यहीं लूटा। इस दुर्ग का नाम कुछ दिन के लिए प्रचंडगढ़ रखा गया। मोरो पिगले ने इसी वर्ष मोरबद की पहाड़ी पर राजगढ़ दुर्ग बनाया।

१६४७ दादा जी कोणदेव की मृत्यु हुई। पूना की जागीर के सभी राजकर्मचारी ने शिवाजी को अपना अफसर माना, पर शाह जी की द्वितीय स्त्री के भाई शम्भू जी मोहिते के अस्वीकार करने पर उससे सूपा छीन लिया और शाह जी के पास भेज दिया। कोंदाना के मुसलमान दुर्गाध्यक्ष को घूस देकर उस पर अधिकार कर लिया और

उसका सिंहगढ़ नाम रक्खा गया। पुरंधर दुर्ग भी अधिकृत हुआ। इनके सिपा शिवाजी ने पूना के पश्चिमोत्तर के नौ दुर्ग छीन लिए, जिनमें लोहगढ़, राजमाची, रैरी प्रसिद्ध हैं। अंतिम ही बाद का रायगढ़ के नाम विख्यात हुआ।

१६४८-४० बीजापुर के सुल्तान ने शाह जी को कैद कर लिया। शिवाजी शाहजहाँ से संधि की बातचीत करने लगे और शरजा खाँ तथा रनदौला खाँ के ज़ामिन होने पर सन् १६४६ ई० में छोड़े गए। इसी बीच बीजापुर के बाजी श्यामराजे दस सहस्र सैनिकों के साथ शिवाजी को धोखे से पकड़ने को भेजा गया, पर कुछ कर न सका।

१६४४ कृष्णा जी बाजी मोरे चंद्रराव मारा गया और जावली पर अधिकार हो गया। प्रतापगढ़ दुर्ग बनवाया। शृंगारपुर राज्य विजय हुआ। गोलवाडी पर अधिकार हो गया।

१६४७ शिवाजी के प्रथम पुत्र शम्भा जी का जन्म हुआ। पहिली बार मुगल-साम्राज्य में लूट आरंभ किया। जुनेर लूटा। नासिरी खाँ, परिज खाँ, रावकर्ण आदि दमन करने भेजे गए। शाहजहाँ की बीमारी सुनकर औरंगज़ेब ने बीजापुर से संधि कर ली तब शिवाजी ने भी संधि कर ली।

१६४६ अफज़ल खाँ मारा गया, शृंगारपुर पर अधिकार हुआ और पवनगढ़, वसंतगढ़, रंगाना, खेलना, विशालगढ़ तथा पन्हाला दुर्ग विजय हुआ।

रुस्तमेज़माँ परास्त हुआ । बीजापुर नगर तक मराठी सेना पहुँची ।

१६६० राजापुर लूटा गया और दामोल क़ीन लिया गया । बीजापुर ने सीदी जौहर, सलाबत खाँ और फ़जलमुहम्मद को ससैन्य शिवाजी पर भेजा । शिवाजी पन्हाला में घिर गये । वहाँ से निकलकर विशालगढ़ गए । बाजी प्रभु ने पंढर-पानि में शत्रु को रोका । सीदी जौहर शिवाजी से मिल गया । अली आदिल शाह स्वयं लड़ने आया । कई दुर्ग विजय कर फतेह खाँ तथा सावंतवाड़ी के सावंतों के कोंकण पर अधिकार करने को भेजा । शिवाजी ने डंडा राजपुरी लूट कर सिंधु दुर्ग बनवाया, बहलोल खाँ सावंतों के सहायतार्थ आया । बाजी घोरपदे मारा गया और मुघल लूटा गया । खवाम खाँ हार गया । संधि हुई । मुग़लों ने चाकण और पूना पर अधिकार कर लिया ।

१६६१ कल्याण भिअंडी पर मुग़लों का अधिकार हो गया ।

१६६२ शाह जी की मध्यस्थता में बीजापुर से संधि हुई । रायगढ़ दुर्ग बनने लगा ।

१६६३ छुड़सवारों का सेनापति नेता जी पालकर मुग़ल साम्राज्य में लूट करने गया था । इसका मुग़ल सवारों ने पीछा किया । रुस्तमेज़माँ की सहायता से रक्षा हुई । शायस्ता खाँ पूना में था कि शिवाजी के रात्रि आक्रमण से डर कर भागा ।

वह बंगाल भेजा गया और उसके स्थान पर
शाहजादा मुअज़्ज़म नियुक्त हुआ ।

१६६४ १५ जनवरी को शाहजादा पहुँचा । शिवाजी ने
प्रथम बार सूरत लूटा । शाह जी घाड़े से गिर
कर मर गए । जसवंतसिंह और भाऊसिंह ने
काँदा ना घेरा, पर नहीं ले सके ।

१६६५ जयसिंह तथा उनके सहकारी दिलेर खाँ, दाऊद
खाँ, रायसिंह मिर्सादिया, इहनिशाम खाँ, कुबाद
खाँ, सुजानसिंह, कीरतिसिंह, यहिया आदि
जसवंतसिंह के बदले नियुक्त हुए । पुरंधर और
रुद्रमाल किले विजय हुए । शिवाजी ने जयसिंह
से मिल कर २३ दुर्ग देकर संधि कर लिया ।
शिवाजी ने सेना सहित बीजापुर की चढ़ाई में
जयसिंह की सहायता की । शरजा खाँ तथा
खवास खाँ को शिवाजी ने दिलेर खाँ के साथ
परास्त किया । युद्ध में याकूत खाँ मारा गया ।

१६६६ शिवाजी आगरे की ओर लौट आये ।

१६६७ जयसिंह की मृत्यु हुई । शिवाजी ने कई दुर्ग
काँकण में विजय किए ।

१६६८ मुगलों से शिवाजी की संधि हो गई ।

१६७० मुगलों से युद्ध आरंभ हुआ । ताना जी ने
उद्देभान को मार कर सिंहगढ़ विजय किया, पर
स्वयं मारा गया । पुरंधर जीन लिया । कल्याण
लेकर काँकण पर अधिकार कर लिया । सूरत
दूसरी बार लूटा गया । दाऊद खाँ को वानी
युद्ध में परास्त किया । वरार और बगलाना में
लूट किया । सल्हेर दुर्ग ले लिया । जंजीरा लेने

में असफल रहे। वहाँ का अध्यक्ष फतेह खाँ शिवाजी से मिल गया था, पर सीदियों ने उसे मार डाला।

१६७१ ऋवसाल बुंदेला शिवाजी के यहाँ आये। महाबत खाँ सेनापति हो कर आये। सल्हेर घेरा गया। महाबत के लौट जाने पर दिलेर खाँ तथा बहादुर खाँ आये। अमरसिंह के मारे जाने, मुहकमसिंह और मियाना के कैद होने पर मुगल सेना नष्ट हो गई। बहलोल खाँ और इखलास खाँ मारा पिंगले और प्रतापराव गूजर से हार गये।

१६७२ बहादुर खाँ और दिलेर खाँ हार कर लौट गए। जाधरि को कैली राजा से छीन लिया। रामनगर राज्य भी अधिकृत हो गया। बरार और तेलिंगाना में लूट मार किया। हैदराबाद जाकर बीस लाख पैगोडा लेकर लौट आया। सीदियों ने डंडा राजपुरी पर अधिकार कर लिया। अली आदिल शाह की १५ दि० सं० मृत्यु हुई।

१६७३ पन्हाला पुनः जीत कर कनारा तथा दक्षिण महाराष्ट्र में लूट आरंभ किया। हुबली लूट कर बीजापुर पर जल और स्थल से आक्रमण किया। बहलोल खाँ उमरानी युद्ध में प्रताप राव गूजर से हार गया और फिर नेसारी युद्ध में आनंदराव से हारा। बिदनोर के राजा से कर लिया और सितारा के पास के कई दुर्ग ले लिये।

- १६७४ दिलेर खाँ की हार । रायगढ़ में ६ जून को शिवाजी की राजगद्दी । बहादुर खाँ का कैप लूटना । जीजाबाई की मृत्यु ।
- १६७५ बहादुर खाँ से संधि का प्रस्ताव । कुल कनारा के किनारे के दुर्ग विजय कर लिए । बिदनोर तथा कनारा के पहाड़ी प्रान्त पर अधिकार हो गया ।
- १६७६ पोंडा और कोल्हापुर ले लिया । फाल्गुन प्रांत में कई दुर्ग बनवाया जिनमें दो का नाम भूपणगढ़ तथा सदाशिवगढ़ था । जंजीरा पर असफल चढ़ाई । बहलोल अफगान द्वारा खवास खाँ मारा गया तथा बीजापुर में दोनों पक्ष वालों में युद्ध ।
- १६७७-८ कर्णाटक पर चढ़ाई । बहादुर खाँ के स्थान पर दिलेर खाँ सूबेदार हुआ । दिलेर खाँ और अब्दुल्ला खाँ की गोलकुंडा पर चढ़ाई । हार कर लौट गया । बीजापुर पर मुगलों की चढ़ाई हुई तब शिवाजी से सहायता माँगा । शिवाजी ने बुर्हानपुर लूट कर रनमस्त खाँ से युद्ध किया । फाल्गुन प्रांत में हुसेन खाँ मियाना आदि परास्त हुए ।
- १६७८ शिवाजी बीजापुर गए । शंभा जी भाग कर दिलेर खाँ के भतीजे इखलास के साथ उसके पास गए । बीजापुर का घेरा शिवाजी द्वारा उठा दिया गया । दिलेर खाँ हार कर लौट गया । शिवाजी का बीजापुर में स्वागत और संधि ।

- शिवाजी के बड़े ने खंडेरी और डंडेरी ले लिया,
पर अंग्रेजी तथा मुगल बेटों से हार गया ।
- १६८० ५ अप्रैल (चैत की पूर्णिमा) को शिवाजी स्वर्ग
सिधारे । शंभा जी की राजगद्दी ।
- १६८३-८५ पुर्तगाल युद्ध, कलश का अधिकार बढ़ना ।
- १६८४-६ मुगलों की चढ़ाई, बीजापुर राज्य का अंत ।
- १६८६-७ गोलकंडा राज्य का अंत ।
- १६८७-९ मराठों के राज्य का बढ़ना, औरंगजेब की
चढ़ाई ।
- १६८९ ११ मार्च १६८९ को शंभा जी तथा कलश मारो
गए । शंभा जी के पुत्र शिवा जी राजा और शंभा
जी के भाई राजाराम अभिभावक नियुक्त हुए ।
रायगढ़ पर १९ अक्टूबर को अधिकार हुआ
और शिवाजी पकड़े गए ।
- १६९०-९८ मुगलों से युद्ध, मराठों के राज्य पर जिंजी
तक मुगलों का नाम मात्र का अधिकार हो गया ।
- १७०० राजाराम की मृत्यु ।
- १७०६ वाकिनकेरा का घेरा, मुगलों की हार और
लौटना ।
- १७०८ शिवाजी उपनाम साहू का बहादुर शाह द्वारा
कुटकारा पाना, राजगद्दी ।
- १७४७ साहू की मृत्यु ।

परिशिष्ट (च)

ऐतिहासिक-पुरुषों तथा स्थानों का विवरण-युक्त अनुक्रम

अकबर—यह मुगल साम्राज्य के संस्थापक बाबर का पौत्र, हुमायूँ का पुत्र तथा प्रसिद्ध तृतीय मुगल सम्राट् था। सन् १५४५ ई० में अमरकोट में इसका जन्म हुआ, सन् १५५६ ई० में प्रथम पानीपत युद्ध-विजय हुआ तथा इन्हें राजगद्दी हुई और सन् १६६० ई० में बैराम खाँ से इन्होंने राज्यप्रबन्ध ले लिया। इन्होंने प्रायः बीस वर्ष में पड़ोसी राज्यों को जीत कर समग्र उत्तरापथ में मुगल साम्राज्य स्थापित कर दिया। इसके अनंतर दक्षिण की ओर इन्होंने चढ़ाईयाँ कर उधर के भी कई राज्य विजय किए। सन् १६०४ ई० में इनकी मृत्यु हुई। इनमें धार्मिक-कट्टरता नहीं थी और यह गुण-ग्राहक थे।

अनवर खाँ—मुगल दरबार का एक सद्दीर था, जो कुत्रसाल के विरुद्ध भेजा गया था। यह युद्ध में हार कर भाग गया। बहादुर शाह तथा फर्रुखसियर के समय यह बुर्हानपुर का फौजदार था। यह उसी शहर का एक शेखजादा था।

अनिरुद्धसिंह—पौरव कुत्रिय राजा अमरेश के पुत्र थे। इनके विषय में विशेष कुछ नहीं ज्ञात हुआ।

अफ़ज़ल खाँ—इसका नाम अब्दुल्ला खाँ भटारी पठान था और यह बीजापुर का एक बड़ा सद्दीर था। यह कई दुर्ग का अध्यक्ष रह चुका था। सन् १६५६ ई० के सितंबर महीने में शिवाजी से युद्ध करने को यह बीजापुरी १०००० सेना के

साथ रवाना हुआ। मार्ग में पंढरपुर तथा तुलजापुर के मन्दिरों को इसने भ्रष्ट किया। राजनीति-कुशल शिवाजी ने युद्धस्थल में इससे सामना कर अपने नए राज्य को विषम समस्या में डालना अनुचित समझ कर पड़्यंत्र रचा और उसमें अफज़ल अपनी सेना सहित नष्ट हो गया। यह स्वयं शिवाजी को धोखे में पकड़ना चाहता था, पर फल उलटा हुआ।

अब्बास शाह—यह ईरान अर्थात् फारस के बादशाह थे।

अमरसिंह चन्द्रावत—रामपुरा के राव दुर्गा सिसौदिया के प्रपौत्र, राव चन्द्रभान के पौत्र तथा हरिसिंह के पुत्र थे। यह सं० १७०७ वि० में शाहजहाँ की सेवा में आया और एक हजारी ६०० सवारों का मंसब पाकर सम्मानित हुआ। औरंगज़ेब के साथ कंधार गया। धर्मत युद्ध में यह महाराज जसवंतसिंह के साथ था, पर बिना युद्ध किए स्वदेश लौट गया। शुजाअ का पीछा करने पर नियुक्त हुआ। इसके अनंतर मिर्जाराजा जयसिंह के साथ दक्षिण आया और सं० १७२३ वि० में सलहेर युद्ध में मारा गया। इसका पुत्र मुहकम सिंह उसी युद्ध में कैद हुआ था।

अमीन खाँ, मुहम्मद—यह मुगल दरबार का एक सद्दर था, जिसने पञ्चानरेश कुत्रसाल पर चढ़ाई की थी। औरंगज़ेब के समय के तथा बाद के दो प्रसिद्ध अमीन खाँ ज्ञात हैं। (१) मुहम्मद सैयद मीरजुम्ला का पुत्र था, जिसने शाहजहाँ तथा औरंगज़ेब के राज्यकाल में बहुत कार्य किया था। यह पाँच हजारी मंसबदार था। गुजरात के अहमदाबाद में सन् १६८२ ई० में इसकी मृत्यु होगई। (२) निज़ामुल् मुल्क आसफजाह के भाई बहाउद्दीन का पुत्र था, जो औरंगज़ेब के समय दरबार में आया।

सैयद भ्राताओं के मारे जाने पर यह मुहम्मद शाह का प्रधान मंत्री हुआ, पर कई महीने बाद इसकी मृत्यु होगई।

अरब—एशिया महाद्वीप के दक्षिण के तीन बड़े प्रायद्वीपों में से एक जो पूर्व के कोने पर है। इसका विशेष भाग रेगिस्तान है। मुसलमानी मत यहीं से आरम्भ हुआ।

अवधूतसिंह—सं० १७५७ वि० के लगभग इनके पिता अनिरुद्धसिंह मऊगंज के सेंगर ठाकुरों के हाथ मारे गए। उस समय इनकी अवस्था ३ मास की थी। पन्नानरेश ३३ साल के पुत्र हृदयशाह ने रोवाँ पर चढ़ाई कर उस पर अधिकार कर लिया। दिल्ली के बादशाह बहादुरशाह की सहायता से अवधूतसिंह को उनका राज्य फिर मिला।

अहमदनगर—यह राज्य सन् १४८६ से १६३७ ई० तक रहा। इसका विस्तार उत्तर में खानदेश राज्य से दक्षिण में नीरा नदी तक और पश्चिम में समुद्र से पूर्व बरार तथा बीदर तक रहा। इन दोनों राज्यों के नष्ट होने पर उनका कुछ अंश अहमदनगर राज्य में मिल गया था। दमन से बंबई तक का समुद्री किनारा इसी के अधिकार में था। यहाँ निज़ाम शाही राज्य था। अहमदनगर राजधानी भीमा नदी पर समुद्र से साठ कोस पूर्व हट कर है।

आकुत—देखो याकूत।

आगरा—यह प्रसिद्ध नगर संयुक्तप्रांत में यमुना नदी के किनारे पर बसा है। यह मुगल सम्राटों की राजधानी थी।

आमेर—प्रसिद्ध नगर जयपुर के पास एक पहाड़ी पर इस नाम का दुर्ग बना हुआ है जो जयपुर बसाए जाने के पहिले कछवाहा राजवंश की राजधानी थी।

आलमगीर—मुगल सम्राट् औरंगज़ेब की पदवी थी। यह शाहजहाँ का पुत्र था। इसका जन्म १६१८ ई० में हुआ था। सन् १६५६

ई० में अपने भाइयों को मार कर तथा पिता को कैद कर दिल्ली की राज्यगद्दी पर बैठा। यह अपनी धर्माधता तथा राजविस्तार को लालसा में मुगल साम्राज्य को नष्ट-प्राय करता हुआ सन् १७६० ई० में मरा।

आसाम—बंगाल की पूर्व सीमा पर स्थित एक प्रान्त।

इख़लास खाँ मियाना—बीजापुर के पठान स्वर्दार अब्दुल कादिर बहलोल खाँ का पुत्र था। यह मुगल सम्राट् की सेवा में चला आया। बानी डिंडारी युद्ध में जो सन् १६६० ई० के अक्तूबर महीने में हुई थी, घायल हुआ था, जो शिवाजी और दाऊद खाँ के बीच में हुई थी। यह मल्हेर युद्ध में मुहकमसिंह के साथ कैद हुआ।

इख़लास खाँ—दिलेर खाँ पठान का भतीजा था।

इख़लास खाँ—मुहम्मद, ख्वास खाँ का भाई तथा खानखानाँ इख़लास खाँ का बड़ा पुत्र था। स० १७२० में यह हस्तमज्दमाँ के बदले में मीराज का सूबेदार हुआ। पर दूसरे ही वर्ष यहाँ से उत्तर कनारा को इसकी बदली हुई। स० १७२२ ई० में शिवाजी ने इसे परास्त कर इसके दो सदस्य सैनिकों को मार डाला और उस प्रान्त पर अधिकार कर लिया। यह कुडाल लौट कर ठहरा जहाँ से बीजापुर चला गया।

इंग्लैंड—यूरोप के पश्चिम का एक टापू है, जिसके निवासी आज कल भारत के राजा हैं।

ईरान—प्रसिद्ध नाम फारस है। पश्चिम में एजियाई टर्की, पूर्व में अफ़ग़ानिस्तान और बिलोचिस्तान, उत्तर में कैकेशस पहाड़ और काला सागर तथा दक्षिण में फारस की खाड़ी है।

उज्जेन—यह मालवा प्रान्त की राजधानी है और चंबल नदी पर बसा हुआ है।

उदैभान—महाराज जयसिंह से परास्त होने पर शिवाजी द्वारा दिए गए दुर्गों में से प्रसिद्ध दुर्ग कोंढाना उपनाम सिंहगढ़ का यह किलेदार नियुक्त हुआ था। यह राठौड़ था। सन् १६७० ई० के आरम्भ में ताना जी मालूमरे से द्वंद्व युद्ध करते हुए अपने प्रतिद्वन्दी को मार कर यह मारा गया और दुर्ग शिवाजी के अधिकार में चला गया।

पदिल शाह—बीजापुर का राजवंश आदिलशाही कहलाता था, जिस वंश का राज्य सन् १४८६ से सन् १६८६ ई० तक रहा। ४ नवंबर सन् १६५६ ई० को पिता की मृत्यु होने पर अली आदिलशाह गद्दी पर बैठा। इसी के समय में शिवाजी ने इस राज्य का कुछ अंश दबा लिया था। इसीने प्रथम बार अफ़ज़ल खाँ और दूसरी बार उसके पुत्र हस्तम खाँ तथा सीदी जौहर को शिवाजी को दमन करने भेजा था। यह सन् १६७२ ई० में मरा और इसका पुत्र सिकंदर आदिल शाह सुलतान हुआ।

कमारु—यह नेपाल के पश्चिम हिमालय की तराई में है। सन् १६६५ ई० में मुग़ल सम्राट् ने यहाँ का राजा बहादुर चंद को परास्त कर इसे साम्राज्य में मिला लिया था, पर सन् १६७३ ई० में प्रसन्न हो कर पुनः वह राज्य उसे फेर दिया। यह पुराना जागीरदार था।

कर्ण, राव—यह बीकानेर के राजा थे। इनके पिता राव सूर सिंह भुरटिया थे जिनकी मृत्यु पर यह सन् १६३१ ई० में गद्दी पर बैठे। उसी वर्ष से बराबर यह बादशाह के कार्य करते रहे। औरंगज़ेब ने बादशाह होने पर सन् १६५७ ई० में पोंडा में मराठों को रोकने को इन्हें नियत किया। सन् १६६५ ई० में जयसिंह के पुरंधर घेरने पर दाहिने ओर को मोर्चे पर नियुक्त हुए। यह बादशाह के आज्ञानुसार यहाँ इस कार्य में लगे

हुए थे कि इनके सुपुत्र अनूपसिंह ने बादशाह से बीकानेर राज्य अपने नाम करा लेने का प्रयत्न किया। यह सुनकर अपने कार्य में यह सतर्क न रहने लगे, जिस पर बादशाह ने दिलेर खाँ को इन्हें कैद करने को लिखा। भाऊसिंह हाड़ा इन्हें बचा कर औरंगाबाद ले गए। यह सन् १६६७ ई० की घटना है। इसके दो वर्ष बाद इनकी मृत्यु हुई।

कर्णाटक—कृष्णा नदी की घाटी से रासकुमारी तक फैला हुआ प्रांत। इसके पूर्व कारेमंडल घाट है। वर्तमान मंदराज प्रांत का पश्चिम दक्षिण भाग तथा मैसोर इसी के अंतर्गत है। कुछ भाग बंबई प्रांत में भी आ गया है।

कलकत्ता—हुगली नदी पर बसा हुआ प्रसिद्ध नगर है।

कर्लिंग—उड़ीसा प्रांत का प्राचीन नाम।

कल्याण—एक कल्याण थाना जिले के अंतर्गत है और बंबई से लगभग तीस मील उत्तर पूर्व है। दूसरा कल्याण बीदर से लगभग चालीस मील ठीक पश्चिम में स्थित है। खं० २१३ में इसी दूसरे कल्याण का उल्लेख है। यह भूषण के समय में बीजापुर राज्य में था।

कश्मीर—पंजाब के उत्तर का एक बड़ा देशी राज्य।

काबुल—भारत के पश्चिम-उत्तर सीमा पर स्थित अफगानिस्तान की राजधानी, जो इसी नाम की नदी पर बसा है।

कारतलब खाँ—सन् १६५७ ई० में यह जुनेर के पास थानेदार नियुक्त हुआ। सन् १६७० ई० के मई महीने में इसे खिलअत, घोड़ा, तलवार तथा जमधर मिला था।

काशी—गंगा जी के तट पर बसा हुआ प्रसिद्ध तीर्थ-स्थान। यहीं सन् १६६६ ई० में विश्वनाथ जी तथा विंदुमाधव के मंदिर तोड़ कर औरंगजेब ने मसजिदें बनवाया था।

किशोरसिंह—कोटानरेश माधोसिंह के पाँच पुत्रों में यह सबसे छोटे थे। धर्मन युद्ध में इन पाँचों भाइयों ने महाराज यशवंत सिंह का साथ दिया और युद्ध में एक को छोड़ कर सभी ने वीर गति पाई। किशोरसिंह को इतने घाव लगे थे कि वह मृत्यु-मुख से ही मानों बच निकले थे। यह सन् १७२६ वि० में गद्दी पर बैठे। यह दक्षिण ही में बराबर नियुक्त रहे, जहाँ सन् १७४२ वि० में अर्काट दुर्ग के घेरे के समय मारे गए।

कुडाल—साघंतवाड़ी में काली नदी पर स्थित है। बाद को वाड़ी का मावंत ही कुडाल के देसाई कहलाने लगे। सन् १६६३ ई० में इस पर, राजापुर तथा वेनगुली बंदर पर शिवाजी का अधिकार हो गया।

कुतुबशाह—सुलतान कुली को बहमनी सुलतान महमूदशाह ने कुतुबुल मुल्क की पदवी सहित गोलकुंडा जागीर में दिया। इसने अठारह वर्ष सूबेदारी करने के बाद सन् १५१२ ई० में स्वतंत्रता की घोषणा की और सुलतान कुली कुतुबशाह प्रथम कहलाया। इसके बाद क्रमशः जमशेद, सुभान, इब्राहिम तथा मुहम्मद गद्दी पर बैठे। सन् १६३५ ई० में अबुल्ला कुतुबशाह गद्दी पर बैठा। मुगलों को बराबर कर देते हुए संधि बनाए रखता था, पर सन् १६५६ ई० में औरंगजेब की कुटिल नीति के कारण मीर जुमला के बहाने उस पर चढ़ाई की गई। उससे जुमाना आदि लेकर संधि की गई। सन् १६६६ ई० में जब बीजापुर पर जयसिंह ने चढ़ाई की थी तब इसने सहायता की थी। सन् १६७२ ई० में इसकी मृत्यु पर अबूदुसेन गद्दी पर बैठा जिससे मुगलों ने यह राज्य छीन लिया।

कंधार—बीर से ६० मील ठीक पूर्व गोदावरी की एक सहायक

नदी मेनादा पर बसा है। यह निज़ाम हैदराबाद के राज्य में है।

खजुआ—इलाहाबाद ज़िला में कोड़ा तहसील के अंतर्गत यह एक ग्राम है। यहीं औरंगज़ेब ने शाहशुजाअ पर युद्ध में विजय प्राप्त किया था जिसको स्मृति में यहाँ बादशाही बाग, सराय आदि बनवाए गए थे। यहाँ अच्छी बस्ती हो गई है।

खवास खाँ—भूमिका देखिए।

खानदौराँ—ख्वाजः हिसारी नरेशवंदी को यह तथा खाँ नसरत जंग की उपाधि मिली थी। यह सात हज़ारी मंसबदार था, जिसे १२ जुलाई सन् १६४१ ई० को लाहौर में एक काश्मीरी ब्राह्मण ने मार डाला था। इसके लड़के को भी यही उपाधि तथा पाँच हज़ारी मंसब मिलता। राज्य के लिए भाइयों में युद्ध होने पर यह औरंगज़ेब ही के पक्ष में रहा। दक्षिण में कुछ दिन नियुक्त रहने के अनंतर यह उड़ीसा का सूबेदार नियत हुआ, जहाँ सन् १६६७ ई० में मर गया।

खुरासान—फारस देश के उत्तर तथा पश्चिम का एक प्रांत।

गढ़ा—जधवलपुर ज़िले में एक पुरानी बस्ती है। गढ़ामांडल के गोंड राजाओं की यही राजधानी थी जिनका कोट मदनमहल पहाड़ पर अभी तक वर्तमान है।

गढ़नेर—इससे गढ़नगर से तात्पर्य ज्ञात होता है। चाँदा प्रान्त में गढ़ नाम की कई बस्तियाँ हैं जिनमें यह एक हो सकता है। नेर नगर ही का छोटा रूप है।

गुजरात—इसका दूसरा नाम काठियावाड़ है। यह भारत के पश्चिम ओर का एक प्रायःद्वीप है जिसके दक्षिणी तट तथा बंबई तट के मिलने से खंभात की खाड़ी बनी है।

गोर—बंगाल प्रांत का गौड़ नगर या अफगानिस्तान का गोर दुर्ग और शहर हो सकता है।

गोलकुंडा—यह कुतुबशाही सुलतानों की राजधानी थी। दक्षिण के प्रसिद्ध नगर हैदराबाद के पास है। दोनों ही मूसी नदी पर बसे हुए हैं।

गोंडवाना—मध्य प्रांत का वह भाग जहाँ पहिले विजेषतः गोंड जातियाँ बसती थीं।

चालकुंड—बंबई तथा उंडा राजपुरी बंदरों के बीच में स्थित एक बंदर है। यह कोलाबा के पास ही है।

चाँदा—मध्यदेश के दक्षिण में एक प्रांत तथा एक नगर है। यह नागपुर से दक्षिण है। इसी प्रांत से हो कर बानगंगा इम्पी की सीमा पर की प्रणहीत नदी में मिलता है।

चित्तौड़—मेवाड़ राज्य के अंतर्गत इस नाम का एक प्रसिद्ध ऐतिहासिक दुर्ग है।

चिंतामणि—सुप्रसिद्ध बाजीराव पेशवा के भाई चिमना जी आप्पा का यह नाम है। विशेष भूमिका में देखिए।

चान—भारत वर्ष के उत्तर एक बहुत बड़ा साम्राज्य है जिसकी राजधानी पीकिन है। उत्तर में साइबीरिया, पूर्व में शांत (पैसिफिक) महासागर और जापान तथा पूर्व में मध्य तुर्की और कास्पियन समुद्र है।

चौरागढ़—मध्य प्रदेश के बरभित्तपुर जिले में गढ़वाग स्टेशन से पाँच कोस दक्षिण और पूर्व है। यह गढ़मंडल प्रांत की राजधानी था।

चंद्रराव—इनके पूर्वज पर्सीजी बाजीराव मोरे को यूसुफ आदिलशाह ने जावली जागीर में और चंद्रराव उपाधि दी थी। सन् १५२४ ई० के युद्ध में इनके पुत्र यशवंतराव ने अहमदनगर का हरा झंडा छीन लिया था जिसके उपलक्ष में इन्हें

राजा की पदवी मिली। पर्सोजो को आठवीं पीढ़ी में कृष्णा जी हुए, जिसके पाँच पुत्र थे। पहिला बाला जी राजा हुआ। जीजाबाई ने इसीसे शिवाजी के लिए उसकी पुत्री माँगी थी, पर उसने अस्वीकार कर दिया। बाजी श्यामराजे को इसीने सहायता दी थी और इसीके राज्य में शिवाजी को मारने का उसने पडयंत्र रचा था, पर शिवाजी की सनकता से वह निष्फल गया। शिवाजी ने इन्हें मिलाने का प्रयत्न किया, स्वयं जाकर मिले पर कुछ फल न निकला। दो राजदूत रघू बलताल आत्रे तथा शंभा जी कावा जी भेजे गए, जिन्होंने सन् १६५५ ई० में बाला जी तथा उसके भाई को मार डाला। शिवाजी ने ससैन्य जाकर जावली पर अधिकार कर लिया।

कुत्रसाल बुँदला—देखो भूमिका।

कुत्रसाल हाड़ा—बूँदी नरेश रावराव के यह पौत्र थे जिनकी मृत्यु पर सन् १६३१ ई० में यह गद्दी पर बैठे। दक्षिण में इन्होंने बहुत दिनों तक बीजापुर आदि के सुलतानों के विरुद्ध लड़ाइयों में कार्य किया था। कंधार की चढ़ाइयों में भी यह साथ गए थे। दारा आदि भाइयों के युद्ध में इन्होंने सब से बड़े दारा ही का साथ दिया और सामूगढ़ के युद्ध में सन् १६५७ ई० में मारे गए।

जगतसिंह—राजा मानसिंह के यह सब से बड़े पुत्र थे। सन् १५६६ ई० में यह बंगाल का सहकारी प्रांताध्यक्ष नियुक्त हुआ, पर आगरा से यात्रारंभ करने के पहिले ही जधानी ही में मर गया। यह योग्य सेनापति था और कई युद्धों में वीरता दिखला चुका था।

जवारि—नासिक जिले के पास सूरत से सौ मील दक्षिण में है। ५ जून सन् १६७२ ई० में शिवाजी ने इसे इसके कोली राजा विक्रमसाह से छीन लिया।

जयसिंह—जयपुर के राजा थे। सन् १६१७ ई० में बारह वर्ष की अवस्था में राजा हुए। यह बहुत ही योग्य थे। सन् १६६४ ई० में शिवाजी को दमन करने के लिए नियुक्त हुए। सन् १६६५ ई० में शिवाजी से संधि कर लिया। सन् १६६६ ई० में बीजापुर तक पहुँच कर लौटे और शिवा जी को आगरे भेजा। सन् १६६७ ई० में यह दक्षिण से राजधानी बुला लिए गए, पर मार्ग ही में २ जुलाई को इनकी मृत्यु हो गई।

जसवंतसिंह—जोधपुर-नरेश गजसिंह के द्वितीय पुत्र थे। सं० १६६४ में गद्दी पर बैठे। दारा तथा औरंगजेब के साथ दो बार कंधार की चढ़ाई पर गये। सं० १७१४ में धर्मत युद्ध में औरंगजेब से परास्त हुए जिसके बादशाह होने पर यह गुजरात के सूबेदार नियत हुए। सं० १७१६ में शायस्त खाँ के साथ दक्षिण गए। दो तीन वर्ष यहाँ रहने पर यह दिल्ली बुला लिए गए, पर सं० १७२४ में फिर दक्षिण भेजे गए। मुअज्जम को पिता के विरुद्ध उभाड़ने की शंका में यह फिर राजधानी बुला लिए गए और जमरूद के फौजदार नियुक्त हुए, जहाँ सं० १७३५ में इनकी मृत्यु हुई। यह सुकवि तथा कवियों के आश्रयदाता थे।

जावली—चंद्रराव मोरे वंश की यह राजधानी थी, जो कायना नदी की घाटी में महा-बलेश्वर के ठीक नीचे बसा है। अब यह एक छोटा सा गाँव है। यह सितारा जिले के उत्तर-पश्चिम कोने में है तथा पहाड़ी है और जंगल भी बहुत है। पश्चिम की ओर सह्याद्रि पर्वत माला है।

जोधपुर—मारवाड़ राज्य की राजधानी है। यह राज्य राजपुताना में अरावली के पश्चिम में है।

झारखंड—उड़ीसा प्रांत का वह भाग जो बंगाल की सीमा के पास है।

ढुंढार—जयपुर राज्य का यह भी एक नाम है ।

तहख्वर खाँ—यह मुगल दरबार का एक सदाँर था जो पञ्चानरेश महाराज कृष्णसाल के स्वातंत्र्य के लिए युद्ध आरंभ करने पर उन्हें दमन करने को भेजा गया था । यह प्रयत्न करने पर भी अंत में असफल होकर लौट गया ।

शिविकमपुर—तिकवाँपुर, देखो भूमिका ' कविपरिचय ' ।

दलेल महम्मद—यह दिलेर खाँ या दिलेर हिम्मत खाँ हो सकता है । प्रथम का परिचय अन्यत्र दिया हुआ है । दूसरा एक सेनाध्यक्ष था जो अमरसिंह आदि के साथ दक्षिण में युद्ध करने आया था । (औरंगजेब नामा हिंदी भा० २ पृ० ३०)

दाऊद खाँ यह सन् १६६४ ई० में दक्षिण में नियत हुआ । पुरंधर के घेरे में यह उपस्थित था और सेना के साथ शिवाजी के राज्य में लूट मार करने भेजा गया । इसके बाद यह खानदेश का सूबेदार नियत हुआ । यहीं से बादशाह के आज्ञानुसार मुअज्जम के सहायतार्थ सेना सहित दक्षिण गया । सन् १६७० ई० में यह घानी डिंडोरी युद्ध में मराठों से परास्त हुआ । इसके बाद अहमदनगर के पास मराठों को रोकने को भेजा गया । सन् १६७२ ई० में राजधानी चला गया ।

दारा—शाहजहाँ का सब से बड़ा पुत्र था । इसमें धार्मिक कट्टरता नहीं थी । इसके पिता ने इसे ही यौवराज्य दिया था, पर औरंगजेब ने राज्यवृष्णा में पड़कर इसे तीन युद्धों में परास्त कर इसे मरवा डाला और स्वयं पिता को कैद कर बादशाह बन बैठा ।

दिलेर खाँ—इसका नाम जलाल खाँ था और यह दाऊदज़ई अफगान था । इसका बड़ा भाई बहादुर खाँ रुहेला था । सन् १६६४ ई० में यह जयसिंह के साथ दक्षिण में नियत हुआ । पुरंधर और रुद्रमाल दुर्गों को घेर कर उसे विजय किया । सन् १६६७ ई०

में जयसिंह के लौट जाने तथा शाहजादा मुअज़्ज़म के सूबेदार होने पर यह उसके साथ नियत हुआ। यह कुछ दिन गोंड-घाना में लूट मार करता रहा। सन् १६७० ई० में शाहजादा से भेंट करने आया, पर शंका से दरबार नहीं गया और अपनी सेना के साथ उत्तर भागा। बहादुर खाँ की सहायता से औरंगजेब से इसे क्षमा प्राप्त हुई। इसी के साथ यह फिर सन् १६७१ ई० में दक्षिण गया। इसका मंसब पाँचहजारी था और यह दक्षिण ही में सन् १६८३ ई० में मर गया।

देवगिरि—इससे देवगढ़ से तात्पर्य ज्ञात होता है। यह रत्नागिरि जिले का एक भाग है। इसके उत्तर में राजापुर, पूर्व में कोल्हापुर राज्य, पश्चिम में अरब की खाड़ी और दक्षिण में सावंत वाड़ी है।

द्रविड़—कर्णाटक प्रांत का वह भाग जिसमें द्रविड़ जाति बसती है।

निज़ामशाह—अहमदनगर के सुलतानों की यह पदवी थी। इन की बहरी अर्थात् समुद्री भी उपाधि थी। बहमनी सम्राट् महमूदशाह के बजीर निज़ामुलमुल्क का पुत्र अहमद सन् १४६० ई० में अपने स्वामी की सेना को हाराकर स्वतंत्र बन बैठा। सन् १४६५ ई० में अहमदनगर की नींव डाली। सन् १६३३ ई० में शाहजहाँ के समय में इस राज्य का अंत हो गया और अंतिम निज़ामशाह हुसेन कारागार में मरा।

नैपाल—आगरा और अवध के संयुक्त प्रांत के उत्तर, कमायूँ कमिश्नरी के पूर्व, शिकिम के पश्चिम तथा तिब्बत के दक्षिण में स्थित यह एक राज्य है।

नौसेरी खाँ—शुद्धनाम नासिरी खाँ था। सन् १६५७ ई० में शिवाजी ने पहिली बार मुगल साम्राज्य में लूट मार आरम्भ किया, तब औरंगजेब ने इसे ३००० सेना सहित भेजा। इसने मराठा

सेना को परास्त किया । इसके बाद राव कर्ण के साथ पोंडा में नियत हुआ था ।

परनाला—कृष्णा नदी की दो सहायक वणी तथा हिरण्यकेशी नदियों के बीच में एक दुर्ग है ।

परेंदा—यह दुर्ग धरूर से ६० मील पश्चिम दक्षिण सीना नदी पर जोलापुर से अहमदनगर जाने वाली सड़क पर है ।

पलाऊ—शुद्ध नाम पलामऊ है । बिहार तथा छोटा नागपुर की सीमा पर एक ज़िला है । यह बिलकुल पहाड़ी है । यहाँ का राजा प्रतापराय चेहू था, जिसे जायस्त खाँ ने सन् १६४२ ई० में हराकर करद बनाया था । सन् १६६१ ई० में दाऊद खाँ ने इसे विजय कर खालसा कर लिया ।

पार—जावली के पास का एक ग्राम ।

पुर्तगाल—यूरोप के दक्षिण-पश्चिम आइबेरिया प्रायद्वीप में स्थित एक राज्य है । यह स्पेन के पश्चिम में है । यहाँ के निवासी-गण भारत में व्यापार करने आते थे ।

पूना—यह नगर बंबई प्रान्त में भीमा की एक सहायक नदी मूता-मूना पर स्थित है । बम्बई नगर से लगभग ६५ मील पूर्व दक्षिण हट कर है ।

फतेह खाँ—जंजीरा के सोदियों का एक सद्दार था । शिवाजी से लड़ाई में कई बार परास्त होने पर उनसे संधि की बातचीत कर रहा था कि इसके तीन सहकारियों ने विद्रोह कर इसे मार डाला और मुगल सम्राट् औरंगज़ेब से संधि कर उसके अधीनस्थ सद्दार बन गए । यह घटना सन् १६७४ ई० की थी ।

फ्रांस—यूरोप के पश्चिम ओर समुद्र के किनारे पर बसा हुआ एक देश है । यहाँ के निवासी फ्रेंच या फ्रांसीसी कहलाते हैं जो शिवाजी के समय भारत में आचुके थे ।

फिरंगान—फिरंगियों अर्थात् यूरोप निवासियों का निवास स्थान। एक सज्जन ने इसे मध्य एशिया का फरंगानः माना है पर वह ठीक नहीं ज्ञात होता।

बक्खर—सिंध नदी में एक टापू है, जिस पर दुर्ग बना हुआ है। यह बंबई के सिंध प्रान्त में है। इसी के सामने सक्कर है।

बब्बर—मुगल सम्राट् अकबर का पितामह था। इसी ने पानीपत के प्रथम युद्ध में इब्राहीम लोदी पर तथा कन्हवा युद्ध में महाराणा संग्रामसिंह पर विजय प्राप्त कर भारत में अपना राज्य स्थापित किया था। इसने अपना आत्मचरित लिखा है, जो वास्तव में एक सच्चे वीर तथा सहृदय पुरुष के योग्य है।

बलख—अफगानिस्तान के उत्तर तथा बुखारा के दक्षिण खीवा में स्थित एक शहर है जो वेंचु नदी के पास है। यह तैमूरलंग की राजधानी थी।

बहलोल—यह बीजापुर का प्रधान अमात्य था और इसका नाम अब्दुल्कादिर था। इसके दो पुत्र और एक भतीजा थे। शाह जी के साथ कर्णाटक में शांति स्थापित करने गया था। शिवाजी के विद्रोह पर ये दोनों बुलाए गए थे, पर यह बीमार होकर सं० १७२२ में मर गया। इसके अधीन बारह सहस्र पठान सेना थी।

बहलोल—सन् १६६१-२ ई० में घाड़ी के सावंत तथा मुघल के बाजी घोरपदे से मिलकर शिवाजी से युद्ध करने गया था, पर हार गया। सन् १६७३ ई० के आरम्भ में प्रतापराव गूजर ने हुवली लूटा पर उसके बाद बहलोल द्वारा परास्त हुए। बंकापुर में एक मराठी सेना को इसने परास्त किया। सन् १६७३ ई० के अंत में यह बारह सहस्र सेना के साथ शिवाजी का मार्ग रोकने के लिए गया, जो कनारा में लूट के लिए गए हुए थे। प्रतापराव गूजर ने इसे परास्त कर बीजापुर

लौटा दिया। नई सेना के साथ फिर लौटा, पर आनंदराव ने उसे फिर परास्त किया। इसके बाद हंबीरराव के साथ इसे परास्त कर इसकी सेना लूट ली। इसके बाद यह बीजापुर का प्रधान अमात्य हुआ। (११नव० सन् १६७५) इसका नाम अब्दुरहीम था।

बहादुर खाँ—यह पहिले गुजरात का सूबेदार था और इसने दिलेर खाँ की सहायता की थी। सन् १६७२ ई० में यह दिलेर खाँ के साथ दक्षिण में महाबत खाँ के स्थान पर भेजा गया। इसी के समय सल्हेर युद्ध में मुगल हारे और यह तथा मुल्हेर दुर्ग छिन गया। मराठे रामगिरि तक लूटते चले गए और बहादुर व्यर्थ ही वहाँ तक पीछा करता गया था। सन् १६७४ ई० में खैवरी पठानों के विद्रोह करने पर मुगल सेना का अच्छा भाग उत्तर लौट गया, जिससे दक्षिण में लड़ाई रुक गई।

बाजीराव—बाला जी विश्वनाथ के प्रथम पुत्र विसा जी का जन्म सं० १७५५ में हुआ था। यही बाजीराव के नाम से प्रसिद्ध हुए। दूसरे पुत्र चिमना जी आप्पा इनसे दस वर्ष छोटे थे। सं० १७७७ वि० में पिता की मृत्यु पर यह द्वितीय पेशवा हुए। सं० १७८४ वि० में यह ससैन्य निज़ाम के राज्य में से हाते गुजरात तक लूटते चले गए और लौट कर पालखेड़ के पास उसे परास्त किया। इसके बाद सं० १७८८ में शंभकराव धाबदे को परास्त किया। दो वर्ष बाद छत्रसाल की सहायता करते हुए मुहम्मद खाँ बंगश को परास्त किया। सं० १७९४ वि० में यह दिल्ली गए और उसे लूटा। सं० १७९७ वि० में इन्होंने हैदराबाद के निज़ाम नासिरजंग को फिर से पराजित किया, पर इसी वर्ष इनकी मृत्यु हो गई।

बाबर खाँ—मेरे विचार से यह बहादुर खाँ का बिगड़ा रूप है।

जब जरूर से जोर बन सकता है तो ऐसा हो जाना बिल्कुल संभव है। बहादुर खाँ देखिए।

बांधव—रीवाँ राज्य में एक प्राचीन दुर्ग है। राजा विक्रमाजीत के रीवाँ का राजधानी बनाने के पहिले यहाँ के राजा बांधव-नरेश ही कहलाते थे।

बीर—या बीड, अहमदनगर से ६८ मील ठीक पूर्व है। वर्तमान समय में यह हैदराबाद राज्य के अंतर्गत है।

बावनीगिरि—यह दक्षिणी कर्णाटक में एक स्थान है।

बिदनोर—यह तुंगभद्रा नदी के उद्गम स्थान के पास है। यह पहाड़ी राज्य है और कनाड़ी भाषा में इसे मालनद कहते हैं, जिससे फारसी इतिहासों में यहाँ का राजा मालनंद के राजा के नाम से लिखा गया है। अली आदिलशाह ने इस राज्य को विजय कर करद बनाया था। इस पराजय के एक वर्ष बाद यहाँ का राजा शिवप्पा मर गया और उसका पुत्र ब्राह्मणों द्वारा मारा गया। इसकी रानी चेनम्मा थी। तथा पुत्र सोमशेखर राजा हुआ। यह रानी तथा तिमैय्या राज्य का प्रबन्ध करते थे। अली ने फिर चढ़ाई की। सं० १७३२ वि० में शिवाजी को कर देना स्वीकार किया।

बिलायत—अर्थ देश है पर साधारणतः अन्य देशीय राजाओं के स्वदेश को कहते हैं। जैसे, मुसलमानों के राज्य के समय अफगानिस्तान, फारस आदि और वर्तमान समय में इंग्लैंड।

बीजापुर—यह कृष्णा तथा भीमा के बीच में एक प्रसिद्ध नगर है। यह बीजापुर राज्य की राजधानी थी। वर्तमान समय में यह बम्बई प्रांत के अंतर्गत है।

बीदर—यह नगर गोदावरी की सहायक नदी भानजेरा के किनारे पर कल्याण के ठीक पूर्व अठारह बीस कोस पर है। यहाँ दुर्ग भी है और यह बारीदशाही राज्य की राजधानी थी।

बीरबर—यह सम्राट् अकबर के अंतरंग मित्रों में से थे। इनका जन्म सं० १५८५ वि० में हुआ था। इनका नाम महेशदास था और यह ब्राह्मण थे। सन् १५७४ ई० में इन्हें राजा की पदवी मिली। सन् १५८६ ई० में अफगानिस्तान के युद्ध में यह मारे गए।

बुद्धसिंह—राव राजा, यह अनिरुद्धसिंह के पुत्र थे, जिनकी मृत्यु पर यह बूँदी के राजा हुए। जाजऊ के युद्ध में इन्होंने बहादुरशाह का साथ दिया था, जिसकी मृत्यु पर जहाँदारशाह बादशाह हुआ। सं० १७६६ वि० में इसके मरने के बाद फर्रुखसियर की रत्ना में इन्होंने दिल्ली ही में युद्ध किया था, पर उस बादशाह का इन पर विशेष विश्वास नहीं था, इससे यह अपने राज्य को चले गए। सवाई जयसिंह के यहाँ कुछ दिन यह अतिथि रहे, पर इन्होंने राज्यलिप्सा में पड़कर इन्हें अपना करद बनाने का प्रस्ताव किया और इनके अस्वीकार करने पर इन्हें कैद करना चाहा जिससे लड़भिड़ कर यह निकल गए, पर राज्य खो बैठे। इनके पुत्र उम्मेदसिंह ने इनकी मृत्यु पर अपना राज्य कौटानरेश की सहायता से पुनः प्राप्त किया था।

बुंदेल खंड—वह प्रांत जिसकी उत्तरी सीमा यमुना, पश्चिमी चंबल तथा दक्षिण पूर्वी सीमा नर्मदा नदी है। बुंदेलों के निवास के कारण इसका यह नामकरण हुआ।

बेतवा—बुंदेलखंड की एक नदी है जो यमुना में गिरती है। इसी के किनारे ओड़िशा नगर बसा है।

बंग—बंगाल प्रांत।

भगवंतसिंह—यह जयपुर-नरेश भारामल के पुत्र थे। इनकी सन् १५८६ ई० में मृत्यु हुई। मानसिंह इनके भाई के पुत्र थे। इनका दूसरा नाम भगवानदास भी था।

भड़ोच—यह नर्मदा नदी के उत्तर के तट पर स्थित है। यह सूरत से प्रायः चालीस मील उत्तर है।

भाऊसिंह—राव कुवसाल के पुत्र थे। सन् १६१७ ई० में गद्दी पर बैठे। इसके तीसरे वर्ष यह दक्षिण में नियुक्त हुए और ३० अप्रैल सन् १६६० ई० को मराठों को परास्त कर चाकण दुर्ग विजय किया। सिंहगढ़ घेरते समय यह भी जसवंतसिंह के साथ थे, पर उसमें ये लोग असफल रहे। सन् १६६७ ई० में यह औरंगाबाद के फौजदार नियुक्त हो कर वहीं सन् १६८७ ई० तक रहे जब उनकी मृत्यु हो गई।

भागनगर—गोलकुंडा का प्राचीन नाम जिसे वहाँ के सुल्तान ने अपनी एक प्रेयसी भागमती के नाम पर बसाया था।

भिलसा—मालवा प्रांत में भूपाल के पूर्व तथा उत्तर वेतवा नदी पर स्थित एक नगर है।

भूपण—देखा भूमिका।

मक्का—अरब प्रायःद्वीप के हेजाज़ प्रांत में एक नगर है, जो मुहम्मद का जन्म स्थान होने के कारण मुसलमानों का तीर्थ-स्थान है।

मधुरा—यह वैगाई नदी पर कर्णाटक के दक्षिणी भाग में एक नगर है।

महाबत खाँ—इसका पिता ज़माना बेग बिन गोरबेग काबुली था, जिसे महाबत खाँ की पदवी मिली थी। इसीने जहाँगीर को कैद किया था। इसकी मृत्यु के ८ वर्ष बाद इसके द्वितीय पुत्र लहरारूप को सन् १६३४ ई० में महाबत खाँ की पदवी मिली। दो बार काबुल का सूबेदार हुआ। सन् १६७० ई० के अंत में यह दक्षिण का प्रधान सेनापति नियुक्त हुआ। सन् १६७२ ई० के मध्य में आज्ञानुसार यह उत्तर लौट गया। सन् १६७४ ई० में इसकी मृत्यु हो गई।

महासिंह—महाराज मानसिंह के पुत्र जगतसिंह का यह पुत्र था। सन् १६१७ ई० में दो वर्ष राज्य करने पर अत्यंत मदिरा पान करने के कारण इसकी मृत्यु हुई। इसी के पुत्र मिर्जा राजा जयसिंह थे।

महेवा—बुंदेल खंड के छत्रपुर राज्यांतर्गत एक स्थान है, जो मऊ महेवा के नाम से प्रसिद्ध है। यह नौ गाँव छावनी से चार मील पूर्व है। यह पन्नानरेश छत्रसाल के पूर्वजों की राजधानी थी।

मारवाड़—जोधपुर राज्य। यह राजपुताने में अरावली पर्वत माला के पश्चिम में है। यहाँ के राजे राठौड़ हैं। शिवाजी के समकालीन यहाँ के राजा यशवंतसिंह थे।

माल मकरंद—शिवाजी के पितामह माली जी, देखिए भूमिका।

मालवा—मध्यदेश तथा राजपुताने के बीच में स्थित एक प्रांत जिसकी राजधानी उज्जैन थी। वर्तमान काल में इंदौर, ग्वालियर आदि कई राज्यों में यह प्रांत बँटा हुआ है।

मीर सहबाल—इस नाम का ठीक पता नहीं मिला और न यह शुद्ध नाम ही ज्ञात होता है। फारसी शहबाला शब्द हो सकता है, जिसका अर्थ ऊपरी बादशाह या बड़ा शाह है।

मुराद—शाहजहाँ का सब से छोटा पुत्र था। पिता के विरुद्ध युद्ध करने में उसने औरंगजेब का साथ दिया था। पर अंत में उसने इसे कैद कर दिया जहाँ इसकी कुछ दिन बाद विष से मृत्यु हो गई।

मुलतान—यह पंजाब प्रांत में चिनाव नदी के किनारे एक नगर तथा जिला है।

मेवाड़—राजस्थान में अरावली पर्वत के पूर्व में एक राज्य है, जिसकी राजधानी उदयपुर है। यहाँ का सिसौदिया राजवंश

बहुत प्राचीन है। शिवाजी के समय महाराणा राजसिंह यहाँ के नरेश थे।

मोहकमसिंह—रामपुरा के जागीरदार अमरसिंह चंद्रावत का पुत्र था। सन् १६७२ ई० के आरंभ में सल्हेर युद्ध में इसके पिता मारे गये और यह कैद हुआ। कुछ दिन बाद छूटने पर अहमदनगर लौट गया और बहादुर खाँ कोका की सहायता से इसे राव की पदवी मिली। सन् १६६० ई० के लगभग इसकी मृत्यु हुई। इसके पुत्र का नाम गोपालसिंह था।

मोरंग—कूच बिहार के पश्चिम तथा पुर्णिया के उत्तर का एक राज्य। इस नाम की एक प्राचीन जाति के बसने से इस स्थान का यह नामकरण हुआ था। यहीं एक जाली शुजाअ पैदा हुआ था, यह राज्य सन् १६६४ ई० में तथा सन् १६७६ ई० में दो बार विजय किया गया था।

रतनाकर—भूषण के पिता का नाम।

रनदुलह खाँ—देखो रुस्तमजमाँ।

राजगढ़—सन् १६४६ ई० में शिवाजी ने तोरणा दुर्ग से छु मील दूरी कर मोरबद पहाड़ी पर एक दुर्ग बनवाया। इसको बनाने वाले का नाम मोरो पिंगले था। इसी दुर्ग का नाम राजगढ़ हुआ। यह नीरा नदी के तट पर है और रायगढ़ के पास ही है।

रामगिरि—निज़ाम हैदराबाद के राज्य के यलगंदल प्रांत में गोदावरी नदी के पास है। यह १८-३५ उ० ७६-३५ पू० अक्षांश पर है। मराठों ने सन् १६७२ ई० में इसे लूटा था।

रामनगर—यह सूरत से केवल साठ मील दक्षिण है। यह भी कोली राज्य था। इस राज्य की नई राजधानी अब धर्मपुर है, जो रामनगर से १३ कोस दक्षिण-पश्चिम है। सन् १६७२ ई० के जूलाई में इस पर मराठों का अधिकार हो गया।

रामसिंह—मिर्जा राजा जयसिंह के पुत्र थे। मिर्जा राजा के दक्षिण में नियुक्त होने पर यह इनके प्रतिनिधि स्वरूप दरबार में रहे। सन् १६६७ ई० में पिता की मृत्यु पर राजा हुए। उसी वर्ष यह आसाम में नियुक्त हुए, जहाँ से नौ वर्ष के अनन्तर लौटने पर इनकी सन् १६७६ ई० में मृत्यु हुई।

रायगढ़—पश्चिमी घाट के एक शृंग पर बना हुआ दुर्ग, जिसे पहले रैरी कहते थे। शाह जी की सम्मति से सन् १६६२ ई० में शिवाजी की आज्ञा से अंबा जी सोनदेव ने यह दुर्ग बनाया। इसके बाद यह राजधानी हुई। यह महाबालेश्वर से दक्षिण कुछ हट कर है।

रुद्रसाह—देखो भूमिका।

रुस्तमज़मौ—इसकी पहिले रणदुलह खाँ उपाधि थी। यह बीजापुर की ओर से उस राज्य के दक्षिण-पच्छिम भाग का सूबेदार था। मीराज में रहता था। स० १७१७ में इसने अफ़ज़ल खाँ के लड़के फ़ज़ल के साथ शिवाजी से युद्ध किया था। इसने शिवाजी से मित्रता कर ली थी। इसीकी सहायता से स० १७२० में नेता जी पालकर बच कर निकल गए थे। इस मित्रता के कारण उसी वर्ष इसकी सूबेदारी छिन गई, पर दूसरे वर्ष फिर उसी पद पर बहाल हो गया। स० १७२३ ई० में पन्हाला के पास समय पर डंका बजा कर इसने शिवाजी को शत्रु-सेना के आने की सूचना दी थी। इसके अनन्तर इसने अपने स्वामी को प्रसन्न करने के लिए पोंडा के सामने पड़ी हुई मराठी सेना को धोखा देकर नष्ट करा डाला, जिससे यह मित्रता टूट गई। इसके अनन्तर इसने अपने सुलतान के विरुद्ध बलवा किया, जिसमें इसकी सब जागीर छिन गई। इसीके आस पास इसकी मृत्यु हुई और

इसका पुत्र रुस्तमजमाँ द्वितीय के नाम से प्रसिद्ध हुआ। इसने शिवाजी से मैत्री नहीं रखी।

रुहिलान—अफगानिस्तान के रुह प्रांत से आए हुए पठान गण, जिनके बसने से रुहेल खंड कमिशनरी का नामकरण हुआ है।

रुम—एशियाई तुर्की को रुम कहते हैं। इटली की राजधानी का नाम भी रोम है।

रूसियान—यूरोप के उत्तर पश्चिम के बड़े राज्य रूस के निवासी-गण। इसी राज्य का एशिया के उत्तर के विशाल प्रांत साई-बीरिया पर अधिकार है।

रेवा—नर्मदा नदी ही को रेवा कहते हैं।

लोहगढ़—जुनेर के दक्षिण में इन्द्रायणी की घाटी के पश्चिम ओर पहाड़ पर यह दुर्ग है। इसी के पास तिकोना दुर्ग भी है।

शाहस्ता खाँ—इसका असली नाम अबूनालिव मिर्जा मुराद था। यह शाहजहाँ के प्रधान मंत्री आसफ खाँ का पुत्र तथा मुमताज महल बेगम का भाई था। यह दारा आदि भाइयों का मामा था। सन् १६४१ ई० में वजीर नियत हुआ। सन् १६५६ ई० में यह दक्षिण का सूबेदार नियुक्त हुआ। सन् १६६० ई० में पूना तथा बाकल दुर्ग विजय हुआ। सन् १६६३ ई० में शिवाजी रात्रि में थोड़े आदमी लेकर पूना गए और जहाँ शायस्ता खाँ सोया हुआ था वहाँ पहुँच कर उसके पुत्र तथा कई साथियों को मारते हुए निकल गए। शायस्ता खाँ पेसा डर गया कि वह तुरंत औरंगाबाद चला गया और वहाँ से बंगाल की सूबेदारी पर भेज दिया गया। सन् १६६४ ई० की ३१ मई को ६३ वर्ष की अवस्था में इसकी मृत्यु हुई।

शाहजहाँ—अकबर का पौत्र तथा जहाँगीर का पुत्र था। सन् १६२७ ई० में गद्दी पर बैठा। अपनी शाहज़ादगी में इसने कई बार दक्षिण के सुलतानों को परास्त किया था। पिता के

विरुद्ध विद्रोह किया। सन् १६५६ ई० में इसके पुत्रों ने इसके अधिक रोगग्रस्त होने पर राज्य के लिए युद्ध किया, जिसमें औरंगजेब विजयी होकर बादशाह हुआ। सन् १६६६ ई० में यह मरा।

शाह जी—यह शिवाजी के पिता और अहमदनगर के जागीरदार थे, जिस राज्य का अंत होने पर यह बीजापुर राज्य के एक सदाँर बन गए। विशेष भूमिका देखिए।

शिवाजी—देखिए भूमिका।

शुजाअ—शाहजहाँ का द्वितीय पुत्र था। यह बंगाल का प्रांताध्यक्ष था, यह शाहजहाँ की बीमारी का वृत्तान्त सुन कर ससैन्य राज्य के लिए युद्ध करने आया। औरंगजेब से परास्त होने पर यह अराकान भाग गया, जिसके बाद का उसका कुछ सत्य वृत्तान्त नहीं मिला।

शंभा जी—देखो भूमिका।

सक्कर—सिंध प्रांत में सिंध नदी के किनारे एक नगर है जो शिकारपुर के पास पूर्व की ओर है। इसी के दूसरी ओर भक्कर है।

सफजंग—(फा० सैफ जंग = युद्ध की तलवार) यह उपाधि हो सकती है जैसे सैफ खाँ, सेफुद्दौला आदि हैं। इस उपाधि के कई मंसबदार दक्षिण के युद्ध में औरंगजेब द्वारा भेजे गए थे।

समद खाँ—पूरा नाम सेफुद्दौला नवाब अब्दुस्समद खाँ दिलेर जंग था। इसने सिखाँ के युद्ध में बड़ी वीरता दिखाई थी। कसूर के एक विद्रोही अफगान हुसेन खाँ को परास्त कर मार डाला था। इसने बुन्देलखंड पर भी चढ़ाई की थी, पर वहाँ सफल-प्रयत्न नहीं हो सका। त्रुप्रकाश में इस चढ़ाई का वर्णन है।

सलहेरि—बगलाना प्रांत में एक दुर्ग तथा कस्बा है। यह पश्चिमी घाट पहाड़ के नीचे है। समुद्र तट तथा धूलिया नामक प्रसिद्ध नगर के बीच में है।

साम—अंग्रेजी में इसे सोरिया प्रांत कहते हैं। मध्यसागर के पूर्वीय तट तथा अरब के बीच में है।

साहि—देखो शाह जी।

साहू—देखो भूमिका।

सितारा—कृष्णा नदी के तट पर पश्चिमी घाट के नीचे बसा है।

सन् १८४९ ई० में यह राज्य ब्रिटिश भारत में मिला लिया गया। यह शिवाजी के वंशधरों का राज्य था।

सिरीनगर—काश्मीर की राजधानी। मध्य प्रदेश में भी एक नगर इस नाम का है। भूपण का इसी दूसरे ही से तात्पर्य ज्ञात होता है क्योंकि उनके समय में काश्मीर साम्राज्य का एक प्रांत मात्र था।

सिलहट—आसाम प्रांत की सरमा घाटी में एक नगर है। इस प्रांत का यह सब से बड़ा शहर है।

सिंगारपुर—यह नीरा नदी के दक्षिण सितारा से लगभग पच्चीस कोस पूर्व है। सितारा तथा शालापुर के बीच में पड़ता है।

सिंहगढ़—इसका प्राचीन नाम कांदाना था। यह पूना के पास उसके दक्षिण में है। शिवाजी ने इस दुर्ग को ठीक कर सिंहगढ़ नाम रखा था।

सिंहल—हिंदुस्तान के दक्षिण का सिंहल टापू जिसे सीलोन भी कहते हैं।

सुजानसिंह बुन्देला—राजा, सन् १६५४ ई० में पिता पहाड़सिंह की मृत्यु पर ओड़िशा का राजा हुआ। सन् १६६४ ई० में जयसिंह के साथ नियत हुआ। पुरंधर दुर्ग के घेरे में अच्छी वीरता दिखलाई। आंतर में मराठी सेना को हराया। सन् १६६२

ई० में चाँदा पर दिलेर खाँ के साथ नियत हुआ । सन् १६७१ ई० इसकी मृत्यु हुई ।

सूरत—ताप्ती नदी के बाएँ तट पर बसा हुआ व्यापारी नगर जो समुद्र के पास ही है । मुगलों के समय विशेषतः यहीं से अरब आदि स्थानों को यात्रीगण जाते थे ।

सैद अफगन—एक मुगल सद्दार्, जो बुन्देलखंड में ससैन्य महाराज छत्रसाल को दमन करने भेजा गया था । छत्रप्रकाश में इसका उल्लेख है ।

हवसान—हवशियों का निवास-स्थान, हवश देश जो अफ्रीका महाद्वीप में है । आज कल के नक्शों में वह ऐबिसीनिया नाम से लिखा जाता है ।

हुमायूँ—मुगल सम्राट् अकबर के पिता थे । बाबर की मृत्यु पर उसके संस्थापित राज्य के यही अधिकारी हुए, पर कुछ ही दिनों में उसे खोकर फारस भागे । वहाँ से लौट कर यह फिर भारत आए और दिल्ली पर अधिकार कर लिया । यह सन् १५५६ ई० में मर गए ।

हृदयराम—भूपण के आश्रयदाता रुद्रराम के पिता का नाम था । देखिए रुद्रराम ।

